रचना संसार

आधुनिक काल की प्रमुख पुस्तकों का परिचय

Rachna Sansar: Introduction to Major Books of Modern Period

पंकज श्रीवास्तव

रचना संसार : आधुनिक काल की प्रमुख पुस्तकों का परिचय

रचना संसार : आधुनिक काल की प्रमुख पुस्तकों का परिचय

(Rachna Sansar: Introduction to Major Books of Modern Period)

पंकज श्रीवास्तव

भाषा प्रकाशन
नई दिल्ली - 110002

© प्रकाशक

I.S.B.N. : 978-81-323-6111-4

प्रथम संस्करण : 2021

भाषा प्रकाशन

22, प्रकाशदीप बिल्डिंग, अंसारी रोड,
दरियागंज, नई दिल्ली - 110002

द्वारा वर्ल्ड टेक्नोलॉजीज नई दिल्ली के सहयोग से प्रकाशित

प्रस्तावना

भारत में अनेक यूरोपीय जातियां व्यापार के लिए आईं। उनके संपर्क से यहां पाश्चात्य सभ्यता का प्रभाव पड़ना प्रारंभ हुआ। विदेशियों ने यहां के देशी राजाओं की पारस्परिक फूट से लाभ उठाकर अपने पैर जमाने में सफलता प्राप्त की जिसके परिणामस्वरूप यहां पर ब्रिटिश साम्राज्य की स्थापना हुई। अंग्रेजों ने यहां अपने शासन कार्य को सुचारू रूप से चलाने एवं अपने धर्म-प्रचार के लिए जन-साधारण की भाषा को अपनाया। इस कार्य के लिए गद्य ही अधिक उपयुक्त होती है। इस कारण आधुनिक युग की मुख्य विशेषता गद्य की प्रधानता रही। इस काल में होने वाले मुद्रण कला के आविष्कार ने भाषा-विकास में महान योगदान दिया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी आर्य समाज के ग्रंथों की रचना राष्ट्रभाषा हिंदी में की और अंग्रेज मिशनरियों ने भी अपनी प्रचार पुस्तकें हिंदी गद्य में ही छपवाई। इस तरह विभिन्न मतों के प्रचार कार्य से भी हिंदी गद्य का समुचित विकास हुआ।

इस काल के आरंभ में राजा लक्ष्मण सिंह, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, जगन्नाथ दास रत्नाकर, श्रीधर पाठक, रामचंद्र शुक्ल आदि ने ब्रजभाषा में काव्य रचना की। इनके उपरांत भारतेंदु जी ने गद्य का समुचित विकास किया और आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने इसी गद्य को प्रांजल रूप प्रदान किया। इसकी सत्प्रेरणाओं से अन्य लेखकों और कवियों ने भी अनेक भांति की काव्य रचना की। इनमें मैथिलीशरण गुप्त, रामचरित उपाध्याय, नाथूराम शर्मा शंकर, ला. भगवान दीन,

रामनरेश त्रिपाठी, जयशंकर प्रसाद, गोपाल शरण सिंह, माखन लाल चतुर्वेदी, अनूप शर्मा, रामकुमार वर्मा, श्याम नारायण पांडेय, दिनकर, सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा आदि का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रभाव से हिंदी-काव्य में भी स्वच्छंद (अतुकांत) छंदों का प्रचलन हुआ।

पुस्तक लेखन में कई लिखित व अलिखित स्रोतों से मदद ली गई है; मैं उन सभी विज्ञ लेखकों के प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ। आशा करता हूँ कि पुस्तक पाठकों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

–लेखक

अनुक्रम

	प्रस्तावना	*v*
1.	**भारतेन्दु हरिश्चंद्र की पुस्तकें**	**1**
	जीवनपरिचय	2
	अंधेर नगरी	4
	समर्पण	9
2.	**प्रेमचंद की पुस्तकें**	**55**
	जीवनपरिचय	56
	साहित्यिक जीवन	57
3.	**जयशंकर प्रसाद की पुस्तकें**	**76**
	जीवनी	77
	अजातशत्रु	80
4.	**महादेवी वर्मा की पुस्तकें**	**92**
	जन्म और परिवार	93
	शिक्षा	94
5.	**सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला**	**97**
	जीवनपरिचय	97
	कार्यक्षेत्र	98
	अणिमा	99

6. रूसो की पुस्तकें **101**
मुख्य रचनाएँ 102
7. कार्ल मार्क्स की पुस्तकें **106**
कोलकाता, भारत 107
8. विलियम शेक्सपियर की पुस्तकें **112**
विलियम शेक्सपियर सिग्नेचर एसवीजी 112
प्रारंभिक जीवन 113
कविता 124
9. आर के नारायण की पुस्तकें **155**
जीवन-परिचय 155
प्रकाशित पुस्तकें 157
10.आचार्य रामचंद्र शुक्ल की पुस्तकें **159**
11. अनीता देसाई की पुस्तकें **170**
प्रारंभिक जीवन एवं शिक्षा 170
अंतर्वस्तु 172
पृष्ठभूमि 174
ऐतिहासिक सेटिंग 174
प्रतीकवाद और रूपांकन 175
किशोरावस्था 181
12. रबीन्द्रनाथ ठाकुर की पुस्तकें **183**
जीवनपरिचय 183

1

भारतेन्दु हरिश्चंद्र की पुस्तकें

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (9 सितंबर 1850–6 जनवरी 1885) आधुनिक हिंदी साहित्य के पितामह कहे जाते हैं। वे हिन्दी में आधुनिकता के पहले रचनाकार थे। इनका मूल नाम 'हरिश्चन्द्र' था, 'भारतेन्दु' उनकी उपाधि थी। उनका कार्यकाल युग की सन्धि पर खड़ा है। उन्होंने रीतिकाल की विकृत सामन्ती संस्कृति की पोषक वृत्तियों को छोड़कर स्वस्थ परम्परा की भूमि का अपनाई और नवीनता के बीज बोए। हिन्दी साहित्य में आधुनिक काल का प्रारम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र से माना जाता है। भारतीय नवजागरण के अग्रदूत के रूप में प्रसिद्ध भारतेन्दु जी ने देश की गरीबी, पराधीनता, शासकों के अमानवीय शोषण का चित्रण को ही अपने साहित्य का लक्ष्य बनाया। हिन्दी को राष्ट्र-भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने की दिशा में उन्होंने अपनी प्रतिभा का उपयोग किया।

भारतेन्दु बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। हिंदी पत्रकारिता, नाटक और काव्य के क्षेत्र में उनका बहुमूल्य योगदान रहा। हिंदी में नाटकों का प्रारम्भ भारतेन्दु हरिश्चंद्र से माना जाता है। भारतेन्दु के नाटक लिखने की शुरुआत बंगला के विद्यासुन्दर (1867) नाटक के अनुवाद से होती है। यद्यपि नाटक उनके पहले भी लिखे जाते रहे किन्तु नियमित रूप से खड़ीबोली में अनेक नाटक लिखकर भारतेन्दु ने ही हिंदी नाटक की नींव को सुदृढ़ बनाया। उन्होंने 'हरिश्चंद्र चन्द्रिका', 'कविवचनसुधा' और 'बाला बोधिनी' पत्रिकाओं का संपादन भी

किया। वे एक उत्कृष्ट कवि, सशक्त व्यंग्यकार, सफल नाटककार, जागरूक पत्रकार तथा ओजस्वी गद्यकार थे। इसके अलावा वे लेखक, कवि, संपादक, निबंधकार, एवं कुशल वक्ता भी थे। भारतेन्दु जी ने मात्र चौंतीस वर्ष की अल्पायु में ही विशाल साहित्य की रचना की। उन्होंने मात्रा और गुणवत्ता की दृष्टि से इतना लिखा और इतनी दिशाओं में काम किया कि उनका समूचा रचनाकर्म पथदर्शक बन गया।

जीवन-परिचय

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जन्म 9 सितम्बर, 1850 को काशी के एक प्रतिष्ठित वैश्य परिवार में हुआ। उनके पिता गोपालचंद्र एक अच्छे कवि थे और 'गिरधरदास' उपनाम से कविता लिखा करते थे। 1857 में प्रथम भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के समय उनकी आयु 7 वर्ष की होगी। ये दिन उनकी आँख खुलने के थे। भारतेन्दु का कृतित्त्व साक्ष्य है कि उनकी आँखें एक बार खुलीं तो बन्द नहीं हुईं। उनके पूर्वज अंग्रेज-भक्त थे, उनकी ही कृपा से धनवान हुये थे। हरिश्चंद्र पाँच वर्ष के थे तो माता की मृत्यु और दस वर्ष के थे तो पिता की मृत्यु हो गयी। इस प्रकार बचपन में ही माता-पिता के सुख से वंचित हो गये। विमाता ने खूब सताया। बचपन का सुख नहीं मिला। शिक्षा की व्यवस्था प्रथापालन के लिए होती रही। संवेदनशील व्यक्ति के नाते उनमें स्वतन्त्र रूप से देखने-सोचने-समझने की आदत का विकास होने लगा। पढ़ाई की विषय-वस्तु और पद्धति से उनका मन उखड़ता रहा। क्वींस कॉलेज, बनारस में प्रवेश लिया, तीन-चार वर्षों तक कॉलेज आते-जाते रहे पर यहाँ से मन बार-बार भागता रहा। स्मरण शक्ति तीव्र थी, ग्रहण क्षमता अद्‌भुत। इसलिए परीक्षाओं में उत्तीर्ण होते रहे। बनारस में उन दिनों अंग्रेजी पढ़े-लिखे और प्रसिद्ध लेखक - राजा शिवप्रसाद 'सितारेहिन्द' थे, भारतेन्दु शिष्य भाव से उनके यहाँ जाते। उन्हीं से अंग्रेजी सीखी। भारतेन्दु ने स्वाध्याय से संस्कृत, मराठी, बंगला, गुजराती, पंजाबी, उर्दू भाषाएँ सीख लीं।

उनको काव्य-प्रतिभा अपने पिता से विरासत के रूप में मिली थी। उन्होंने पांच वर्ष की अवस्था में ही निम्नलिखित दोहा बनाकर अपने पिता को सुनाया और सुकवि होने का आशीर्वाद प्राप्त किया-

लै ब्योढ़ा ठाढ़े भए श्री अनिरुद्ध सुजान।

बाणासुर की सेन को हनन लगे भगवान्

धन के अत्यधिक व्यय से भारतेंदु जी ऋणी बन गए और दुश्चिंताओं के कारण उनका शरीर शिथिल होता गया। परिणाम स्वरूप 1885 में अल्पायु में ही मृत्यु ने उन्हें ग्रस लिया।

साहित्यिक परिचय

भारतेन्दु के वृहत साहित्यिक योगदान के कारण ही 1857 से 1900 तक के काल को भारतेन्दु युग के नाम से जाना जाता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल के अनुसार,

भारतेन्दु अपनी सर्वतोमुखी प्रतिभा के बल से एक ओर तो पद्माकर, द्विजदेव की परम्परा में दिखाई पड़ते थे, तो दूसरी ओर बंग देश के माइकेल और हेमचन्द्र की श्रेणी में। प्राचीन और नवीन का सुन्दर सामंजस्य भारतेन्दु की कला का विशेष माधुर्य है।

पंद्रह वर्ष की अवस्था से ही भारतेन्दु ने साहित्य सेवा प्रारम्भ कर दी थी। अठारह वर्ष की अवस्था में उन्होंने 'कविवचनसुधा' नामक पत्रिका निकाली, जिसमें उस समय के बड़े-बड़े विद्वानों की रचनाएं छपती थीं। वे बीस वर्ष की अवस्था में ऑनरेरी मैजिस्ट्रेट बनाए गए और आधुनिक हिन्दी साहित्य के जनक के रूप में प्रतिष्ठित हुए। उन्होंने 1868 में 'कविवचनसुधा', 1873 में 'हरिश्चन्द्र मैगजीन' और 1874 में स्त्री शिक्षा के लिए 'बाला बोधिनी' नामक पत्रिकाएँ निकालीं। साथ ही उनके समांतर साहित्यिक संस्थाएँ भी खड़ी कीं। वैष्णव भक्ति के प्रचार के लिए उन्होंने 'तदीय समाज' की स्थापना की थी। राजभक्ति प्रकट करते हुए भी, अपनी देशभक्ति की भावना के कारण उन्हें अंग्रेजी हुकूमत का कोपभाजन बनना पड़ा। उनकी लोकप्रियता से प्रभावित होकर काशी के विद्वानों ने 1880 में उन्हें 'भारतेंदु' (भारत का चंद्रमा) की उपाधि प्रदान की। हिन्दी साहित्य को भारतेन्दु की देन भाषा तथा साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में है। भाषा के क्षेत्र में उन्होंने खड़ी बोली के उस रूप को प्रतिष्ठित किया जो उर्दू से भिन्न है और हिन्दी क्षेत्र की बोलियों का रस लेकर संवर्धित हुआ है। इसी भाषा में उन्होंने अपने सम्पूर्ण गद्य साहित्य की रचना की। साहित्य सेवा के साथ-साथ भारतेंदु जी की समाज-सेवा भी चलती रही। उन्होंने कई संस्थाओं की स्थापना में अपना योग दिया। दीन-दुखियों, साहित्यिकों तथा मित्रों की सहायता करना वे अपना कर्तव्य समझते थे।

अंधेर नगरी

अंधेर नगरी प्रसिद्ध हिंदी साहित्यकार भारतेंदु हरिश्चंद्र का सर्वाधिक लोकप्रिय नाटक है। 6अंकों के इस नाटक में विवेकहीन और निरंकुश शासन व्यवस्था पर करारा व्यंग्य करते हुए उसे अपने ही कर्मों द्वारा नष्ट होते दिखाया गया है। भारतेंदु ने इसकी रचना बनारस के हिंदू नेशनल थियेटर के लिए एक ही दिन में की थी।

कथानक

यह नाटक 6 अंकों में विभक्त है। इसमें अंक के बजाय दृश्य शब्द का प्रयोग किया गया है। पहले दृश्य में महंत अपने दो चेलों के साथ दिखाई पड़ते हैं, जो अपने शिष्यों गोवर्धन दास और नारायण दास को पास के शहर में भिक्षा माँगने भेजते हैं। वे गोवर्धन दास को लोभ के बुरे परिणाम के प्रति सचेत करते हैं। दूसरे दृश्य में शहर के बाजार का दृश्य है जहाँ सबकुछ टके सेर बिक रहा है। गोवर्धन दास बाजार की यह कैफियत देखकर आनन्दित होता है और सात पैसे में ढाई सेर मिठाई लेकर अपने गुरु के पास लौट जाता है। तीसरे दृश्य में महंत के पास दोनों शिष्य लौटते हैं। नारायण दास कुछ नहीं लाता है जबकि गोवर्धन दास ढाई सेर मिठाई लेकर आता है। महंत शहर में गुणी और अवगुणी को एक ही भाव मिलने की खबर सुनकर सचेत हो जाते हैं और अपने शिष्यों को तुरंत ही शहर छोड़ने को कहते हैं। वे कहते हैं- 'सेत सेत सब एक से, जहाँ कपूर कपास। ऐसे देश कुदेस में, कबहूँ न कीजै बास। ।' नारायण दास उनकी बात मान लेता है जबकि गोवर्धन दास सस्ते स्वादिष्ट भोजन के लालच में वहीं रह जाने का फैसला करता है। चौथे दृश्य में अंधेर नगरी के चौपट राजा के दरबार और न्याय का चित्रण है। शराब में डूबा राजा फरियादी के बकरी दबने की शिकायत पर बनिया से शुरु होकर कारीगर, चूनेवाले, भिश्ती, कसाई और गड़रिया से होते हुए कोतवाल तक जा पहुँचता है और उसे फांसी की सजा सुना देता है। पाँचवें दृश्य में मिठाई खाते और प्रसन्न होते मोटे हो गए गोवर्धन दास को चार सिपाही पकड़कर फांसी देने के लिए ले जाते हैं। वे उसे बताते हैं कि बकरी मरी इसलिए न्याय की खातिर किसी को तो फाँसी पर जरूर चढ़ाया जाना चाहिए। जब दुबले कोतवाल के गले से फांसी का फँदा बड़ा निकला तो राजा ने किसी मोटे को फाँसी देने का हुक्म दे दिया। छठे दृश्य में शमशान में गोवर्धन

दास को फाँसी देने की तैयारी पूरी हो गयी है। तभी उसके गुरु महंत जी आकर उसके कान में कुछ मंत्र देते हैं। इसके बाद गुरु शिष्य दोनों फाँसी पर चढ़ने की उतावली दिखाते हैं। राजा यह सुनकर कि इस शुभ सइयत में फाँसी चढ़ने वाला सीधा बैकुंठ जाएगा स्वयं को ही फाँसी पर चढ़ाने की आज्ञा देता है। इस तरह अन्यायी और मूर्ख राजा स्वत: ही नष्ट हो जाता है।

पात्र

महन्त – एक साधू
गोवर्धन दास – महंत का लोभी शिष्य
नारायण दास– महंत का दूसरा शिष्य
कबाबवाला – कबाब विक्रेता
घासीराम – रूचना बेचने वाला
नरंगीवाली – नारंगी बेचने वाली
हलवाई – मिठाई बेचने वाला
कुजड़िन – सब्जी बेचने वाली
मुगल – मेवे और फल बेचने वाला
पाचकवाला – चूरन विक्रेता
मछलीवाली – मछली बेचने वाला
जातवाला – जाति बेचने वाला
बनिया
राजा – चौपट राजा
मन्त्री – चौपट राजा का मंत्री
माली
दो नौकर, राजा के दो नौकर
फरियादी – राजा से न्याय माँगने वाला
कल्लू – बनिया जिसके दीवार से फरियादी की बकरी मरी
कारीगर – कल्लू बनिया की दीबार बनाने वाला
चूनेवाला – दीवार बनाने के लिए मसाला तैयार करने वाला
भिश्ती – दीवार बनाने के मसाले में पानी डालने वाला
कस्साई – भिश्ती के लिए मशक बनाने वाला

गड़ेरिया – कसाई को भेंड़ बेचने वाला
कोतवाल –
चार सिपाही – राजा के सिपाही

सत्य हरिश्चन्द्र

एक रूपक चार खेलों में

चन्द्रावली इत्यादि नाटकों में कवि श्री हरिश्चन्द्र लिखित श्रीयुत् बाबू बालेश्वरप्रसाद बी. ए. की आज्ञानुसार काशी पत्रिका नामक पाक्षिक हिन्दी पत्र से संगृहीत होकर बनारस निउ मेडिकल हाल प्रेस में छापा गया सन् 1876 ई. में।

उपक्रम

मेरे मित्र बाबू बालेश्वरप्रसाद बी.ए. ने मुझ से कहा कि आप कोई ऐसा नाटक भी लिखें जो लड़कों को पढ़ाने के योग्य हो क्योंकि शृंगार रस के आपने जो नाटक लिखे हैं वे बड़े लोगों के पढ़ने के हैं लड़कों को उनसे कोई लाभ नहीं। उन्हीं की इच्छानुसार मैने यह सत्य हरिश्चन्द्र नामक रूपक लिखा है। इस में सूर्य कुल सम्भूत राजा हरिश्चन्द्र की कथा है। राजा हरिश्चन्द्र सूर्य वंश का अट्टाइसवाँ राजा रामचन्द्र के 35 पीढ़ी पहले राजा त्रिशंकु का पुत्र था। इसने शौभपुर नामक एक नगर बसाया था और बड़ा ही दानी था। इसकी कथा शास्त्रों में बहुत प्रसिद्ध है और संस्कृत में राजा महिपाल देव के समय में आर्य्य क्षेमीश्वर कवि ने चंडकौशिक नामक नाटक इन्हीं हरिश्चन्द्र के चरित्र में बनाया है। अनुमान होता है कि इस नाटक को बने चार सौ बरस से ऊपर हुए क्योंकि विश्वरनाथ कविराज ने अपने साहित्य ग्रंथ में इसका नाम लिखा है। कौशिक विश्वामित्र का नाम है। हरिश्चन्द्र और विश्वामित्र दोनों शब्द व्याकरण की रीति से स्वयं सिद्ध हैं। विश्वामित्र कान्य कुब्ज का क्षत्रिय राजा था। वह एक बार संयोग से वशिष्ठ के आश्रम में गया और जब बशिष्ठ ने सैन समेत उसकी जाफत अपनी शबला नाम की कामधेनु गऊ के प्रताप से बड़े धूमधाम से की तो विश्वामित्र ने वह कामधेनु लेनी चाही। जब हजारों हाथी, घोड़े और गऊ के बदले भी वशिष्ठ ने गऊ न दी तो विश्वामित्र ने गऊ छीन लेनी चाही। वशिष्ठ की आज्ञा से कामधेनु ने विश्वामित्र की सब सेना का नाश कर दिया और विश्वामित्र

के सौ पुत्र भी वशिष्ठ ने शाप से जला दिए। विश्वामित्र इस पराजय से उदास होकर तप करने लगे और महादेव जी से वरदान में सब अस्त्र पाकर फिर वशिष्ठ से लड़ने आए। वशिष्ठ ने मंत्र के बल से एक ऐसे ब्रह्म दंड खड़ा कर दिया कि विश्वामित्र के सब अस्त्र निष्फल हुए। हार कर विश्वामित्र ने सोचा कि अब तप कर के ब्राह्मण होना चाहिए और तप कर के अंत में ब्राह्मण और ब्रह्मर्षि हो गए। यह वाल्मीकीय रामायण के अयोध्या कांड के 52 से 60 सर्ग तक सविस्तार वर्णित हैं।

जब हरिश्चन्द्र के पिता त्रिशंकु ने इसी शरीर से स्वर्ग जाने के हेतु वशिष्ठ जी से कहा तो उन्होंने उत्तर दिया कि वह अशक्य काम हम से न होगा। तब त्रिशंकु वशिष्ठ के सौ पुत्रों के पास गया और जब उन से भी कोरा जवाब पाया तब कहा कि तुम्हारे पिता और तुम लोगों ने हमारी इच्छा पूरी नहीं किया और हम को कोरा जवाब दिया इससे अब हम दूसरा पुरोहित करते हैं। वशिष्ठ के पुत्रों ने इस बात से रुष्ट होकर त्रिशंकु को शाप दिया कि तू चांडाल हो जा। बिचारा त्रिशंकु चांडाल बन कर विश्वामित्र के पास गया और दुखी होकर अपना सब हाल वर्णन किया। विश्वामित्र ने अपने पुराने बैर का बदला लेने का अच्छा अवसर सोचकर राजा से प्रतिज्ञा किया कि इसी देह से तुम को स्वर्ग भेजेंगे और सब मुनियों को बुलाकर यज्ञ करना चाहा। सब ऋषि तो आए पर वशिष्ठ के सौ पुत्र नहीं आए और कहा कि जहाँ चांडाल यजमान और क्षत्रिय पुरोहित वहाँ कौन जाय। क्रोधी विश्वामित्र ने इस बात से रुष्ट होकर शाप से वशिष्ठ के उन सौ पुत्रों को भस्म कर दिया। यह देखकर और बिचारे ऋषि मारे डर के यज्ञ करने लगे। जब मंत्रों से बुलाने से देवता लोग यज्ञ भाग लेने न आए तो विश्वामित्र ने क्रोध से श्रुवा उठाकर कहा कि त्रिशंकु यज्ञ से कुछ काम नहीं तुम हमारे तपोबल से स्वर्ग जाओ। त्रिशंकु इतना कहते ही आकाश की ओर उड़ा। जब इन्द्र ने देखा कि त्रिशंकु सशरीर स्वर्ग में आना चाहता है तो पुकारा कि अरे तू यहाँ आने के योग नहीं है नीचे गिर। त्रिशंकु यह सुनते ही उलटा होकर नीचे गिरा और विश्वामित्र से त्राहि-त्राहि पुकारा। विश्वामित्र ने तप बल से उसको वहाँ बीच ही में स्थिर रक्खा। कर्म्मनाशा नामक नदी त्रिशंकु के ही लार से बनी है। फिर देवताओं पर क्रोध करके विश्वामित्र ने सृष्टि ही दूसरी करनी चाही। दक्षिण ध्रुव के समीप सप्तर्षि और नक्षत्र इन्होंने नए बनाए और बहुत से जीव जंतु फल मूल बनाकर जब

इन्द्रादिक देवता भी दूसरे बनाने चाहे तब देवता लोग डर कर इनसे क्षमा मांगने गए। इन्होंने अपनी बनाई सृष्टि स्थिर रखकर और दक्षिणाकाश में त्रिशंकु को ग्रह की भाँति प्रकाशमान स्थिर रखकर क्षमा किया। यह सब भी रामायण ही में है। फिर एक बेर पानी नहीं बरसा इससे बड़ा काल पड़ा। विश्वामित्र एक चांडाल के घर भीख माँगने गए और जब कुत्ते का माँस पाया तो उसी से देवताओं को बलि दिया। देवता लोग इन के भय से काँप गए और इन्द्र ने उसी समय पानी बरसाया। यह प्रसंग महाभारत के शांति पर्ब्ब के 141 अध्याय में है। फिर हरिश्चन्द्र की बिपत्ति सुन पर क्रोध से वशिष्ठ जी ने उनको शाप दिया कि तुम बकुला हो जाओ और विश्वामित्र ने यह सुनकर वशिष्ठ को शाप दिया कि तुम आड़ी हो जाओ। पक्षी बनकर दोनों ने बड़ा घोर युद्ध किया जिससे त्रैलोक्य कांप गया। अन्त में ब्रह्मा ने दोनों से मेल कराया। यह उपाख्यान मारकंडेय पुरान के नवें अध्याय में है। इनकी उत्पत्ति यों है। भृगु ने जब अपने पुत्र च्यवन ऋषि को ब्याह किए देखा तो बड़े प्रसन्न हुए और बेटा बहू देखने को उनके घर आए। उन दोनों ने पिता की पूजा किया और हाथ जोड़कर सामने खड़े हो गए। भृगु ने बहू से कहा कि बेटी वर माँग। सत्यवती ने यह वर माँगा कि मुझे तो वेद शास्त्र जानने वाला और मेरी माता को युद्ध विद्या विशारद पुत्र हो। भृगु ने एवमस्तु कह कर ध्यान से प्राणायाम किया और उनके श्वास से दो चरु उत्पन्न हुए। भृगु ने वह बहू को देकर कहा कि यह लाल चरु तो तुम्हारी माता प्रति ऋतु समय में अश्वत्थ का आलिंगन करके खाय और तुम यह सफेद चरु उसी भांति उदुम्बर का आलिंगन करके खाना। भृगु के वाक्यानुसार सत्यवती ने कनौज के राजा गाधि की स्त्री अपनी माता से सब कहा। उसकी माता ने यह समझकर कि ऋषि ने अपनी पतोहू को अच्छा बालक होने को चरु दिया होगा। जब ऋतु काल आया तब लाल चरु तो कन्या को खिलाया और सफेद आप खाया। भगवान भृगु ने तपोबल से जब यह बात जानी तो आकर बहू से कहा कि तुमने चरु को उलट पुलट किया इससे तुम्हारा लड़का ब्राह्मण होकर भी क्षत्रिय कर्म्म होगा और तुम्हारा भाई क्षत्रिय होकर भी ब्राह्मण हो जायेगा सत्यवती ने जब ससुर से अपराध की क्षमा चाही तब उन्होंने कहा कि अच्छा तुम्हारे पुत्र के बदले पौत्र क्षत्रिय कर्म्मा होगा वही राजा गाधि को विश्वामित्र हुए और च्यवन को जमदग्नि और जमदग्नि को परशुराम हुए। यह उपाख्यान कालिका पुराण के 84 अध्याय में स्पष्ट है। इन उपाख्यानों के जानने से इस नाटक के पढ़ने वालों को बड़ी सहायता मिलेगी। इसी

भारतवर्ष में उत्पन्न और इन्हीं हम लोगों को पूर्ब्ब पुरुष महाराज हरिश्चन्द्र भी थे यह समझ कर इस नाटक के पढ़ने वाले कुछ भी अपना चरित्र सुधारेंगे तो कवि का परिश्रम सुफल होगा।

समर्पण

नाथ

यह एक नया कौतुकी देखो। तुम्हारे सत्यपथ पर चलने वाले कितना कष्ट उठाते हैं यही इसमें दिखाया है। भला हम क्या कहैं? जो हरिश्चन्द्र ने किया वह तो अब कोई भी भारतवासी न करेगा पर उस वंश ही के नाते इनको भी मानना। हमारी करतूत तो कुछ भी नहीं पर तुम्हारी तो बहुत कुछ है। बस इतनी ही सही। लो, सत्य हरिश्चन्द्र तुम्हें समर्पित है अंगीकार करो। छल मत समझना सत्य का शब्द सार्थ है। कुछ पुस्तक के बहाने समर्पण नहीं है।

तुम्हारा

ज्येष्ठ शुद्ध 5 सं. 1933। हरिश्चन्द्र।

सत्यहरिश्चन्द्र (एक रूपक)

करुण रस अंगी

भयानक और बीर अंग

चार अंकों में

प्रथम अंक ... ... इन्द्रसभा

द्वितीय अंक ... ... हरिश्चन्द्र की सभा

त्रितीय अंक ... ... काशी में विक्रय

चतुर्थ अंक ... ... श्मशान

अथ सत्यहरिश्चन्द्र

(मंगलाचरण)

सत्यासक्त दयाल द्विज प्रिय अघ हर सुख कन्द।

जनहित कमला तजन जय शिव नृप कवि हरिचन्द।। । । 1। ।

(नान्दी के पीछे सूत्रधार आता है)

सू.: अहा! आज की सन्ध्या भी धन्य है कि इतने गुणज्ञ और रसिक लोग एकत्र हैं और सबकी इच्छा है कि हिन्दी भाषा का कोई नवीन नाटक देखें। धन्य

है विद्या का प्रकाश कि जहाँ के लोग नाटक किस चिड़िया का नाम है इतना भी नहीं जानते थे भला वहाँ अब लोगों की इच्छा इधर प्रवृत्त तो हुई। परन्तु हा! शोच की बात है कि जो बड़े-बड़े लोग हैं और जिनके किए कुछ हो सकता है वे ऐसी अन्धपरम्परा में फँसे हैं और ऐसे बेपरवाह और अभिमानी हैं कि सच्चे गुणियों की कहीं पूछ ही नहीं है। केवल उन्हीं की चाह और उन्हीं की बात है जिन्हें झूठी खैरखाही दिखाना वा लंबा चौड़ा गाल बजाना आता है। (कुछ सोच कर) क्या हुआ, ढंग पर चला जायगा तौ यों भी बहुत कुछ हो रहैगा। काल बड़ा बली है, धीरे-धीरे सब आप से आप ही कर देगा। पर भला आज इन लोगों को लीला कौन सी दिखाऊं। (सोचकर) अच्छा, उनसे भी तो पूछ लें ऐसे कौतुकों में पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की बुद्धि विशेष लड़ती है। (नेपथ्य की ओर देख कर) मोहना! अपनी भाभी को जरा इधर तो भेजना।

(नेपथ्य में से-मैं तो आप ही आती थी कहती हुई नटी। आती है)

न.: मैं तो आप ही आती थी। वह एक मनिहारिन आ गई थी उसी के बखेड़े में लग गई, नहीं तो अब तक कभी की आ चुकी होती। कहिए, आज जो लीला करनी हो वह पहिले ही से जानी रहै तो मैं और सभी से कह के सावधान कर दूं।

सू.: आज का नाटक तो हमने तुम्हारी ही प्रसन्नता पर छोड़ दिया है।

न.: हम लोगों को तो सत्य हरिश्चन्द्र आज कल अच्छी तरह याद है और उसका खेल भी सब छोटे-बड़े को भज रहा है।

सू.: ठीक है, यही हो। भला इससे अच्छा और कौन नाटक होगा। एक तो इन लोगों ने उसे अभी देखा नहीं है, दूसरे आख्यान भी करुणा पूर्ण राजा हरिश्चन्द्र का है, तीसरे उसका कवि भी हम लोगों का एकमात्र जीवन है।

न.: (लंबी सांस लेकर) हा! प्यारे हरिश्चन्द्र का संसार ने कुछ भी गुण रूप न समझा। क्या हुआ। कहैंगे सबै ही नैन नीर भरि भरि पाछे प्यारे हरिचंद की कहानी रहिजायगी। । 2। ।

सू.:इसमें क्या संदेह है? काशी के पंडितों ही ने कहा है। ।

सब सज्जन के मान को कारन इक हरिचंद।
जिमि सुझाव दिन रैन के कारन नित हरिचंद। । 3। । 3

और फिर उनके मित्र पंडित शीतलाप्रसाद जी ने इस नाटक के नायक से उनकी समता भी किया है। इससे उनके बनाए नाटकों में भी सत्य हरिश्चन्द्र ही आज खेलने को जी चाहता है। ।

न.: कैसी समता, मैं भी सुनूं।

सू.: जो गुन नृप हरिचन्द मैं जगहित सुनियत कान।
सो सब कवि हरिचन्द मैं लखहु प्रतच्छ सुजान। । 4। । 1

(नेपथ्य में)

अरे!

यहाँ सत्यभय एक के कांपत सब सुर लोक।
यह दूजो हरिचन्द को करन इन्द्रउर सोक। । 2। ।

सू.: (सुनकर और नेपथ्य की ओर देखकर) यह देखो! हम लोगों को बात करते देर न हुई कि मोहना इन्द्र बन कर आ पहुँचा। तो अब चलो हम लोग भी तैयार हों।

(दोनों जाते हैं)

इतिप्रस्तावना

प्रथम अंक

जवनिका उठती है

(स्थान इन्द्रसभा, बीच में गद्दी तकिया धरा हुआ, घर सजा हुआ)

(इन्द्र आता है)

इ.: ('यहाँ सत्यभय एक के' यह दोहा फिर से पढ़ता हुआ इधर-उधर घूमता है।)

(द्वारपाल आता है)

द्वा.: महाराज! नारद जी आते हैं।

इ.: आने दो, अच्छे अवसर पर आए।

द्वा.: जो आज्ञा। (जाता है)

इ.: (आप ही आप) नारद जी, सारी पृथ्वी पर इधर-उधर फिरा करते हैं। इनसे सब बातों का पक्का पता लगेगा। हमने माना कि राजा हरिश्चन्द्र को स्वर्ग लेने की इच्छा न हो तथापि उस के धर्म्म की एक बेर परीक्षा तो लेनी चाहिए।

(नारदजी आते हैं)

इ.: (हाथ जोड़कर दंडवत करता है)

आइए आइए धन्य भाग्य, आज किधर भूल पड़े।

ना.: हमैं और भी कोई काम है, केवल यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ-यही हमैं है कि और भी कुछ।

इ.: साधु स्वभाव ही से परोपकारी होते हैं। विशेष कर के आप ऐसे हैं, जो हमारे से दीन गृहस्थों को घर बैठे दर्शन देते हैं, क्योंकि जो लोग गृहस्थ और काम काजी हैं वे स्वभाव ही से गृहस्थी के बन्धनों से ऐसे जकड़ जाते हैं कि साधु संगम तो उनको सपने में भी दुर्लभ हो जाता है, न वे अपने प्रबन्धों से छुट्टी पावेंगे न कहीं जायंगे।

ना.: आप को इतनी शिष्टाचार नहीं सोहती। आप देवराज हैं और आप के संग की तो बड़े-बड़े ऋषि मुनि इच्छा करते हैं फिर आप को सतसंग कौन दुर्लभ हैं। केवल जैसा राजा लोगों में एक सहज मुंह देखा व्यापार होता है वैसी ही बातैं आप इस समय कर रहे हैं।

इ.: हम को बड़ा शोच है कि आप ने हमारी बातों को शिष्टाचार समझा। क्षमा कीजिए आप से हम बनावट नहीं कर सकते। भला, बिराजिये तो सही, यह बातें तो होती ही रहेंगी।

ना.: बिराजिये (दोनों बैठते हैं)।

इ.: कहिए, इस समय कहाँ से आना हुआ।

ना.: अयोध्या से। अहा। राजा हरिश्चन्द्र धन्य है। मैं तो उसके निष्कपट अकृत्रिम सुझाव से बहुत ही संतुष्ट हुआ। यद्यपि इसी सूर्यकाल में अनेक बड़े-बड़े धार्मिक हुए पर हरिश्चन्द्र तो हरिश्चन्द्र ही है।

इ.: (आप ही आप) यह भी तो उसी का गुण गाते हैं।

ना.: महाराज। सत्य की तो मानो हरिश्चन्द्र मूर्ति है। निस्सन्देह ऐसे मनुष्यों के उत्पन्न होने से भारत भूमि का सिर केवल इनके स्मरण से उस समय भी ऊँचा रहेगा जब वह पराधीन होकर हीनावस्था को प्राप्त होगी।

इ.: (आप ही आप) अहा! हृदय भी ईश्वर ने क्या ही वस्तु बनाई है। यद्यपि इसका स्वभाव सहज ही गुणग्राही हो तथापि दूसरों की उत्कट कीर्त्ति से इसमें ईर्षा होती ही है, उसमें भी जो जितने बड़े हैं उनकी ईर्षा भी उतनी ही बड़ी है। हमारे ऐसे बड़े पदाधिकारियों को शत्रु उतना संताप नहीं देते जितना दूसरों की सम्पत्ति और कीर्त्ति।

ना.: आप क्या सोच रहे हैं?

इ.: कुछ नहीं। यों ही मैं यही सोचता था कि हरिश्चन्द्र की कीर्त्ति आज कल छोटे बड़े सबके मुंह से सुनाई पड़ती है इससे निश्चय होता है कि नहीं हरिश्चन्द्र निस्संदेह बड़ा मनुष्य है।

ना.: क्यों नहीं, बड़ाई उसी का नाम है, जिसे छोटे बड़े सब मानैं और फिर नाम भी तो उसी का रह जायगा जो ऐसा दृढ़ हो कर धर्म्म साधन करेगा। (आप ही आप) और उसकी बड़ाई का यह भी तो एक बड़ा प्रमाण है कि आप ऐसे लोग उससे बुरा मानते हैं, क्योंकि जिससे बड़े-बड़े लोग डाह करें पर उसका कुछ बिगाड़ न सकें वह निस्संदेह बहुत बड़ा मनुष्य है।

इ.: भला उसके गृह चरित्र कैसे हैं?

ना.: दूसरों के लिए उदाहरण बनाने के योग्य। भला पहिले जिसने अपने निज के और अपने घर के चरित्र ही नहीं शुद्ध किए हैं उसकी और बातों पर क्या विश्वास हो सकता है। शरीर में चरित्र ही मुख्य वस्तु है। बचन से उपदेशक और क्रियादिक से कैसा भी धर्म्मनिष्ठ क्यों न हो पर यदि उसके चरित्र शुद्ध नहीं हैं तो लोगों में वह टकसाल न समझा जायगा और उसकी बात प्रमाण न होंगी! महात्मा और दुरात्मा में इतना ही भेद है कि उनके मन बचन और कर्म्म एक रहते हैं, इनके भिन्न निस्संदेह हरिश्चन्द्र महाशय है। उसके आशय बहुत उदार हैं इसमें कोई संदेह नहीं।

इ.: भला आप उदार वा महाशय किसको कहते हैं?

ना.: जिसका भीतर बाहर एक सा हो और विद्यानुरागिता उपकार प्रियता आदि गुण जिसमें सहज हों। अधिकार में क्षमा, विपत्ति में धैर्य्य, सम्पत्ति में अनभिमान और युद्ध में जिसको स्थिरता है वह ईश्वर की सृष्टि का रत्न है और उसी की माता पुत्रवती है। हरिश्चंद्र में ये सब बातें सहज हैं। दान करके उसको प्रसन्नता होती है और कितना भी दे पर संतोष नहीं होता, यही समझता है कि अभी थोड़ा दिया।

इ.: (आप ही आप) हृदय! पत्थर के होकर तुम यह सब कान खोल के सुनो।

ना.: और इन गुणों पर ईश्वर की निश्चला भक्ति उसमें ऐसी है, जो सब का भूषण है, क्योंकि उसके बिना किसी की शोभा नहीं। फिर इन सब बातों पर विशेषता यह है कि राज्य का प्रबन्ध ऐसा उत्तम और दृढ़ है कि लोगों को संदेह होता है कि इन्हें राज काज देखने की छुट्टी कब मिलती है। सच है छोटे जी के लोग थोड़े ही कामों में ऐसे घबड़ा जाते हैं मानो सारे संसार का बोझ इन्हीं पर है, पर जो बड़े लोग हैं उन के सब काम महारम्भ होते हैं तब भी उनके मुख पर कहीं से व्याकुलता नहीं झलकती, क्योंकि एक तो उनके उदार चित्त में धैर्य्य

और अवकाश बहुत है, दूसरे उनके समय व्यर्थ नहीं जाते और ऐसे यथायोग्य बने रहते हैं, जिससे उन पर कभी भीड़ पड़ती ही नहीं।

इ.: भला महाराज वह ऐसे दानी हैं तो उनकी लक्ष्मी कैसे स्थिर है।

ना.: यही तो हम कहते हैं। निस्संदेह वह राजा कुल का कलंक है, जिसने बिना पात्र विचारे दान देते-देते सब लक्ष्मी का क्षय कर दिया, आप कुछ उपार्जन किया ही नहीं, जो था वह नाश हो गया और जहाँ प्रबन्ध है वहाँ धन ही क्या कमती है। मनुष्य कितना धन देगा और जाचक कितना लेंगे।

इ.: पर यदि कोई अपने वित्त के बाहर माँगे या ऐसी वस्तु मांगे जिससे दाता की सर्वस्व हानि हो तो वह दे कि नहीं?

ना.: क्यों नहीं। अपना सर्वस्व वह क्षण भर में दे सकता है, पात्र चाहिए। जिसको धन पाकर सत्पात्र में उसके त्याग की शक्ति नहीं है वह उदार कहाँ हुआ।

इ.: (आप ही आप) भला देखेंगे न।

ना.: राजन्! मानियों के आगे प्राण और धन तो कोई वस्तु ही नहीं है। वे तो अपने सहज सुभाव ही से सत्य और विचार तथा दृढ़ता में ऐसे बंधे हैं कि सत्पात्र मिलने या बात पड़ने पर उनको स्वर्ण का पर्वत भी तिल-सा दिखाई देता है और उसमें भी हरिश्चन्द्र-जिसका सत्य पर ऐसा स्नेह है जैसा भूमि, कोष, रानी और तलवार पर भी नहीं है। जो सत्यानुरागी ही नहीं है भला उससे न्याव कब होगा और जिसमें न्याव नहीं है वह राजा ही काहे का है। कैसी भी विपत्ति और उभय संकष्ट पड़ै और कैसी ही हानि वा लाभ हो पर जो न्याव न छोड़े वही धीर और वही राजा और उस न्याव का मूल सत्य है।

इ.: तो भला वह जिसे जो देने को कहैगा देगा वा जो करने को कहैगा वह करैगा।

ना.: क्या आप उसका परिहास करते हैं? किसी बड़े के विषय में ऐसी शंका ही उसकी निन्दा है। क्या आप ने उसका यह सहज साभिमान वचन कभी नहीं सुना है-

चन्द टरै सूरज टरै टरै जगत व्योहार।
पै दृढ़ श्रीहरिचन्द को टरै न सत्य विचार। ।

इ.: (आप ही आप) तो फिर इसी सत्य के पीछे नाश भी होंगे, हमको भी अच्छा उपाय मिला। (प्रगट) हाँ पर आप यह भी जानते हैं कि क्या वह यह सब धर्म्म स्वर्ग लेने को करता है?

ना.: वाह। भला जो ऐसे उदार हैं उनके आगे स्वर्ग क्या वस्तु है। क्या बड़े लोग धर्म्म स्वर्ग पाने को करते हैं। जो अपने निर्मल चरित्र से संतुष्ट हैं उन के आगे स्वर्ग कौन वस्तु है। फिर भला जिनके शुद्ध हृदय और सहज व्योहार हैं वे क्या यश वा स्वर्ग की लालच में धर्म्म करते हैं। वे तो आपके स्वर्ग को सहज में दूसरे को दे सकते हैं और जिन लोगों को भगवान के चरणारविंद में भक्ति है वे क्या किसी कामना से धर्म्माचरण करते हैं, यह भी तो एक क्षुद्रता है कि इस लोक में एक देकर परलोक में दो की आशा रखना।

इ.: (आप ही आप) हमने माना कि उस को स्वर्ग लेने की इच्छा न हो तथापि अपने कर्म्मों से वह स्वर्ग का अधिकारी तो हो जायेगा।

ना.: और जिनको अपने किये शुभ अनुष्ठानों से आप संतोष मिलता है उन के उस असीम आनंद के आगे आप के स्वर्ग का अमृतपान और अप्सरा तो महा महा तुच्छ हैं। क्या अच्छे लोग कभी किसी शुभ कृत्य का बदला चाहते हैं।

इ.: तथापि एक बेर उनके सत्य की परीक्षा होती तो अच्छा होता।

ना.: राजन्! आपका यह सब सोचना बहुत अयोग्य है। ईश्वर ने आपको बड़ा किया है तो आप को दूसरों की उन्नति और उत्तमता पर संतोष करना चाहिए। ईर्षा करना तो क्षुद्राशयों का काम है। महाशय वही है, जो दूसरों की बड़ाई से अपनी बड़ाई समझै।

इ.: (आप ही आप) इन से काम न होगा। (बात बहलाकर प्रगट) नहीं नहीं मेरी यह इच्छा थी कि मैं भी उनके गुणों को अपनी आँखों से देखता। भला मैं ऐसी परीक्षा थोड़े लेना चाहता हूँ जिससे उन्हें कुछ कष्ट हो।

ना.: (आप ही आप) अहा! बड़ा पद मिलने से कोई बड़ा नहीं होता। बड़ा वही है, जिसका चित्त बड़ा है। अधिकार तो बड़ा है पर चित्त में सदा क्षुद्र और नीच बातें सूझा करती हैं। वह आदर के योग्य नहीं है, परन्तु जो कैसा भी दरिद्र है पर उसका चित्त उदार और बड़ा है, वही आदरणीय है।

(द्वारपाल आता है)

द्वा.: महाराज! विश्वामित्र जी आए हैं।

इ.: (आप ही आप) हां इनसे वह काम होगा। अच्छे अवसर पर आए। जैसा काम हो वैसे ही स्वभाव के लोग भी चाहिएं। (प्रकट) हां हां लिवा लाओ।

द्वा.: जो आज्ञा। (जाता है)

(विश्वामित्र आते हैं)

इ.: (प्रणामादि शिष्टाचार करके) आइए भगवन्, विराजिए।

वि.: (नारदजी को प्रणाम करके और इन्द्र को आशीर्वाद देकर बैठते हैं)

ना.: तो अब हम जाते हैं, क्योंकि पिता के पास हमें किसी आवश्यक काम को जाना है।

वि.: यह क्या? हमारे आते ही आप चले, भला ऐसी रुष्टता किस काम की।

ना.: हरे हरे! आप ऐसी बात सोचते हैं, राम राम भला आप के आने से हम क्यों जायंगे। मैं तो जाने ही को था कि इतने में आप आ गये।

इ.: (हंसकर) आपकी जो इच्छा।

ना.: (आप ही आप) हमारी इच्छा क्या अब तो आप ही की यह इच्छा है कि हम जायं, क्योंकि अब आप तो विश्व के अमित्र जी से राजा हरिश्चन्द्र को दुख देने की सलाह कीजिएगा तो हम उसके बाधक क्यों हो, पर इतना निश्चय रहे कि सज्जन को दुर्जन लोग जितना कष्ट देते हैं उतनी ही उनकी सत्य कीर्ति तपाए सोने की भांति और भी चमकती है, क्योंकि विपत्ति बिना सत्य की परीक्षा नहीं होती। (प्रगट) यद्यपि 'जो इच्छा' आप ने सहज भाव से कहा है तथापि परस्पर में ऐसे उदासीन बचन नहीं कहते क्योंकि इन वाक्यों से रूखापन झलकता है। मैं कुछ इसका ध्यान नहीं करता, केवल मित्र भाव से कहता हूं। लो, जाता हूं और यही आशीर्वाद दे कर जाता हूं कि तुम किसी को कष्टदायक मत हो क्योंकि अधिकार पाकर कष्ट देना यह बड़ों की शोभा नहीं, सुख देना शोभा है।

इ.: (कुछ लज्जित होकर प्रणाम करता है)।

(नारदजी जाते हैं)

वि.: यह क्यों? आज नारद भगवान ऐसी जली-कटी क्यों बोलते थे, क्या तुमने कुछ कहा था।

इ.: नहीं तो। राजा हरिश्चन्द्र का प्रसंग निकला था सो उन्होंने उसकी बड़ी स्तुति की और हमारा उच्च पद का आदरणीय स्वभाव उस परकीर्त्ति को सहन न कर सका। इसी में कुछ बात ही बात ऐसा सन्देह होता है कि वे रुष्ट हो गए।

वि.: तो हरिश्चन्द्र में कौन से ऐसे गुण हैं? (सहज की भृकुटी चढ़ जाती है)।

इ.: (ऋषि का भ्रूभंग देखकर चित्त में संतोष करके उनका क्रोध बढ़ाता हुआ) महाराज सिपारसी लोग चाहे जिसको बढ़ा दें, चाहे घटा दें। भला सत्य

धर्म्म पालन क्या हंसी खेल है? यह आप ऐसे महात्माओं ही का काम है जिन्होंने घर बार छोड़ दिया है। भला राज करके और घर में रह के मनुष्य क्या धर्म्म का हठ करैगा और फिर कोई परीक्षा लेता तो मालूम पड़ती। इन्हीं बातों से तो नारद जी बिना बात ही अप्रसन्न हुए।

वि.: मैं अभी देखता हूँ न। तो हरिश्चन्द्र को तेजोभ्रष्ट न किया तो मेरा नाम विश्वामित्र नहीं। भला मेरे सामने वह क्या सत्यवादी बनैगा और क्या दानीपने का अभिमान करैगा।

(क्रोधपूर्वक उठ कर चला चाहते हैं कि परदा गिरता है)।

। । इति प्रथम अंक। ।

दूसरा अंक

स्थान राजा हरिश्चन्द्र का राजभवन।

रानी शैव्या1 बैठी हैं और एक सहेली बगल में खड़ी है।

रा.: अरी? आज मैंने ऐसे बुरे-बुरे सपने देखे हैं कि जब से सो के उठी हूं कलेजा कांप रहा है। भगवान् कुसल करे।

स.: महाराज के पुन्य प्रताप से सब कुसल ही होगी आप कुछ चिन्ता न करें। भला क्या सपना देखा है मैं भी सुनूँ?

रा.: महाराज को तो मैंने सारे अंग में भस्म लगाए देखा है और अपने को बाल खोले और (आँखों में आँसू भर कर) रोहितास्व को देखा है कि उसे सांप काट गया है।

स.: राम! राम! भगवान् सब कुसल करेगा। भगवान् करे रोहितास्व जुग जुग जिएं और जब तक गंगा जमुना में पानी है आप का सोहाग अचल रहे। भला आप ने इस की शांती का भी कुछ उपाय किया है।

रा.: हाँ गुरुजी से तो सब समाचार कहला भेजा है देखो वह क्या करते हैं।

स.: हे भगवान् हमारे महाराज महारानी कुंअर सब कुसल से रहैं, मैं आंचल पसार के यह वरदान मांगती हूं।

(ब्राह्मण आता है)

ब्रा.: (आशीर्वाद देता है)

स्वस्त्यस्तुतेकुशलमस्तुचिरायुरस्तु

गोवाजिहस्तिधनधान्यसमृद्धिरस्तु
ऐश्वर्य्यमस्तुकुशलोस्तुरिपुक्षयोस्तु
सन्तानवृद्धिसहिताहरिभक्तिरस्तु। ।

रा.: (हाथ जोड़ कर प्रणाम करती है)

ब्रा.: महाराज गुरूजी ने यह अभिमंत्रित जल भेजा है। इसे महारानी पहिले तो नेत्रों से लगा लें और फिर थोड़ा-सा पान भी कर लें और यह रक्षाबंधन भेजा है। इसे कुमार रोहिताश्व की दहनी भुजा पर बांध दें फिर इस जल से मैं मार्जन करूंगा।

रा.: (नेत्र में जल लगाकर और कुछ मुंह फेर कर आचमन करके) मालती, यह रक्षाबन्धन तू सम्हाल के अपने पास रख। जब रोहितास्व मिले उस के दहने हाथ पर बाँध दीजियो।

स.: जो आज्ञा (रक्षाबन्धन अपने पास रखती है)।

ब्रा.: तो अब आप सावधान हो जायं मैं मार्जन कर लूँ।

रा.: (सावधान होकर) जो आज्ञा।

ब्रा.: (दुर्बा से मार्जन करता है)

देवास्त्वामभिषिंचन्तुब्रह्मविष्णुशिवादय:
गन्धर्व्वा:किन्नरा: नागा: रक्षा कुर्व्वन्तुतेसदा
पितरोगुह्यकायक्षा: देव्योभूताचमातर:
सर्व्वेत्वामभिषिंचन्तुरक्षांकुर्वन्तुतेसदा
भद्रमस्तुशिवंचास्तुमहालक्ष्मीप्रसीदतु
पतिपुत्रयुतासाध्विजीत्ववं शरदांशतं। ।

(मार्जन का जल पृथ्वी पर फेंककर)

यत्पापंरोगमशुभंतद्दूरेंप्रतिहतमस्तु

(फिर रानी पर मार्जन करके)

यन्मंगलंशुभं सौभाग्यधनधान्यमारोग्यं बहु
पुत्रत्वं तत्सर्व्वमीशप्रसादात्ब्राम्हणवचनात्त्वय्यस्तु

(मार्जन कर के फूल अक्षत रानी के हाथ में देता है)

रा.: (हाथ जोड़कर ब्राह्मण को दक्षिणा देती है)

महाराज गुरु जी से मेरी ओर से बिनती करके दंडवत कह दीजिएगा।

ब्रा.: जो आज्ञा (आशीर्वाद देकर जाता है)

रा.: आज महाराज अब तक सभा में नहीं आए?

स.: अब आते होंगे, पूजा में कुछ देर लगी होगी।

(नेपथ्य में बैतालिक गाते हैं)

(राग भैरव)

प्रगटहु रविकुलरबि निसि बीती प्रजा कमलगन फूले। मन्द परे रिपुगन तारा सम जन भय तम उन भूले। । नसे चोर लम्पट खल लखि जग तुव प्रताप प्रगटायो। मागध बंदी सूत चिरैयन मिलि कलरोर मचायो। । तुव कस सीतल पौन परसि चटकीं गुलाब की कलियां। अति सुख पाइ असीस देत सोइ करि अंगुरिन चट अलियां। । भए धरम मैं थित सब द्विज जन प्रजा काज निज लागे। रिपु जुवती मुख कुमुद मन्द जन चक्रवाक अनुरागे। । अरध सरिस उपहार लिए नृप ठाढ़े तिन कहं तोखौ। न्याव कृपा सों ऊंच नीच सम समुझि परसि कर पोखौ।

(नेपथ्य में से बाजे की धुनि सुन पड़ती है)

रा.: महाराज ठाकुर जी के मंदिर से चले, देखो बाजों का शब्द सुनाई देता है और बंदी लोग भी गाते आते हैं।

स.: आप कहती हैं चले? वह देखिये आ पहुँचे कि चले।

रा.: (घबड़ा कर आदर के हेतु उठती हैं)

(परिकर सहित महाराज हरिश्चन्द्र आते हैं)

(रानी प्रणाम करती हैं और सब लोग यथा स्थान बैठते हैं)

ह.: (रानी से प्रीतिपूर्वक) प्रिये! आज तुम्हारा मुखचन्द्र मलीन क्यों हो रहा है?

रा.: पिछली रात मैंने कुछ दु:स्वप्न देखे हैं जिनसे चित्त व्याकुल हो रहा है।

ह.: प्रिये! यद्यपि स्त्रियों का स्वभाव सहज ही भीरु होता है पर तुम तो वीर कन्या वीरपत्नी और वीरमाता हो तुम्हारा स्वभाव ऐसा क्यों?

रा.: नाथ! मोह से धीरज जाता रहता है।

ह.: सो गुरु जी से कुछ शान्ति करने को नहीं कहलाया।

रा.: महाराज! शान्ति तो गुरु जी ने कर दी है।

ह.: तब क्या चिन्ता है शास्त्र और ईश्वर पर विश्वास रक्खो सब कल्याण होगा। सदा सर्वदा सहज मंगल साधन करते भी जो आपत्ति आ पड़े तो उसे निरी ईश्वर की इच्छा ही समझ के संतोष करना चाहिए।

रा.: महाराज! स्वप्न के शुभाशुभ का विचार कुछ महाराज ने भी ग्रंथों में देखा है?

ह.: (रानी की बात अनसुनी करके) स्वप्न तो कुछ हमने भी देखा है चिन्तापूर्वक स्मरण करके। हां यह देखा है कि एक क्रोधी ब्राह्मण विद्या साधन करने को सब दिव्य महाविद्याओं को खींचता है और जब मैं स्त्री जान कर उनको बचाने गया हूँ तो वह मुझी से रुष्ट हो गया है और फिर जब बड़े विनय से मैंने उसे मनाया है तो उसने मुझसे मेरा सारा राज्य मांगा है। मैंने उसे प्रसन्न करने को अपना सब राज्य दे दिया है। (इतना कहकर अत्यन्त व्याकुलता नाट्य करता है।)

रा.: नाथ। आप एक साथ ऐसे व्याकुल क्यों हो गए?

ह.: मैं यह सोचता हूँ कि अब मैं उस ब्राह्मण को कहाँ पाऊंगा और बिना उसकी थाती उसे सौंपे भोजन कैसे करूंगा।

रा.: नाथ। क्या स्वप्न के व्योहार को भी आप सत्य मानिएगा?

ह.: प्रिये, हरिश्चन्द्र की अर्द्धांगिनी होकर तुम्हें ऐसा कहना उचित नहीं है। हा! भला तुम ऐसी बात मुंह से निकालती हो! स्वप्न किसने देखा है? मैंने न? फिर क्या? स्वप्न संसार अपने काल में असत्य है इसका कौन प्रमाण है और जो अब असत्य कहो तो मरने के पीछे तो यह संसार भी असत्य है, फिर इस संसार में परलोक के हेतु लोग धर्म्माचरण क्यों करते हैं? दिया सो दिया, क्या स्वप्न में क्या प्रत्यक्ष।

रा.: (हाथ जोड़कर) नाथ क्षमा कीजिए, स्त्री की बुद्धि ही कितनी।

ह.: (चिन्ता करके) पर मैं अब करूं क्या! अच्छा। प्रधान! नगर में डौंडी पिटवा दो कि राज्य सब लोग आज से अज्ञातनामगोत्र ब्राह्मण का समझें उसके अभाव में हरिश्चन्द्र उसके सेवक की भाँति उसकी थाती समझ के राज का कार्य्य करेगा और दो मुहर राज काज के हेतु बनवा लो एक पर 'अज्ञातनामगोत्र ब्राह्मण सेवक हरिश्चन्द्र' और दूसरे पर 'राजाधिराज अज्ञात नाम गोत्र ब्राह्मण महाराज' खुदा रहे और आज से राज काज के सब पत्रों पर भी यही नाम रहे। देस देस के राजाओं और बड़े-बड़े कार्याधीशों को भी आज्ञापत्र भेज दो कि महाराज हरिश्चन्द्र ने स्वप्न में अज्ञातनामगोत्र ब्राह्मण को पृथ्वी दी है इससे आज से उसका राज हरिश्चन्द्र मंत्री की भांति सम्हालेगा।

(द्वारपाल आता है)

द्वा.: महाराजाधिराज! एक बड़ा क्रोधी ब्राह्मण दरवाजे पर खड़ा है और व्यर्थ हम लोगों को गाली देता है।

ह.: (घबड़ा कर) अभी सादरपूर्वक ले आओ।

द्वा.: जो आज्ञा (जाता है)।

ह.: यदि ईश्वरेच्छा से यह वही ब्राह्मण हो तो बड़ी बात हो।

(द्वारपाल के साथ विश्वामित्र1 आते हैं)।

ह.: (आदरपूर्वक आगे से लेकर और प्रणाम करके) महाराज! पधारिए, यह आसन है।

वि.: बैठे, बैठ चुके, बोल अभी तैनें मुझे पहिचाना कि नहीं।

ह.: (घबड़ाकर) महाराज! पूर्ब्ब परिचित तो आप ज्ञात होते हैं।

वि.: (क्रोध से) सच है रे क्षत्रियाधम। तू काहे को पहिचानेगा, सच है रे सूर्यकुलकलंक तू क्यों पहिचानेगा, धिक्कार तेरे मिथ्या धर्माभिमान को ऐसे ही लोग पृथ्वी को अपने बोझ से दबाते हैं। अरे दुष्ट तै भूल गया कल पृथ्वी किस को दान दी थी, जानता नहीं कि मैं कौन हूं?

'जातिस्वयंग्रहणदुर्ललितैकविप्रं
दृप्यद्वशिष्ठसुतकाननधूमकेतुम्
सर्गान्तराहरणभीतजगत्कृतान्तं
चण्डालयाजिनमवैषिनकौशिकंमाम्'

ह.: (पैरों पर गिरके बड़े विनय से) महाराज! भला आप को त्रैलोक्य में ऐसा कौन है, जो न जानेगा।

'अन्नक्षयादिषु तथाविहितात्मवृत्ति
राजप्रतिग्रह परांमुखमानसं त्वाम्
आड़ोवकप्रधनकम्पितजीवलोकं
कस्तेजसां च तपसां च निधिर्नवेत्ति। ।'

बि.: (क्रोध से) सच है रे पाप पाखंड मिथ्यादान बीर! तू क्यों न मुझे 'राज प्रतिग्रह पर्रामुख' कहेगा क्योंकि तैंने तो कल सारी पृथ्वी मुझे दान न दी है, ठहर-ठहर देख इस झूठ का कैसा फल भोगता है, हां! इसे देख कर क्रोध से जैसे मेरी दहिनी भुजा शाप देने को उठती है वैसे ही जाति स्मरण के संस्कार से बाईं भुजा फिर से कृपाण ग्रहण किया चाहती है, (अत्यन्त क्रोध से लंबी सांस लेकर और बांह उठा कर) अरे ब्रह्मा! सम्हाल अपनी सृष्टि को नहीं तो परम तेज पुंच दीर्घतपोवर्द्धित मेरे आज इस असह्य क्रोध से सारा संसार नाश हो जायगा, अथवा संसार के नाश ही से क्या? ब्रह्मा का तो गर्ब्ब उसी दिन मैंने चूर्ण किया

जिस दिन दूसरी सृष्टि बनाई, आज इस राजकुलांगार का अभिमान चूर्ण करूंगा जो मिथ्या अहंकार के बल से जगत् में दानी प्रसिद्ध हो रहा है।

ह.: (पैरों पर गिर के) महाराज क्षमा कीजिए मैंने इस बुद्धि से नहीं कहा था, सारी पृथ्वी आप की मैं आप का भला आप ऐसी क्षुद्र बात मुंह से निकालते हैं। (ईषत् क्रोध से) और आप बारंबार मुझे झूठा न कहिए। सुनिए मेरी यह प्रतिज्ञा है।

'चन्द टरै सूरज टरै टरै जगत ब्योहार।
पै दृढ़ श्रीहरिचन्द को टरै न सत्य बिचार'। ।

बि.: (क्रोध और अनादर पूर्ब्बक हंस कर)]]]]! सच है सच है रे मूढ़! क्यों नहीं, आखिर सूर्यबंशी है। तो दे हमारी पृथ्वी।

ह.: लीजिए, इसमें विलम्ब क्या है, मैंने तो आप के आगमन के पूर्ब्ब ही से अपना अधिकार छोड़ दिया है। (पृथ्वी की ओर देखकर)

जेहि पाली इक्ष्वाकु सीं अबलौं रवि कुल राज।
ताहि देत हरिचन्द नृप विश्वामित्र हि आज। ।

वसुधे! तुम बहु सुख कियो मम पुरुखन की होय। धरमबद्ध हरिचन्द को छमहु सु परबस जोय। ।

वि.: (आप ही आप) अच्छा! अभी अभिमान दिखा ले, तो मेरा नाम विश्वामित्र जो तुझको सत्यभ्रष्ट कर के छोड़ा और लक्ष्मी से तो भ्रष्ट हो ही चुका है। (प्रगट) स्वस्ति। अब इस महादान की दक्षिणा कहां है?

ह.: महाराज! जो आज्ञा हो वह दक्षिणा अभी आती है।

वि.: भला सहस्र स्वर्ण मुद्रा से कम इतने बड़े दान की दक्षिणा क्या होगी।

ह.: जो आज्ञा (मंत्री से) मंत्री हजार स्वर्ण मुद्रा अभी लाओ।

वि.: (क्रोध से) 'मंत्री हजार स्वर्ण मुद्रा अभी लाओ' मंत्री कहां से लावेगा? क्या अब खजाना तेरा है कि तैं मंत्री पर हुकुम चलाता है? झूठा कहीं का, देना ही नहीं था तो मुंह से कहा क्यों? चल मैं नहीं लेता ऐसे मनुष्य की दक्षिणा।

ह.: (हाथ जोड़कर बिनय से) महाराज ठीक है। खजाना अब सब आप का है, मैं भूला क्षमा कीजिए। क्या हुआ खजाना नहीं है तो मेरा शरीर तो है।

वि.: एक महीने में जो मुझे दक्षिणा न मिलेगी तो मैं तुझ पर कठिन ब्रह्मदंड गिराऊंगा, देख केवल एक मास की अवधि है।

ह.: महाराज! मैं ब्रह्मदंड से उतना नहीं डरता जितना सत्यदंड से इससे बेचि देह दारा सुअन होइ दास हूं मन्द।
रखि है निज बच सत्य करि अभिमानी हरिचन्द। ।
(आकाश से फूल की वृष्टि और बाजे के साथ जयध्वनि होती है)
(जवनिका गिरती है)
। । इति दूसरा अंक। ।

तीसरे अंक में अंकावतार

स्थान वाराणसी का बाहरी प्रान्त तालाब।
(पाप आता है)

पाप: (इधर-उधर दौड़ता और हांफता हुआ) मरे रे मरे, जले रे जले, कहां जायं, सारी पृथ्वी तो हरिश्चन्द्र के पुन्य से ऐसी पवित्र हो रही है कि कहीं हम ठहर ही नहीं सकते। सुना है कि राजा हरिश्चन्द्र काशी गए हैं, क्योंकि दक्षिणा के वास्ते विश्वामित्र ने कहा कि सारी पृथ्वी तो हमको तुमने दान दे दी है, इससे पृथ्वी में जितना धन है सब हमारा हो चुका और तुम पृथ्वी में कहीं भी अपने को बेचकर हमसे उरिन नहीं हो सकते। यह बात जब हरिश्चन्द्र ने सुनी तो बहुत ही घबड़ाए और सोच विचार कर कहा कि बहुत अच्छा महाराज हम काशी में अपना शरीर बेचेंगे क्योंकि शास्त्रों में लिखा है कि काशी पृथ्वी के बाहर शिव के त्रिशूल पर है। यह सुनकर हम भी दौड़े कि चलो हम भी काशी चलें क्योंकि जहाँ हरिश्चन्द्र का राज्य न होगा वहाँ हमारे प्राण बचेंगे, सो यहाँ और भी उत्पात हो रहा है। जहाँ देखो वहाँ स्नान, पूजा, जप, पाठ, दान, धर्म, होम इत्यादि में लोग ऐसे लगे रहते हैं कि हमारी मानो जड़ ही खोद डालेंगे। रात दिन शंख घंटा की घनघोर के साथ वेद की धूनि मानो ललकार के हमारे शत्रु धर्म्म की जय मनाती है और हमारे ताप से कैसा भी मनुष्य क्यों न तपा हो भगवती भागीरथी के जलकण मिले वायु से उस का हृदय एक साथ शीतल हो जाता है। इसके उपरान्त शि शि शि..... ध्वनि अलग मारे डालती है। हाय कहाँ जायं क्या करें। हमारी तो संसार से मानो जड़ ही कट जाती है, भला और जगह तो कुछ हमारी चलती भी है पर यहाँ तो मानो हमारा राज ही नहीं, कैसा भी बड़ा पापी क्यों न हो यहाँ आया कि गति हुई।

(नेपथ्य में)

येषांक्वापिगतिर्नास्ति तेषांवाराणसीगति:

पाप: सच है, अरे! यह कौन महा भयंकर भेस, अंग में भभूत पोते, एड़ी तक जटा लटकाए, लाल लाल आँख निकाले साक्षात् काल की भांति त्रिशूल घुमाता हुआ चला आता है। प्राण! तुम्हें जो अपनी रक्षा करनी हो तो भागो पाताल में, अब इस समय भूमंडल में तुम्हारा ठिकाना लगना कठिन ही है।

(भागता हुआ जाता है)

(भैरव1 आते हैं)

भैर.: सच है। येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गति:। देखो इतना बड़ा पुन्यशील राजा हरिश्चन्द्र भी अपनी आत्मा और स्त्री पुत्र बेचने को यहीं आया है। अहा! धन्य है सत्य। आज जब भगवान भूतनाथ राजा हरिश्चन्द्र का वृतांत भवानी से कहने लगे तो उनके तीनों नेत्र अश्रु से पूर्ण हो गए और रोमांच होने से सब शरीर के भस्मकण अलग अलग हो गए। मुझको आज्ञा भी दी हुई है कि अलक्ष रूप से तुम सर्वदा राजा हरिश्चन्द्र की अंगरक्षा करना। इससे चलूं। मैं भी भेस बदलकर भगवान की आज्ञा पालन में प्रवर्त्त हूँ।

(जाते हैं। जवनिका गिरती है)

तीसरे अंक में यह अंकावतार समाप्त हुआ

तीसरा अंक

(स्थान काशी के घाट किनारे की सड़क)

महाराज हरिश्चन्द्र घूमते हुए दिखाई पड़ते हैं

ह.: देखो काशी भी पहुँच गए। अहा! धन्य है काशी। भगवति वाराणसी तुम्हें अनेक प्रणाम हैं। अहा! काशी की कैसी अनुपम शोभा है।

'चारहु आश्रम बर्न बसै मनि कंचन धाम अकास बिभासिका। सोभा नहीं कहि जाइ कछू बिधि नै रची मनो पुरीन की नासिका। आपु बसैं गिरि धारनजू तट देवनदी बर बारि बिलासिका। पुन्यप्रकासिका पापबिनासिका हीयहुलासिका सोहत कासिका'। । 1। ।

'बसैं बिंदुमाधव बिसेसरादि देव सबै दरसन ही तें लागै जम मुख मसी है। तीरथ अनादि पंचगंगा मनिकर्निकादि सात आवरन मध्य पुन्य रूप धंसी है। गिरिधरदास पास भागीरथी सोभा देत जाकी धार तोरै आसु कर्म्म रूप रसी है। समी सम जसी असी बरना में बसी पाप खसी हेतु असी ऐसी लसी बारानसी है'। । 2। ।

'रचित प्रभासी भासी अवलि मकानन की जिनमें अकासी फबै रतन नकासी है। फिरैं दास दासी बिप्रगृही औ संन्यासी लसै बर गुनरासी देवपुरी हूं न जासी है। गिरिधरदास बिश्वकीरति बिलासी रमा हासी लौं उजासी जाकी जगत हुलासी है। खासी परकासी पुनवांसी चंदिक्रा सी जाके वासी अबिनासी अघनासी ऐसी कासी है'। । 3। ।

देखो। जैसा ईश्वर ने यह सुंदर अंगूठी के नगीने सा नगर बनाया है वैसी ही नदी भी इसके लिये दी है। धन्य गंगे!

'जम की सब त्रस बिनास करी मुख तें निज नाम उचारन में। सब पाप प्रतापहि दूर दर्‌यौ तुम आपन आप निहारन में। अहो गंग अनंग के शत्रु करे बहु नेकु जलै मुख डारन में। गिरिधारनजू कितने बिरचे गिरिधारन धारन धारन में'। । 4। । 1

कुछ महात्म ही पर नहीं गंगा जी का जल भी ऐसा ही उत्तम और मनोहर है। आहा!

नव उज्जल जलधार हार हीरक सी सोहति।
बिच बिच छहरति बूंद मध्यमुक्ता मनि पोहति। ।
लोल लहर लहि पवन एक पैं इक इमि आवत।
जिमि नरगन मन बिबिध मनोरथ करत मिटावत। ।
सुभग स्वर्ग सोपान सरिस सब के मन भावत।
दरसन मज्जन पान त्रिविध भय दूर मिटावत। ।
श्री हरिपदनख चन्द्रकान्त मनि द्रवित सुधारस।
ब्रह्म कमंडल मंडन भव खंडन सुर सरबस। ।
शिव सिर मालति माल भगीरथ नृपति पुन्य फल।
ऐरावत गज गिरि पति हिम नग कंठहार कल। ।
सगर सुअन सठ सहस परम जल मात्र उधारन।
अगिनित धारारूप धारि सागर संचारन। ।
कासी कहं प्रिय जानि ललकि भेंट्‌यौ जब धाई।
सपनेहूं नहिं तजी रहीं अंकन लपटाई। ।
कहूं बंधे नव घाट उच्च गिरिवर सम सोहत।
कहुं छतरी कहुं मढ़ी बढ़ी मन मोहत जोहत। ।
धवल धाम चहुं ओर फरहरत धुजा पताका।

घहरत घंटा धुनि धमकत धौंसा करि साका। ।
मधुरी नौबत बजब कहूं नारि नर गावत।
बेद पढ़त कहुं द्विज कहुं जोगी ध्यान लगावत।
कहूं सुंदरी नहात नीर कर जुगल उछारत।
जुग अंबुज मिलि मुक्त गुच्छ मनु सुच्छ निकारत। ।
धोअत सुंदरि बदन करन अति ही छबि पावत।
'बारिधि नाते ससि कलंक मनु कमल मिटावत'। ।
सुंदरि ससि मुख नीर मध्य इमि सुंदर सोहत।
कमल बेलि लहलही नवल कुसमन मन मोहत। ।
दीठि जहीं जहं जात रहत तितही ठहराई।
गंगा छबि हरिचन्द्र कछू बरनी नहीं जाई। ।

(कुछ सोचकर) पर हां! जो अपना जी दुखी होता है तो संसार सून जान पड़ता है।

असनं वसनं वासो येषां चैवाविधानत:।
मगधेनसमाकाशी गंगाप्यंगारवाहिनी। । 1

विश्वामित्र को पृथ्वी दान करके जितना चित्त प्रसन्न नहीं हुआ उतना अब बिना दक्षिणा दिये दुखी होता है। हा! कैसे कष्ट की बात है राजपाट धनधाम सब छूटा अब दक्षिणा कहाँ से देंगे! क्या करें! हम सत्य धर्म कभी छोड़ें हीगे नहीं और मुनि ऐसे क्रोधी हैं कि बिना दक्षिणा मिले शाप देने को तैयार होंगे और जो वह शाप न भी देंगे तो क्या? हम ब्राह्मण का ऋण चुकाए बिना शरीर भी तो नहीं त्याग कर सकते। क्या करें? कुबेर को जीतकर धन लावें? पर कोई शस्त्र भी तो नहीं है। तो क्या किसी से मांग कर दें? पर क्षत्रिय का तो धर्म नहीं कि किसी के आगे हाथ पसारे। फिर ऋण काढ़ें? पर देंगे कहां से। हा! देखो काशी में आकर लोग संसार के बंधन से छूटते हैं पर हमको यहाँ भी हाय हाय मची है। हा! पृथ्वी! तू फट क्यों नहीं जाती कि मैं अपना कलंकित मुंह फिर किसी को न दिखाऊं। (आतंक से) पर यह क्या? सूर्यवंश में उत्पन्न होकर हमारे यह कर्म हैं कि ब्राह्मण का ऋण दिए बिना पृथ्वी में समा जाना सोचें। (कुछ सोच कर) हमारी तो इस समय कुछ बुद्धि ही नहीं काम करती। क्या करें? हमें तो संसार सूना देख पड़ता है। (चिंता करके। एक साथ हर्ष से) वाह, अभी तो स्त्री पुत्र और हम तीन-तीन मनुष्य तैयार हैं। क्या हम लोगों के बिकने से सहस्र स्वर्ण

मुद्रा भी न मिलेंगी? तब फिर किस बात का इतना शोच? न जाने बुद्धि इतनी देर तक कहाँ सोई थी। हमने तो पहले ही विश्वामित्र से कहा था,

बेचि देह दारा सुअन होय दास हूं मंद।
रखि हैं निज बच सत्य करि अभिमानी हरिश्चन्द। ।

(नेपथ्य में) तो क्यों नहीं जल्दी अपने को बेचता? क्या हमें और काम नहीं है कि तेरे पीछे-पीछे दक्षिणा के वास्ते लगे फिरें?

ह.: अरे मुनि तो आ पहुँचे। क्या हुआ आज उनसे एक-दो दिन की अवधि और लेंगे।

विश्वामित्र आते हैं

वि.: (आप ही आप) हमारी विद्या सिद्ध हुई भी इसी दुष्ट के कारण फिर बहक गई कुछ इन्द्र के कहने ही पर नहीं हमारा इस पर स्वत: भी क्रोध है पर क्या करें इसके सत्य, धैर्य और विनय के आगे हमारा क्रोध कुछ काम नहीं करता। यद्यपि यह राज्यभ्रष्ट हो चुका पर जब तक इसे सत्यभ्रष्ट न कर लूंगा तब तक मेरा संतोष न होगा (आगे देखकर) अरे यही दुरात्मा (कुछ रुककर) वा महात्मा हरिश्चंद्र है। (प्रगट) क्यों रे आज महीने में कै दिन बाकी है। बोल कब दक्षिणा देगा?

ह.: (घबड़ाकर) अहा! महात्मा कौशिक। भगवान् प्रणाम करता हूं। (दंडवत करता है)।

वि.: हुई प्रणाम, बोल तैं ने दक्षिणा देने का क्या उपाय किया? आज महीना पूरा हुआ अब मैं एक क्षण भर भी न मानूंगा। दे अभी नहीं तो-(शाप के वास्ते कमंडल से जल हाथ में लेते हैं।)

ह.: (पैरों पर गिरकर) भगवन् क्षमा कीजिएय क्षमा कीजिए। यदि आज सूर्यास्त के पहिले न दूं तो जो चाहे कीजिएगा। मैं अभी अपने को बेचकर मुद्रा ले आता हूं।

वि.: (आप ही आप) वाह रे महानुभावता! (प्रगट) अच्छा आज सांझ तक और सही। सांझ को न देगा तो मैं शाप ही न दूंगा बरंच त्रैलोक्य में आज ही विदित कर दूंगा कि हरिश्चन्द्र सत्य भ्रष्ट हुआ। (जाते हैं)

ह.: भला किसी तरह मुनी से प्राण बचे। अब चलें अपना शरीर बेच कर दक्षिणा देने का उपाय सोचें। हा! ऋण भी कैसी बुरी वस्तु है, इस लोक में वही मनुष्य कृतार्थ है, जिस ने ऋण चुका देने को कभी क्रोधी और क्रूर लहनदार की

लाल आँखें नहीं देखी हैं। (आगे चल कर) अरे क्या बाजार में आ गए, अच्छा, (सिर पर तृण रखकर)1 अरे सुनो भाई सेठ, साहूकार, महाजन, दुकानदार, हम किसी कारण से अपने को हजार मोहर पर बेचते हैं किसी को लेना हो तो लो। (इसी तरह कहता हुआ इधर-उधर फिरता है) देखो कोई दिन वह था कि इसी मनुष्य विक्रय को अनुचित जानकर हम दूसरों को दंड देते थे पर आज वही कर्म हम आप करते हैं। दैव बली है। (अरे सुनो भाई इत्यादि कहता हुआ इधर-उधर फिरता है। ऊपर देखकर) क्या कहा? 'क्यों तुम ऐसा दुष्कर कर्म करते हो?' आर्य यह मत पूछो, यह सब कर्म की गति है। (ऊपर देखकर) क्या कहा? 'तुम क्या क्या कर सकते हो, क्या समझते हो और किस तरह रहोगे?' इस का क्या पूछना है। स्वामी जो कहेगा वही करेंगे, समझते सब कुछ हैं पर इस अवसर पर कुछ समझना काम नहीं आता और जैसे स्वामी रक्खेगा वैसे रहेंगे। जब अपने को बेच ही दिया तब इसका क्या विचार है। (ऊपर देखकर) क्या कहा? 'कुछ दाम कम करो।' आर्य हम लोग तो क्षत्रिय हैं, हम दो बात कहां से जाने। जो कुछ ठीक था कह दिया।

(नेपथ्य में से)

आर्यपुत्र! ऐसे समय में हम को छोड़े जाते हो। तुम दास होगे तो मैं स्वाधीन रहके क्या करूंगी। स्त्री को अर्द्धांगिनी कहते हैं, इससे पहिले बायां अंग बेच लो तब दाहिना अंग बेचो।

ह.: (सुनकर बड़े शोक से) हा! रानी की यह दशा इन आँखों से कैसे देखी जायेगी!

(सड़क पर शैव्या और बालक फिरते हुए दिखाई पड़ते हैं)

शै.: कोई महात्मा कृपा करके हम को मोल ले तो बड़ा उपकार हो।

बा.: अम को बी कोई मोल ले लो बला उपकाल ओ।

शै.: (आँखों में आंसू भरकर) पुत्र! चन्द्रकुलभूषण महाराज वीरसेन का नाती और सूर्यकुल की शोभा महाराज हरिश्चन्द्र का पुत्र होकर तू क्यों ऐसे कातर बचन कहता है। मैं अभी जीती हूँ! (रोती है)

बा.: (माँ का अंचल पकड़ के) माँ! तुमको कोई मोल लेगा तो अम को भी मोल लेगा। आं आं मा लोती काए को औ। (कुछ रोना सा मुंह बना के शैव्या का आंचल पकड़ के झूलने लगता है।)

शै.: (आंसू पोंछकर) पुत्र! मेरे भाग्य से पूछ।

ह.: अहह! भाग्य! यह भी तुम्हें देखना था। हा! अयोध्या की प्रजा रोती रह गई हम उनको कुछ धीरज भी न दे आए। उनकी अब कौन गति होगी। हा! यह नहीं कि राज छूटने पर भी छुटकारा हो अब यह देखना पड़ा। हृदय तुम इस चक्रवर्ती की सेवा योग्य बालक और स्त्री को बिकता देखकर टुकड़े-टुकड़े क्यों नहीं हो जाते? (बारंबार लंबी सांसें लेकर आंसू बहाता है)।

शै.: (कोई महात्मा इत्यादि कहती हुई ऊपर देखकर) क्या कहा? 'क्या क्या करोगी?' पर पुरुष से संभाषण और उच्छिष्ट भोजन छोड़कर और सब सेवा करूंगी। (ऊपर देखकर) क्या कहा? 'पर इतने मोल पर कौन लेगा?' आर्य कोई साधु ब्राह्मण महात्मा कृपा करके ले ही लेंगे।

(उपाध्याय और बटुक आते हैं)

उ.: क्यों रे कौंडिन्य! सच ही दासी बिकती है?

ब.: हाँ गुरुजी क्या मैं झूठ कहूंगा। आप ही देख लीजिएगा।

उ.: तो चल, आगे भीड़ हटाता चल। देख धाराप्रवाही भांति कैसे सब काम काजी लोग अधर से उधर फिर रहे हैं। भीड़ के मारे पैर धरने की जगह नहीं है और मारे कोलाहल के कान नहीं दिया जाता।

ब.: (आगे आगे चलता हुआ) हटो भाई हटो (कुछ आगे बढ़कर) गुरुजी यह जहाँ भीड़ लगी है वहीं होगी।

उ.: (शैव्या को देखकर) अरे यही दासी बिकती है?

शै.: (अरे कोई हम को मोल ले इत्यादि कहती और रोती है)

बा.: (माता की भांति तोतली बोली से कहता है)

उ.: पुत्री। कहो तुम कौन-कौन सेवा करोगी?

शै.: पर पुरुष से सम्भाषण और उच्छिष्ट भोजन छोड़कर और जो-जो कहिएगा सब सेवा करूंगी।

उ.: वाह! ठीक है। अच्छा लो यह सुबर्ण। हमारी ब्राह्मणी अग्निहोत्रा के अग्नि की सेवा से घर से काम काज नहीं कर सकती सो तुम सम्हालना।

शै.: (हाथ फैलाकर) महाराज आप ने बड़ा उपकार किया।

उ.: (शैव्या को भली भांति देखकर आप ही आप) आहा! यह निस्संदेह किसी बड़े कुल की है। इसका मुख सहज लज्जा से ऊँचा नहीं होता और दृष्टि बराबर पैर ही पर है। जो बोलती है वह धीरे-धीरे बहुत सम्हाल के बोलती है। हां! इसकी यह गति क्यों हुई! (प्रगट) पुत्री तुम्हारे पति है न?

श.: (राजा की ओर देखती)

ह.: (आप ही आप दुख से) अब नहीं। पति के होते भी ऐसी स्त्री की यह दशा हो।

उ.: (राजा को देखकर आश्चर्य से) अरे यह विशाल नेत्र, प्रशस्त वक्षस्थल और संसार की रक्षा करने के योग्य लंबी-लंबी भुजा वाला कौन मनुष्य है और मुकुट के योग्य सिर पर तृण क्यों रक्खा है? (प्रगट) महात्मा तुम हम को अपने दुख का भागी समझो और कृपापूर्वक अपना सब वृत्तांत कहो।

ह.: भगवान्! और तो विदित करने का अवसर नहीं है इतना ही कह सकता हूँ कि ब्राह्मण के ऋण के कारण यह दशा हुई।

उ.: तो हम से धन लेकर आप शीघ्र ही ऋणमुक्त हूजिए।

ह.: (दोनों कानों पर हाथ रखकर) राम राम! यह तो ब्राह्मण की बृत्ति है। आप से धन लेकर हमारी कौन गति होगी?

उ.: तो पाँच हजार पर आप दोनों में से जो चाहे सो हमारे संग चले।

शै.: (राजा से हाथ जोड़कर) नाथ हमारे आछत आप मत बिकिए, जिस में हम को अपनी आँख से यह न देखना पड़े हमारी इतनी बिनती मानिए। (रोती है)

ह.: (आँसू रोक कर) अच्छा! तुम्ही जाओ। (आप ही आप) हा! यह बज्र हृदय हरिश्चन्द्र ही का है कि अब भी नहीं बिदीर्ण होता।

शै.: (राजा के कपड़े में सोना बांधती हुई) नाथ! अब तो दर्शन भी दुर्लभ होंगे। (रोती हुई उपाध्याय से) आर्य आप क्षण भर क्षमा करें तो मैं आर्यपुत्र का भली भांति दर्शन कर लूं। फिर यह मुख कहाँ और मैं कहाँ।

उ.: हाँ हाँ मैं जाता हूं। कौडिन्य यहाँ है तुम उसके साथ आना। (जाता है)

शै.: (रोकर) नाथ मेरे अपराधों को क्षमा करना।

ह.: (अत्यन्त घबड़ाकर) अरे अरे विधाता तुझे यही करना था। (आप ही आप) हा! पहिले महारानी बनाकर अब दैव ने इसे दासी बनाया। यह भी देखना बदा था। हमारी इस दुर्गति से आज कुलगुरु भगवान सूर्य का भी मुख मलिन हो रहा है। (रोता हुआ प्रगट रानी से) प्रिये सर्वभाव से उपाध्याय को प्रसन्न रखना और सेवा करना।

शै.: (रोकर) नाथ! जो आज्ञा।

बटु.: उपाध्याय जी गए अब चलो जल्दी करो।

ह.: (आँखों में आँसू भर के) देवी (फिर रुक कर अत्यंत सोच में आप ही आप) हाय! अब मैं देवी क्यों कहता हूं अब तो विधाता ने इसे दासी बनाया। (धैर्य से) देवी! उपाध्याय की आराधना भली भांति करना और इनके सब शिष्यों से भी सुहृत भाव रखना, ब्राह्मण के स्त्री की प्रीति पूर्वक सेवा करना, बालक का यथासंभव पालन करना और अपने धर्म और प्राण की रक्षा करना। विशेष हम क्या समझावें जो जो दैव दिखावे उसे धीरज से देखना। (आंसू बहते हैं)

शै.: जो आज्ञा (राजा के पैरों पर गिर के रोती है)।

ह.: (धैर्य पूर्व्वक) प्रिये! देर मत करो बटुक घबड़ा रहे हैं।

श.: (उठ कर रोती और राजा की ओर देखती हुई धीरे-धीरे चलती है)

वा.: (राजा से) पिता माँ कआँ जाती ऐं।

ह.: (धैर्य से आंसू रोककर) जहाँ हमारे भाग्य ने उसे दासी बनाया है।

बा.: (बटुक से) अले मां को मत लेजा। (माँ का आँचल पकड़ के खींचता है)

बटु.: (बालक को ढकेल कर) चल चल देर होती है।

बा.: (ढकेलने से गिर कर रोता हुआ उठकर अत्यंत क्रोध और करुणा से माता पिता की ओर देखता है)

ह.: ब्राह्मण, देवता! बालकों के अपराध से नहीं रुष्ट होना (बालक को उठाकर धूर पोंछ के मुंह चूमता हुआ) पुत्र मुझ चांडाल का मुख इस समय ऐसे क्रोध से क्यों देखता है? ब्राह्मण का क्रोध तो सभी दशा में सहना चाहिए। जाओ माता के संग मुझ भाग्यहीन के साथ रह कर क्या करोगे। (रानी से) प्रिये धैर्य धरो। अपना कुल और जाति स्मरण करो। अब जाओ, देर होती है।

(रानी और बालक रोते हुए बटुक के साथ जाते हैं)

ह.: धन्य हरिश्चन्द्र! तुम्हारे सिवाय और ऐसा कठोर हृदय किस का होगा। संसार में धन और जन छोड़कर लोग स्त्री की रक्षा करते हैं पर तुमने उसका भी त्याग किया।

(विश्वामित्र आते हैं)

ह.: (पैर पर गिर के प्रणाम करता है)

बि.: ला दे दक्षिणा। अब सांझ होने में कुछ देर नहीं है।

ह.: (हाथ जोड़कर) महाराज आधी लीजिए आधी अभी देता हूं। (सोना देता है)

बि.: हम आधी दक्षिणा लेके क्या करें! दे चाहे जहाँ से सब दक्षिणा। (नेपथ्य में) धिक् तपो धिक् व्रतमिदं धिक ज्ञानं धिक् बहुश्रुतम्। नीतवान सियब्रह्मन् हरिश्चंद्रमिमां दशां।

बि.: (बड़े क्रोध से) आ: हमको धिक्कार देने वाला यह कौन दुष्ट है? (ऊपर देखकर) अरे बिश्वेदेवा (क्रोध से जल हाथ में लेकर) अरे क्षत्रिय के पक्षपातियो! तुम अभी विमान से गिरो और क्षत्रिय के कुल में तुम्हारा जन्म हो और वहाँ भी लड़कपन ही में ब्राह्मण के हाथ से मारे जाओ। जल छोड़ते हैं,

(नेपथ्य में हाहाकार के साथ बड़ा शब्द होता है)

(सुनकर और ऊपर देखकर आनंद से) हहहह! अच्छा हुआ! यह देखो किरीट कुंडल बिना मेरे क्रोध से बिमान से छूट कर विश्वेदेवा उलटे हो-हो कर नीचे गिरते हैं और हमको धिक्कार दें।

ह.: (ऊपर देखकर भय से) बाह रे तप का प्रभाव। (आप ही आप) तब तो हरिश्चन्द्र को अब तक शाप नहीं दिया है यही बड़ा अनुग्रह है। (प्रगट) भगवन् यह स्त्री बेचकर आधा धन पाया है सो लें और आधा हम अपने को बेचकर अभी देते हैं। (नेपथ्य में) अरे अब तो नहीं सही जाती।

बि.: हम आधा न लेंगे चाहे जहाँ से अभी सब दे।

ह.: (अरे सुनो भाई सेठ साहूकार इत्यादि पुकारता हुआ घूमता है)

(चांडाल के भेष में धर्म और सत्य आते हैं)

धर्म: (आप ही आप)

हम प्रत्तच्छ हरिरूप जगत हमरे बल चालत।
जल थल नभ थिर मो प्रभाव मरजाद न टालत। ।
हमहीं नर के मीत सदा सांचे हितकारी।
इक हमहीं संग जात तजत जब पितु सुत नारी। ।
सो हम नित थित इक सत्य मैं जाके बल सब जियो।
सोइ सत्य परिच्छन नृपति को आजु भेस हम यह कियो। ।

(आश्चर्य से आप ही आप) सचमुच इस राजर्षि के समान दूसरा आज त्रिभुवन में नहीं है। (आगे बढ़कर प्रत्यक्ष) अरे हरजनवाँ! मोहर का संदूख ले आवा है न?

सत्य.: क चौधरी मोहर ले के का करबो?

धर्म.: तों हमें का काम पूछै से?

(दोनों आगे बढ़ते हुए फिरते हैं)

ह.: (अरे सुनो भाई सेठ साहुकार इत्यादि दो-तीन बेर पुकार के इधर-उधर घूमकर) हाय! कोई नहीं बोलता और कुलगुरु भगवान् सूर्य भी आज हमसे रुष्ट हो कर शीघ्र ही अस्ताचल जाया चाहते हैं। (घबराहट दिखाता है)।

धर्म: (आप ही आप) हाय हाय! इस समय इस महात्मा को बड़ा ही कष्ट है। तो अब चलें आगे। (आगे बढ़ कर) अरे अरे हम तुम को मोल लेंगे। लेव यह पचास सै मोहर लेव।

ह.: (आनन्द से आगे बढ़कर) वाह कृपानिधान! बड़े अवसर पर आए। लाइये। (उसको पहिचान कर) आप मोल लोगे?

धर्म: हाँ हम मोल लेंगे। (सोना देना चाहता है)।

ह.: आप कौन हैं?

धर्म: हम चौधरी डोम सरदार।

अमल हमारा दोनों पार। ।
सब मसान पर हमारा राज।
कफन मांगने का है काज। ।
फूलमती देवी1 के दास।
पूजैं सती मसान निवास। ।
धनतेरस औ रात दिवाली।
बल चढ़ाय के पूजैं काली। ।
सो हम तुमको लेंगे मोल।
देंगे मुहर गांठ के खोल। ।

(मत्त की भांति चेष्टा करता है)

ह.: (बड़े दु:ख से) अहह! बड़ा दारुण व्यसन उपस्थित हुआ है। (विश्वामित्र से) भगवान् मैं पैर पड़ता हूँ, मैं जन्म भर आप का दास होकर रहूंगा, मुझे चांडाल होने से बचाइए। ।

वि.: छि: मूर्ख! भला हम दास लेके क्या करेंगे।

'स्वयंदासास्तपस्विन:'

ह.: (हाथ जोड़कर) जो आज्ञा कीजियेगा हम सब करेंगे।

वि.: सब करेगा न? (ऊपर हाथ उठाकर) कर्म के साक्षी देवता लोग सुनें, यह कहता है कि जो आप कहेंगे मैं सब करूंगा।

ह.: हाँ हाँ जो आप आज्ञा कीजिएगा सब करूंगा।

बि.: तो इसी गाहक के हाथ अपने को बेचकर अभी हमारी शेष दक्षिणा चुका दे।

ह.: जो आज्ञा। (आप ही आप) अब कौन सोच है। (प्रगट धर्म से) तो हम एक नियम पर बिकेंगे।

धर्म: वह कौन?

ह.: भीख असन कम्मल बसन रखिहैं दूर निवास।
जो प्रभु आज्ञा होइ है करि हैं सब ह्वै दास। ।

धर्म: ठीक है लेव सोना (दूर से राजा के आंचल में मोहर देता है)

ह.: (लेकर हर्ष से आप ही आप)
ऋण छूट्यो पूर्‌यो बचन द्विजहु न दीनो शाप।
सत्य पालि चंडालहू होइ आजु मोहि दाप। ।
(प्रगट विश्वामित्र से) भगवन्! लीजिए यह मोहर।

बि.: (मुँह चिढ़ाकर) सचमुच देता है?

ह.: हाँ हाँ यह लीजिए। (मोहर देते हैं)

बि.: (लेकर) स्वस्ति। (आप ही आप) बस अब चलो बहुत परीक्षा हो चुकी। (जाना चाहते हैं)

ह.: (हाथ जोड़कर) भगवन् दक्षिणा देने में देर होने का अपराध क्षमा हुआ न?

बि.: हाँ क्षमा हुआ। अब हम जाते हैं।

ह.: भगवन् प्रणाम करता हूँ।
(बिश्वामित्र आशीर्वाद देकर जाते हैं)

ह.: अब चौधरी जी (लज्जा से रुककर) स्वामी की जो आज्ञा हो वह करें।

धर्म: (मत्त की भांति नाचता हुआ)
जाओ अभी दक्खिनी मसान।
लेओ वहाँ कफ्फन का दान। ।
जो कर तुमको नहीं चुकावै।
सो किरिया करने नहिं पावै। ।
चलो घाट पर करो निवास।
भए आज से मेरे दास। ।

ह.: जो आज्ञा। (जवनिका गिरती है)

सत्यहरिश्चन्द्र का तीसरा अंक समाप्त हुआ।

चौथा अंक

स्थान: दक्षिण, श्मशान, नदी, पीपल का बड़ा पेड़,

चिता, मुरदे, कौए, सियार, कुत्ते, हड्डी, इत्यादि।

कम्मल ओढ़े और एक मोटा लट्ठ लिए हुए राजा हरिश्चन्द्र फिरते दिखाई पड़ते हैं।

ह.: (लम्बी सांस लेकर) हाय! अब जन्म भर यही दुख भोगना पड़ेगा।

जाति दास चंडाल की, घर घनघोर मसान।

कफन खसोटी को करम, सबही एक समान। ।

न जाने विधाता का क्रोध इतने पर भी शांत हुआ कि नहीं। बड़ों ने सच कहा है कि दु:ख से दु:ख जाता है। दक्षिणा का ऋण चुका तो यह कर्म करना पड़ा। हम क्या सोचें। अपनी अनथ प्रजा क्या को, या दीन नातेदारों को या अशरश नौकरों को, या रोती हुई दासियों को, या सूनी अयोध्या को, या दासी बनी महारानी को, या उस अनजान बालक को, या अपने ही इस चंडालपने को। हा! बटुक के धक्के से गिरकर रोहिताश्व ने क्रोधभरी और रानी ने जाती समय करुणाभरी दृष्टि से जो मेरी ओर देखा था वह अब तक नहीं भूलती। (घबड़ा कर) हा देवी! सूर्यकुल की बहू और चंद्रकुल की बेटी होकर तुम बेची गईं और दासी बनीं। हा! तुम अपने जिन सुकुमार हाथों से फूल की माला भी नहीं गुथ सकती थीं उनसे बरतन कैसे मांजोगी! (मोह प्राप्त होने चाहता है पर सम्हल कर) अथवा क्या हुआ? यह तो कोई न कहेगा कि हरिश्चन्द्र ने सत्य छोड़ा।

बेचि देह दारा सुअन होई दासहू मन्द।

राख्यौ निज बच सत्य करि अभिमानी हरिचन्द। ।

(आकाश से पुष्पवृष्टि होती है)

अरे! यह असमय में पुष्पवृष्टि कैसी? कोई पुन्यात्मा का मुरदा आया होगा। तो हम सावधान हो जायं। (लट्ठ कंधे पर रखकर फिरता हुआ) खबरदार खबरदार बिना हम से कहे और बिना हमें आधा कफन दिये कोई संस्कार न करे। (यही कहता हुआ निर्भय मुद्रा से इधर-उधर देखता फिरता है) (नेपथ्य में कोलाहल सुनकर) हाय हाय! कैसा भयंकर समशान है! दूर से मंडल बांध बांध

कर चोंच बाए, डैना फैलाए, कंगालों की तरह मुरदों पर गिद्ध कैसे गिरते हैं और कैसा मांस नोंच नोंच कर आपुस में लड़ते और चिल्लाते हैं। इधर अत्यंत कर्णकटु अमंगल के नगाड़े की भांति एक के शब्द की लाग से दूसरे सियार कैसे रोते हैं। उधर चिराईन फैलाती हुई चट-चट करती चिता कैसी जल रही हैं, जिन में कहीं से मांस के टुकड़े उड़ते हैं, कहीं लोहू बा चरबी बहती है। आग का रंग मांस के संबंध से नीला पीला हो रहा है। ज्वाला घूम घूम कर निकलती है। आग कभी एक साथ धधक उठती है कभी मन्द हो जाती है। धुआँ चारों ओर छा रहा है। (आगे देखकर आदर से) अहा! यह वीभत्स व्यापार भी बड़ाई के योग्य है। शव! तुम धन्य हो कि इन पशुओं के इतने काम आते हो। अएतएव कहा है

'मरनो भलो विदेश को जहाँ न अपुनो कोय।
माटी खायं जनावरा महा महोच्छव होय। ।'

अहा! देखो

सिर पर बैठ्यो काग आंख दोउ खात निकारत।
खींचत जीभहि स्यार अतिहि आनन्द उर धारत। ।
गिद्ध जांघ कहं खोदि खोदि कै मांस उचारत।
स्वान आँगुरिन काटि काटि कै खान बिचारत। ।
बहु चील नोचि लै जात तुच मोद बढ्यौ सबको हियो
मनु ब्रह्मभोज जिजमान कोउ आजु भिखारिन कहँ दियो। ।
सोई मुख सोई उदर सोई कर पद दोय।
भयो आजु कछु और ही परसत जेहि नहिं कोय। ।
हाड़ माँस लाला रकत बसा तुचा सब सोय।
छिन्न भिन्न दुरगन्धमय मरे मनुस के होय। ।
कादर जेहि लखि कै डरत पंडित पावत लाज।
अहो! व्यर्थ संसार को विषय वासना साज। ।

(अहा! शरीर भी कैसी निस्सार वस्तु है।)

हा! मरना भी क्या वस्तु है।
सोई मुख जेहि चन्द बखान्यौ।
सोई अंग जेहि प्रिय करि जान्यौ। ।
सोई भुज जे पिय गर डारे।
सोई भुज जिन रन बिक्रम पारे। ।

सोई पद जिहि सेवक बन्दत।
सोई छबि जेहि देखि आनन्दत। ।
सोई रसना जहं अमृत बानी।
सोई सुनि कै हिय नारि जुड़ानी। ।
सोई हृदय जहं भाव अनेका।
सोई सिर जहं निज बच टेका। ।
सोई छबिमय अंग सुबाए।
आजु जीव बिनु धरनि सुहाए। ।
कहां गई वह सुंदर सोभा।
जीवत जेहि लखि सब मन लोभा। ।
प्रानहुं ते बढ़िजा कहं चाहत।
ता कहं आजु सबै मिलि दाहत। ।
फूल बोझ हू जिन न सहारे।
तिन पै बोझ काठ बहु डारे। ।
सिर पीड़ा जिन की नहिं हेरी।
करत कपाल क्रिया तिनकेरी। ।
छिनहूं जे न भए कहुं न्यारे।
ते हू बन्धुन छोड़ि सिधारे। ।
जो दृग कोर महीप निहारत।
आजु काक तेहि भोज बिचारत। ।
भुज बल जे नहिं भुवन समाए।
ते लखियत मुख कफन छिपाए। ।
नरपति प्रजा भेद बिनु देखे।
गनें काल सब एकहि लेखे। ।
सुभग कुरूप अमृत बिख साने।
आजु सबै इक भाव बिकाने। ।
पुरू दधीच कोऊ अब नाहीं।
रहे नावं हीं ग्रन्थन मांही। ।

अहा! देखो वही सिर जिस पर मंत्र से अभिषेक होता था, कभी नवरत्न का मुकुट रक्खा जाता था, जिसमें इतना अभिमान था कि इन्द्र को भी तुच्छ

गिनता था और जिसमें बड़े-बड़े राज जीतने के मनोरथ भरे थे, आज पिशाचों का गेंद बना है और लोग उसे पैर से छूने में भी घिन करते हैं। (आगे देखकर) अरे यह स्मशान देवी हैं। अहा कात्यायनी को भी कैसा वीभत्स उपचार प्यारा है। यह देखो डोम लोगों ने सूखे गले सड़े फूलों की माला गंगा में से पकड़ पकड़ कर देवी को पहिना दी है और कफन की ध्वजा लगा दी है। मरे बैल और भैसों के गले के घंटे पीपल की डार में लटक रहे हैं जिन में लोलक की जगह नली की हड्डी लगी है। घंट के पानी से चारों ओर से देवी का अभिषेक होता है और पेड़ के खंभे में लोहू के थापे लगे हैं। नीचे जो उतारों की बलि दी गई है उसके खाने को कुत्ते और सियार लड़ लड़कर कोलाहल मचा रहे हैं। (हाथ जोड़कर) 'भगवति! चंडि! प्रेते! प्रेत विमाने! लसत्प्रेते। प्रेतास्थि रौद्ररूपे! प्रेताशनि। भैरवि! नमस्ते'। 1

(नेपथ्य में) राजन् हम केवल चंडालों के प्रणाम के योग्य हैं। तुम्हारे प्रणाम से हमें लज्जा आती है। मांगो, क्या वर मांगते हो।

ह.: (सुनकर आश्चर्य से) भगवति! यदि आप प्रसन्न हैं तो हमारे स्वामी का कल्याण कीजिए। (नेपथ्य में) साधु महाराज हरिश्चन्द्र साधु!

ह.: (ऊपर देखकर) अहा! स्थिरता किसी को भी नहीं है। जो सूर्य उदय होते ही पद्मिनी बल्लभ और लौकिक वैदिक दोनों कर्म का प्रवर्त्तक था, जो दोपहर तक अपना प्रचंड प्रताप क्षण-क्षण बढ़ाता गया, जो गगनांगन का दीपक और कालसर्प का शिखामणि था वह इस समय परकटे गिद्ध की भांति अपना सब तेज गंवाकर देखो समुद्र में गिरा चाहता है।

अथवा

सांझ सोई पट लाल कसे कटि सूरज खप्पर हाथ लह्यो है। पच्छिन के बहु सब्दन के मिस जीअ उचाटन मंत्र कह्यो है। मद्य भरी नर खोपरी सो ससि को नव बिम्बहू धाई गह्यो है। दै बलि जीव पसू यह मत्त हवै काल कपालिक नाचि रह्यो है।

सूरज धूम बिना की चिता सोई अंत में लै जल माहिं बहाई। बोलैं घने तरु बैठि बिहंगम रोअत सो मनु लोग लोगाई। धूम अंधार, कपाल निसाकर, हाड़ नछत्र, लहू सी ललाई। आनंद हेतु निसाचर के यह काल समान सी सांझ बनाई।

अहा! यह चारों ओर से पक्षी लोग कैसा शब्द करते हुए अपने-अपने घोसलों की ओर चले जाते हैं। वर्षा से नदी का भयंकर प्रवाह, सांझ होने से

स्मशान के पीपल पर कौओं का एक संग अमंगल शब्द से कांव कांव करना और रात के आगम से एक सन्नाटे का समय चित्त में कैसी उदासी और नय उत्पन्न करता है। अंधकार बढ़ता ही जाता है। वर्षा के कारण इन स्मशानवासी मंडूकों का टर्र टर्र करना भी कैसा डरावना मालूम होता है।

रुरुआ चहुंदिसि ररत डरत सुनि कै नर नारी।
फटफटाइ दोउ पंख उलुकहु रटत पुकारी।
अन्धकार बस गिरत काक अरु चील करत रव।
गिद्ध गरुड़ हड़गिल्ल भजत लखिविकट भयद दव।
रोअत सियार गरजत नदी स्वान भू कि डरपावई।
संग दादुर झींगुर रुदन धुनि मिलि खर तुमुल मचावई।

इस समय ये चिता भी कैसी भयंकर मालूम पड़ती हैं। किसी का सिर चिता के नीचे लटक रहा है, कहीं आंच से हाथ पैर जलकर गिर पड़े है, कहीं शरीर आधा जला है, कहीं बिल्कुल कच्चा है, किसी को वैसे ही पानी में बहा दिया है, किसी को किनारे छोड़ दिया है, किसी का मुंह जल जाने से दांत निकला हुआ भयंकर हो रहा है और कोई दहकती आग में ऐसा जल गया है कि कहीं पता भी नहीं है। बाहरे शरीर! तेरी क्या क्या गति होती है!!! सचमुच मरने पर इस शरीर को चटपट जला ही देना योग्य है, क्योंकि ऐसे रूप और गुण जिस शरीर में थे उसको कीड़ों या मछलियों से नुचवाना और सड़ा कर दुर्गंधमय करना बहुत ही बुरा है। न कुछ शेष रहेगा न दुर्गति होगी। हाय! चलो आगे चलें। (खबरदार इत्यादि कहता हुआ इधर-उधर घूमता है)1 (कौतुक से देखकर) पिशाचों का क्रीड़ा कुतूहल भी देखने के योग्य है। अहा! यह कैसे काले-काले झाड़ई से सिर के बाल खड़े किये लम्बे-लम्बे हाथ पैर बिकराल दांत लम्बी जीभ निकाले इधर-उधर दौड़ते और परस्पर किलकारी मारते हैं मानों भयानक रस की सेना मूर्तिमान होकर यहाँ स्वच्छंद विहार कर रही है। हाय हाय! इनका खेल और सहज व्योहार भी कैसा भयंकर है। कोई कटाकट हड्डी चबा रहा है, कोई खोपड़ियों में लोहू भर भर के पीता है, कोई सिर का गेंद बनाकर खेलता है, कोई अंतड़ी निकालकर गले में डाले है और चंदन की भांति चरबी और लोहू शरीर में पोत रहा है, एक-दूसरे से माँस छीनकर ले भागता है, एक जलता मांस मारे तृष्णा के मुंह में रख लेता है पर जब गरम मालूम पड़ता है तो थू-थू करके थूक देता है और दूसरा उसी को फिर झट से खा जाता है। हा! देखो यह चुड़ैल

एक स्त्री की नाक नथ समेत नोच लाई है, जिसे सत्य हरिश्चंद्र के परवती संस्करणों में बढ़ाया गया अंश,

(पिशाच और डाकिणी गण परस्पर आमोद करते और गाते बजाते आते हैं।)

पि. और डा.: हैं भूत प्रेत हम, डाइन हैं छमाछम,
हम सेवैं मसान, शिव को भजैं, बोलैं बम बम बम।

पि.: हम कड़ कड़ कड़ कड़ कड़ कड़ हड्डी को तोड़ेंगे।
हम भड़ भड़ धड़ धड़ पड़ पड़ सिर सबका फोड़ेंगे।

डा.: हम घुट घुट घुट घुट घुट घुट लोहू पिलावेंगी।
हम चट चट चट चट चट चट ताली बाजवेंगी। ।

सब: हम नाचें मिलकर थेई थेई थेई थेई कूदें धम् धम् धम्
हैं भूत प्रेत हम, डाइन हैं छमा छम। ।

पि.: हम काट काट कर सिर को गेंदा उछालेंगे।
हम खींच खींच कर चर्बी पंशाखा बालेंगे। ।

डा.: हम माँग में लाल लाल लोहू का सिंदूर लगावेंगी।
हम नस के तागे चमड़े का लहँगा बनावेंगी। ।

सब: हम धज से सज के बज के चलेंगे चमकेंगे चम चम चम।

पि.: लोहू का मुँह से फर्र फर्र फुहारा छोड़ेंगे।
माला गले पहिरने को अँतड़ी को जोड़ेगें। ।

डा.: हम लाद के औंधे मुरदे चौकी बनावैंगी।
कफन बिछा के लड़कों को उस पर सुलावेंगी। ।

सब: हम सुख से गावेंगे ढोल बजावेंगे ढम ढम ढम ढम ढम।

(वैसे ही कूदते हुए एक ओर चले जाते हैं।)

देखने को चारों ओर से सब भूतने एकत्र हो रहे हैं और सभों को इसका बड़ा कौतुक हो गया है। हंसी में परस्पर लोहू का कुल्ला करते हैं और जलती लकड़ी और मुरदों के अंगों में लड़ते हैं और उनको ले ले कर नाचते हैं। यदि तनिक भी क्रोध में आते हैं तो स्मशान के कुत्तों को पकड़-पकड़ कर खा जाते हैं। अहा! भगवान भूतनाथ ने बड़े कठिन स्थान पर योग साधना की है। (खबरदार इत्यादि कहता हुआ इधर-उधर फिरता है) (ऊपर देखकर) आधी रात हो गई, वर्षा के कारण अंधेरी बहुत ही छा रही है, हाथ से नाक नहीं सूझता। चांडाल कुल की भांत स्मशान पर तम का भी आज राज हो रहा है। (स्मरण करके)

हा। इस दु:ख की दशा में भी हमसे प्रिया अलग पड़ी है। कैसी भी हीन अवस्था हो पर अपना प्यारा जो पास रहे तो कुछ कष्ट नहीं मालूम पड़ता। सच है- "टूट टाट घर टपकत खटियौ टूट। पिय कै बांह उसिसवां सुख कै लुट"। बिधना ने इस दु:ख पर भी बियोग दिया हा! यह वर्षा और यह दु:ख! हरिश्चन्द्र का तो ऐसा कठिन कलेजा है कि सब सहेगा पर जिस ने सपने में भी दुख नहीं देखा वह महारानी किस दशा में होगी। हा देवि! धीरज धरो धीरज धरो। तुम ने ऐसे ही भाग्यहीन से स्नेह किया है, जिसके साथ सदा दुख ही दुख है। (ऊपर देखकर) अरे पानी बरसने लगा! (घोघी भली भांति ओढ़ कर) हमको तो यह वर्षा और स्मशान दोनों एकही से दिखाई पड़ते हैं। देखो।

चपला की चमक चहूंघा सों लगाई चिता चिनगी चिलक पटबीजना चलायो है। हेती बग माल स्याम बादर सु भूमिकारी बीर बधूबूंद भव लपटायो है। हरीचन्द नीर धार आंसू सी परत जहाँ दादुर को सोर रोर दुखिन मचायो है। दाहन बियोगी दुखियान को मरे हूं यह देखो पापी पाव मसान बनि आयो है।

(कुछ देर तक चुप रह कर) कौन है? (खबरदार इत्यादि कहता हुआ इधर-उधर फिर कर)

इन्द्रकालहू सरिस जो आयसु लांघै कोय।
यह प्रचंड भुज दंड मम प्रति भट ताको होय। ।

अरे कोई नहीं बोलता। (कुछ आगे बढ़कर) कौन है?

(नेपथ्य में) हम हैं।

ह.: अरे हमारी बात का उत्तर कौन देता है? चले जहाँ से आवाज आई है वहाँ चल कर देखें। (आगे बढ़ कर नेपथ्य की ओर देख कर) अरे यह कौन है?

चिता भस्म सब अंग लगाए।
अस्थि अभूषन बिबिध बनाए। ।
हाथ मसान कपाल जगावत।
को यह चल्यो रुद्र सम आवत। ।

(कापालिक के वेष में धर्म आता है1)

धर्म.: अरे हम हैं।

वृत्ति अयाचित आत्म रति करि जग के सुख त्याग।
फिरहिं मसान-मसान हम धारि अनन्द बिराग। ।

आगे बढ़कर महाराज हरिश्चन्द्र को देखकर आप ही आप,

हम प्रतच्छ हरि रूप जगत हमरे बल चालत।
जल थल नभ थिर मम प्रभाव मरजाद न टालत। ।
हम हीं नर के मीत सदा सांचे हितकारी।
हम ही इक संग जात तजत जब पितु सुत नारी। ।
सो हम नित थित इक सत्य में जाके बल सब जग जियो।
सोइ सत्य परिच्छन नृपति को आजु भेष हम यह कियो। ।

कुछ सोचकर, राजर्षि हरिश्चन्द्र की दु:ख परंपरा अत्यंत शोचनीय और इनके चरित्र अत्यन्त आश्चर्य के हैं! अथवा महात्माओं का यह स्वभाव ही होता है।

सहत बिविध दुख मरि मिटत भोगत लाखन सोग।
पै निज सतय न छाड़हीं जे जग सांचे लोग। ।
बरु सूरज पच्छिम उगैं विन्ध्य तरै जल मांहिं।
सत्य बीर जन पै कबहुं निज बच टारत नाहिं। ।

अथवा उनके मन इतने बड़े हैं कि दुख को दुख, सुख को दुख गिनते ही नहीं। चलें उनके पास चलें। (आगे बढ़कर और देखकर) अरे यही महात्मा हरिश्चन्द्र हैं? (प्रगट) महाराज! कल्याण हो।

ह.: (प्रणाम करके) आइये योगिराज।

ध.: महाराज! हम अर्थी हैं।

ह.: (लज्जा और विकलता नाट्य करता है)

ध.: महाराज आप लज्जा मत कीजिए। हम लोग योग बल से सब कुछ जानते हैं। आप इस दशा पर भी हमारा अर्थ पूर्ण करने को बहुत हैं। चन्द्रमा राहु से ग्रसा रहता है तब भी दान दिलवा कर भिक्षुओं का कल्याण करता है।

ह.: आज्ञा। हमारे योग्य जो कुछ हो आज्ञा कीजिए।

ध.: अंजन गुटिका पादुका धातुभेद बैताल। वज्र रसायन जोगिनी मोहि सिद्ध इहि काल1।

ह.: तो मुझे आज्ञा हो वह करूं।

ध.: आज्ञा यही है कि यह सब मुझे सिद्ध हो गए हैं पर विघ्न इस में बाधक होते हैं सो आप विघ्नों का निवारण कर दीजिए।

ह.: आप जानते ही हैं कि मैं पराया दास हूँ, इससे जिनमें मेरा धर्म न जाय वह मैं करने को तैयार हूं।

ध.: (आप ही आप) राजन्, जिस दिन तुम्हारा धर्म जाएगा उस दिन पृथ्वी किसके बल से ठहरेगी (प्रत्यक्ष) महाराज इसमें धर्म न जायगा क्योंकि स्वामी की आज्ञा तो आप उल्लंघन करते ही नहीं। सिद्धि का आकर इसी स्मशान के निकट ही है और मैं अब पुरश्चरण करने जाता हूँ, आप बिघ्नों का निषेध कर दीजिए।

(जाता है)

ह.: (ललकार कर) हटो रे हटो विघ्नो चारों ओर से तुम्हारा प्रचार हम ने रोक दिया।

(नेपथ्य में) महाराजाधिराज जो आज्ञा।

आप से सत्य वीर की आज्ञा कौन लांघ सकता है।

खुल्यौ द्वारा कल्यान को सिद्ध जोग तप आज।

निधि सिधि विद्या सब करहिं अपुने मन को काज। ।

ह.: (हर्ष से) बड़े आनन्द की बात है कि विघ्नों ने हमारा कहना मान लिया। (विमान पर बैठी हुई तीनों महाविद्या आती हैं)

म. वि.: महाराज हरिश्चन्द्र! बधाई है। हमीं लोगों को सिद्ध करने को विश्वामित्र ने बड़ा परिश्रम किया था तब देवताओं ने माया से आपको स्वप्न में हमारा रोना सुनाकर हमारा प्राण बचाया।

ह.: (आप ही आप) अरे यही सृष्टि की उत्पन्न, पालन और नाश करने वाली महाविद्या हैं जिन्हें विश्वामित्र भी न सिद्ध कर सके। (प्रगट हाथ जोड़कर) त्रिलोकविजयिनी महाविद्याओं को नमस्कार है।

म. वि.: महाराज हम लोग आप के बस में हैं। हमारा ग्रहण कीजिए।

ह.: देवियो! यदि हम पर प्रसन्न हो तो विश्वामित्र मुनि का वशवर्त्तिनी हो क्योंकि उन्होंने आप लोगों के वास्ते बड़ा परिश्रम किया है।

म. वि.: (परस्पर आश्चर्य से देखकर) धन्य महाराज धन्य! जो आज्ञा।

(जाती हैं)

धर्म एक बैताल के सिर पर पिटारा रखवाए हुए आता है।

ध.: महाराज का कल्याण हो। आप की कृपा से महानिधान सिद्ध हुआ। आपको बधाई है अब लीजिए इस रसेन्द्र को।

याही के परभाव सों अमरदेव सम होइ।

जोगी जन बिहरहिं सदा मेरु शिखर भय खोइ। ।

ह.: (प्रणाम करके) महाराज दास धर्म के यह विरुद्ध है। इस समय स्वामी से कहे बिना मेरा कुछ भी लेना स्वामी को धोखा देना है।

ध.: (आश्चर्य से आप ही आप) वाह रे महानुभावता! (प्रगट) तो इसके स्वर्ण बना कर आप अपना दास्य छुड़ा लें।

ह.: यह ठीक है पर मैंने तो बिनती किया न कि जब मैं दूसरे का दास हो चुका तो इस अवस्था में मुझे जो कुछ मिले सब स्वामी का है। क्योंकि मैं तो देह के साथ ही अपना सत्व मात्र बेच चुका इससे आप मेरे बदले कृपा करके मेरे स्वामी ही को यह रसेन्द्र दीजिए।

ध.: (आश्चर्य से आप ही आप) धन्य हरिश्चन्द्र! धन्य तुम्हारा धैर्य! धन्य तुम्हारा विवेक! और धन्य तुम्हारी महानुभावता! या

चलै मेरु बरु प्रलय जल पवन झकोरन पाय।
पै बीरन कें मन कबहूं चलहिं नाहिं ललचाय। ।

तो हमें भी इसमें कौन हठ है। (प्रत्यक्ष) बैताल! जाओ, जो महाराज की आज्ञा है, वह करो।

बै.: जो रावल जी की आज्ञा। (जाता है)

ध.: महाराज ब्राह्म मुहूर्त निकट आया अब हम को भी आज्ञा हो।

ह.: जोगिराज! हम को भूल न जाइएगा, कभी-कभी स्मरण कीजिएगा।

ध.: महाराज! बड़े बड़े देवता आप का स्मरण करते हैं और करेंगे मैं क्या हूँ। (जाता है)

ह.: क्या रात बीत गई! आज तो कोई भी मुरदा नया नहीं आया। रात के साथ ही स्मशान भी शांत हो चला। भगवान् नित्य ही ऐसा करें।

(नेपथ्य में घंटानूपुरादि का शब्द सुनकर) अरे यह बड़ा कोलाहल कैसा हुआ?

(विमान पर अष्ट महासिद्धि नव निधि और बारहो प्रयोग आदि देवता। आते हैं)।

ह.: (आश्चर्य से) अरे यह कौन देवता बड़े प्रसन्न होकर स्मशान पर एकत्र हो रहे हैं।

दे.: महाराज हरिश्चन्द्र की जय हो। आप के अनुग्रह से हम लोग विघ्नों से छूटकर स्वतंत्र हो गए। अब हम आपके वश में हैं, जो आज्ञा हो करें। हम लोग अष्ट महा सिद्धि नव निधि और बारह प्रयोग सब आप के हाथ में है।

ह.: (प्रणाम करके) यदि हम पर आप लोग प्रसन्न हो तो महासिद्धि योगियों के, निधि सज्जन के और प्रयोग साधकों के पास जाओ।

दे.: (आश्चर्य से) धन्य राजर्षि हरिश्चन्द्र! तुम्हारे बिना और ऐसा कौन होगा जो घर आई लक्ष्मी का त्याग करे। हमीं लोगों की सिद्धि को बड़े-बड़े योगी मुनि पच मरते हैं पर तुमने तृण की भांति हमारा त्याग करके जगत का कल्याण किया।

ह.: आप लोग मेरे सिर आँखों पर हैं पर मैं क्या करूं, क्योंकि मैं पराधीन हूं। एक बात और भी निवेदन है। वह यह कि छह अच्छे प्रयोग की तो हमारे समय में सद्य: सिद्धि होय पर बुरे प्रयोगों की सिद्धि विलंब से हो।

दे.: महाराज! जो आज्ञा। हम लोग जाते हैं। आज आप के सत्य ने शिव जी के कीलन को भी शिथिल कर दिया। महाराज का कल्याण हो।

(जाते हैं)

(नेपथ्य में इस भांति मानो राजा हरिश्चन्द्र नहीं सुनता)

(एक स्वर से) तो अब अप्सरा को भेजें?

(दूसरे स्वर से) छि: मूर्ख! जिस को अष्ट सिद्धि नव निधियों ने नहीं डिगाया उसको अप्सरा क्या डिगावेंगी?

(एक स्वर से) तो अब अन्तिम उपाय किया जाय।

(दूसरे स्वर से) हाँ तक्षक को आज्ञा दे। अब और कोई उपाय नहीं है।

ह.: अहा अरुण का उदय हुआ चाहता है। पूर्व दिशा ने अपना मुंह लाल किया। (साँस ले कर) "वा चकई को भयो चित चीतो चियोति चहूँ दिसि चाय सों नाची। ह्वै गई छीन कलाधर की कला जामिनी जोति मनो जम जांची। बोलत बैरी बिहंगम देव संजोगिन की भई संपत्ति काची। लोहू पियो जो बियोगिन को सो कियो मुख लाल पिशाचिन प्राची। " हा! प्रिये इन बरसातों की रात को तुम रो रो के बिताती होगी! हा! वत्स रोहिताश्व, भला हम लोगों ने तो अपना शरीर बेचा तब दास हुए तुम बिना बिके ही क्यों दास बन गए!

जेहि सहसन परिचायिका राखत हाथहि हाथ। सो तुम लोटत धूर मैं दास बालकन साथ! जाकी आयसु जग नृपति सुनतहि धारत सीस! तेहि द्विज बटु अज्ञा करत अहह कठिन अति इस। बिनु तन बेचे बिनु जग ज्ञान विवेक। दैव सर्प दंशित भए भोगत कष्ट अनेक।

(घबड़ा कर) नारायण! नारायण! मेरे मुख से क्या निकल गया। देवता उस की रक्षा करें। (बांई आँख का फड़कना दिखाकर) इसी समय में यह महा

अपशकुन क्यों हुआ? (दाहिनी भुजा का फड़कना दिखाकर) अरे और साथ ही यह मंगल शकुन भी! न जाने क्या होनहार है, वा अब क्या होनहार है, जो होना था सो हो चुका। अब इससे बढ़कर और कौन दशा होगी? अब केवल मरण मात्र बाकी है। इच्छा तो यही है कि सत्य छूटने और दीन होने के पहिले ही शरीर छूटे क्योंकि इस दुष्ट चित्त का क्या ठिकाना है पर बश क्या है।

(नेपथ्य में)

पुत्र हरिश्चन्द्र सावधान। यही अन्तिम परीक्षा है। तुम्हारे पुरखा इक्ष्वाकु से लेकर त्रिशंकु पर्यन्त आकाश में नेत्र भरे खड़े एक टक तुम्हारा मुख देख रहे हैं। आज तक इस वंश में ऐसा कठिन दु:ख किसी को नहीं हुआ था। ऐसा न हो कि इन का सिर नीचा हो। अपने धैर्य का स्मरण करो।

ह.: (घबड़ा कर ऊपर देखकर) अरे! यह कौन है? कुलगुरु भगवान सूर्य अपना तेज समेटे मुझे अनुशासन कर रहे हैं। (ऊपर पित: मैं सावधान हूं सब दुखों को फूल की माला की भांति ग्रहण करूंगा।) (नेपथ्य में रोने की आवाज सुन पड़ती है)

ह.: अरे अब सवेरा होने के समय मुरदा आया! अथवा चांडाल कुल का सदा कल्याण हो हमें इस से क्या। (खबरदार इत्यादि कहता हुआ फिरता है)

(नेपथ्य में)

हाय! कैसी भई! हाय बेटा हमें रोती छोड़ के कहाँ चले गए! हाय! हाय रे!

ह.: अहह! किसी दीन स्त्री का शब्द है और शोक भी इस पुत्र का है। हाय हाय! हम को भी भाग्य ने क्या ही निर्दय और वीभत्स कर्म सौंपा है! इससे भी वस्त्र मांगना पड़ेगा।

(रोती हुई शैव्या रोहिताश्व का मुरदा लिये आती है)

शै.: (रोती हुई) हाय! बेटा जब बाप ने छोड़ दिया तब तुम भी छोड़ चले! हाय हमारी बिपत और बुढ़ौती की ओर भी तुम ने न देखा! हाय! हाय रे! अब हमारी कौन गति होगी! (रोती है)

ह.: हाय हाय! इसके पति ने भी इसको छोड़ दिया है। हा! इस तपस्विनी को निष्करुण विधि ने बड़ा ही दुख दिया है।

शै.: (रोती हुई) हाय बेटा! अरे आज मुझे किसने लूट लिया! हाय मेरी बोलती चिड़िया कहाँ उड़ गई! हाय अब मैं किसका मुंह देख के जीऊंगी! हाय मेरी अंधी की लकड़ी कौन छीन ले गया! हाय मेरा ऐसा सुंदर खिलौना किसने

तोड़ डाला! अरे बेटा तै तो मरे पर भी सुंदर लगता है! हाय रे! अरे बोलता क्यों नहीं! बेटा जल्दी बोल, देख माँ कब की पुकार रही है! बच्चा तू तो एक दफे पुकारने में दौड़कर गले से लिपट जाता था, आज क्यों नहीं बोलता!

(शव को बारंबार गले लगाती, देखती और चूमती है)

ह.: हाय! हाय! इस दुखिया के पास तो खड़ा नहीं हुआ जाता।

शै.: पागल की भांति यह क्या हो रहा है। बेटा कहाँ गए हौ आओ जल्दी! अरे अकेले इस मसान में मुझे डर लगती है। यहाँ मुझ को कौन ले आया है रे! बेटा जल्दी आओ। क्या कहते हौ, मैं गुरू को फूल लेने गया था वहाँ काले सांप ने मुझे काट लिया! हाय हाय रे! अरे कहाँ काट लिया? अरे कोई दौड़ के किसी गुनी को बुलाओ जो जिलावै बच्चे को। अरे वह साँप कहाँ गया! हम को क्यों नहीं काटता? काट रे काट, क्या उस सुकुंआर बच्चे ही पर बल दिखाना था? हमें काट। हाय हम को नहीं काटता। अरे हिंयां तो कोई सांप वांप नहीं है, मेरे लाल झूठ बोलना कब से सीखे? हाय हाय मैं इतना पुकारती हूँ और तुम खेलना नहीं छोड़ते? बेटा गुरु जी पुकार रहे हैं उनके होम की बेला निकली जाती है। देखो बड़ी देर से वह तुम्हारे आसरे बैठै हैं। दो जल्दी इनको दूब और बेलपत्र। हाय हमने इतना पुकारा तुम कुछ नहीं बोलते! जोर से, बेटा सांझ भई, सब विद्यार्थी लोग घर फिर आए, तुम अब तक क्यों नहीं आए? आगे शव देखकर, हाय हाय रे! अरे मेरे लाल को सांप ने सचमुच डंस लिया! हाय लाल! हाय मेरे आँखों के उजियाले को कौन ले गया! हाय! मेरा बोलता हुआ सुग्गा कहाँ उड़ गया! बेटा अभी तो बोल रहे थे अभी क्या हो गया! हाय मेरा बसा घर आज किसने उजाड़ दिया! हाय मेरी कोख में किस ने आग लगा दी! हाय मेरा कलेजा किसने निकाल लिया! चिल्ला-चिल्ला कर रोती है, हाय लाल कहां गए! अरे अब मैं किसका मुंह देख के जीऊँगी रे! हाय अब मां कहके मुझको कौन पुकारेगा! अरे आज किस बैरी की छाती ठंडी भई रे! अरे तेरे सुकुंआर अंगों पर भी काल को तनिक दया न आई! अरे बेटा आंख खोलो! हाय मैं सब विपत तुम्हारा ही मुंह देखकर सहती थी तो अब कैसे जीती रहूंगी! अरे लाल एक बेर तो बोलो! (रोती है)

ह.: न जाने क्यों इसके रोने पर मेरा कलेजा फटा जाता है।

शै.: (रोती हुई) हा नाथ! अरे अपने गोद के खेलाए बच्चे की यह दशा क्यों नहीं देखते! हाय! अरे तुम ने तो इसको हमें सौंपा था कि इसे अच्छी तरह

पालना सो हमने इसकी यह दशा कर दी! हाय! अरे ऐसे समय में भी आकर नहीं सहाय होते! भला एक बेर लड़के का मुंह तो देख जाओ! अरे मैं किस के भरोसे अब जीऊंगी?

ह.: हाय हाय! इसकी बातों से तो प्राण मुंह को चले आते हैं और मालूम होता है कि संसार उलटा जाता है। यहां से हट चलें (कुछ दूर हटकर उसकी ओर देखता खड़ा हो जाता है)।

शै.: (रोती हुई) हाय! यह बिपत का समुद्र कहां से उमड़ पड़ा! अरे छलिया मुझे छलकर कहां भाग गया! देख कर, अरे आयुस की रेखा तो इतनी लम्बी है फिर अभी से यह बज्र कहां से टूट पड़ा! अरे ऐसा सुंदर मुँह, बड़ी-बड़ी आंख, लम्बी-लम्बी भुजा, चौड़ी छाती, गुलाब सा रंग! हाय मरने के तुझ में कौन से लच्छन थे जो भगवान ने तुझे मार डाला! हाय लाल! अरे बड़े-बड़े जोतसी गुनी लोग तो कहते थे कि तुम्हारा बेटा बड़ा प्रतापी चक्रवर्ती राजा होगा, बहुत दिन जीयेगा, सो सब झूठ निकला! हाय! पोथी, पत्र, पूजा, पाठ, दान, जप होम, कुछ भी काम न आया! हाय तुम्हारे बाप का कठिन पुत्र भी तुम्हारा सहाय न भया और तुम चल बसे! हाय!

ह.: अरे इन बातों से तो मुझे बड़ी शंका होती है (शव को भली भांति देखकर) अरे इस लड़के में तो सब लक्षण चक्रवर्ती के से दिखाई पड़ते हैं। हाय! न जाने किस बड़े कुल का दीपक आज इस ने बुझाया है और न जाने किस नगर को आज इसने अनाथ किया है। हाय! रोहिताश्व भी इतना बड़ा भया होगा (बड़े सोच से) हाय हाय! मेरे मुंह से क्या अमंगल निकल गया। नारायण (सोचता है)

शै.: भगवान विश्वामित्र! आज तुम्हारे सब मनोरथ पूरे भए। हाय!

ह.: (घबड़ाकर) हाय हाय यह क्या? (भली भांत देखकर रोता हुआ) हाय अब तक मैं संदेह ही में पड़ा हूं? अरे मेरी आँखें कहां गई थीं जिन ने अब तक पुत्र रोहिताश्व को न पहिचाना और कान कहां गये थे जिन ने अब तक महारानी की बोली न सुनी! हा पुत्र! हा लाल! हा सूर्यवंश के अंकुर! हा हरिश्चन्द्र की विपत्ति के एक मात्र अवलम्ब! हाय! तुम ऐसे कठिन समय में दुखिया माँ को छोड़कर कहाँ गए। अरे तुम्हारे कोमल अंगों को क्या हो गया! तुम ने क्या खेला, क्या खाया, क्या सुख भोगा, कि अभी से चल बसे। पुत्र स्वर्ग ऐसा ही प्यारा था तो मुझ से कहते, मैं बाहुबल से तुम को इसी शरीर से स्वर्ग

पहुँचा देता। अथवा अब इस अभिमान से क्या? भगवान इसी अभिमान का फल यह सब दे रहा है। हाय पुत्र! (रोता है)

आह! मुझसे बढ़कर और कौन मन्दभाग्य होगा! राज्य गया, धन, जन, कुटुम्ब सब छूटा, उस पर भी यह दारुण पुत्रशोक उपस्थित हुआ। भला अब मैं रानी को क्या मुंह दिखाऊं। निस्संदेह मुझसे अधिक अभागा और कौन होगा। न जाने हमारे जन्म के पाप उदय हुए हैं, जो कुछ हमने आज तक किया वह यदि पुण्य होता तो हमें यह दुख न देखना पड़ता। हमारा धर्म का अभिमान सब झूठा था, क्योंकि कलियुग नहीं है कि अच्छा करते बुरा फल मिले, निस्संदेह मैं महा अभागा और बड़ा पापी हूं। (रंगभूमि की पृथ्वी हिलती है और नेपथ्य में शब्द होता है) क्या प्रलयकाल आ गया? नहीं। यह बड़ा भारी असगुन हुआ है। इसका फल कुछ अच्छा नहीं, वा अब बुरा होना ही क्या बाकी रह गया है, जो होगा। हा। न जाने किस अपराध से दैव इतना रूठा है (रोता है) हा सूर्यकुल आलवालप्रवाल। हा हरिश्चन्द्र हृदयानन्दन! हा शैव्याबलम्ब! हा वत्सरोहिताश्व! हा मातृ पितृ विपत्ति सहचर! तुम हम लोगों को इस दशा में छोड़कर कहां गए! आज हम सचमुच चांडाल हुए। लोग कहेंगे कि इस ने न जाने कौन दुष्कर्म किया था कि पुत्रशोक देखा। हाय हम संसार को क्या मुंह दिखावेंगे। (रोता है) वा संसार में इस बात के प्रगट होने के पहले ही हम भी प्राण त्याग करें। हा निर्लज्ज प्राण तुम अब भी क्यों नहीं निकलते। हा बज्र हृदय इतने पर भी तू क्यों नहीं फटता। नेत्रो, अब और क्या देखना बाकी है कि तुम अब तक खुले हो। या इस व्यर्थ प्रलाप का फल ही क्या है समय बीता जाता है, इसके पूर्व कि किसी से साम्हना हो प्राण त्याग करना ही उत्तम बात है (पेड़ के पास जाकर फांसी देने के योग्य डाल खोजकर उसमें दुपट्टा बांधता है) धर्म! मैंने अपने जान सब अच्छा ही किया परंतु न जाने किस कारण मेरा सब आचरण तुम्हारे विरुद्ध पड़ा सो मुझे क्षमा करना। (दुपट्टे की फांसी गले में लगाना चाहता है कि एक साथ चौंक कर) गोविन्द गोविन्द! यह मैंने क्या अनर्थ अधर्म विचारा। भला मुझ दास को अपने शरीर पर क्या अधिकार था कि मैंने प्राण त्याग करना चाहा। भगवान् सूर्य इसी क्षण के हेतु अनुशासन करते थे। नारायण नारायण! इस इच्छाकृत मानसिक पाप से कैसे उद्धार होगा! हे सर्वान्तर्यामी जगदीश्वर क्षमा करना, दुख से मनुष्य की बुद्धि ठिकाने नहीं रहती, अब तो मैं चांडालकुल का दास हूं, न अब शैव्या मेरी स्त्री है और न रोहिताश्व मेरा पुत्र। चलूं अपने स्वामी के काम पर सावधान हो जाऊं, वा देखूं अब दुक्खिनी शैव्या क्या करती है (शैव्या के पीछे जाकर खड़ा होता है)।

शै.: (पहली तरह बहुत रोकर) हाय! अब मैं क्या करूं। अब मैं किसका मुंह देखकर संसार में जीऊंगी। हाय मैं आज से निपूती भई! पुत्रवती स्त्री अपने बालकों पर अब मेरी छाया न पड़ने देंगी। हा नित्य सवेरे उठकर अब मैं किसकी चिन्ता करूंगी। खाने के समय मेरी गोद में बैठकर और मुझ से मांग-मांग पर अब कौन खाएगा! मैं परोसी थाली सूनी देखकर कैसे प्रान रक्खूंगी। (रोती है) हाय खेलता खेलता आकर मेरे गले से कौन लिपट जायगा और माँ-माँ कहकर तनक तनक बातों पर कौन हठ करेगा। हाय मैं अब किसको अपने आंचल से मुंह की धूल पोंछकर गले लगाऊंगी और किसके अभिमान से बिपत में भी फूली फूली फिरूंगी। (रोती है) या जब रोहिताश्व नहीं तो मैं ही जी के क्या करूंगी। (छाती पीटकर) हाय प्रान, तुम अभी क्यों नहीं निकले। (हाय मैं ऐसी स्वारथी हूं कि आत्महत्या के नरक के भय से अब भी अपने को नहीं मार डालती। नहीं-नहीं अब मैं न जीऊंगी। या तो इस पेड़ में फांसी लगाकर मर जाऊंगी या गंगा में कूद पड़ूगी) (उन्मत्त की भांति उठकर दौड़ना चाहती है)।

ह.: (आड़ में से) तनहिं बेंचि दासी कहवाई।
मरत स्वामि आयसु बिन पाई
करु न अधर्म सोचु जिय माहीं।
'पराधीन सपने सुख नाहीं। ।'

शै.: (चौकन्नी होकर) अहा! यह किसने इस कठिन समय में धर्म का उपदेश किया। सच है मैं अब इस देह की कौन हूं जो मर सकूं। हा दैव! तुझसे यह भी न देखा गया कि मैं मरकर भी सुख पाऊं। (कुछ धीरज धरके) तो चलूं छाती पर वज्र धरके अब लोकरीति करूं। रोती और लकड़ी चुनकर चिता बनाती हुई) हाय! जिन हाथों से ठोंक ठोंक कर रोज सुलाती थी उन्हीं हाथों से आज चिता पर कैसे रक्खूंगी, जिसके मुंह में छाला पड़ने के भय से कभी मैंने गरम दूध भी नहीं पिलाया उसे-(बहुत ही रोती है)।

ह.: धन्य देवी, आखिर तो चंद्र सूर्यकुल की स्त्री हो। तुम न धीरज करोगी तो और कौन करेगा।

शै.: (चिता बनाकर पुत्र के पास आकर उठाना चाहती है और रोती है)।

ह.: तो अब चलें उस से आधा कफन मांगे (आगे बढ़कर और बलपूर्वक आंसुओं को रोककर शैव्या से) महाभागे! स्मशान पति की आज्ञा है कि आधा कफन दिए बिना कोई मुरदा फूंकने न पावे सो तुम भी पहले हमें कपड़ा दे लो तब क्रिया करो (कफन मांगने को हाथ फैलाता है, आकाश से पुष्पवृष्टि होती है)।

(नेपथ्य में)

अहो धैर्यमहो सत्यमहो दानमहो बलं। त्वया राजन् हरिश्चन्द्र सर्व्वं लोकोत्तरं कृतं।

(दोनों आश्चर्य से ऊपर देखते हैं)

शै.: हाय। इस कुसमय में आर्यपुत्र की यह कौन स्तुति करता है? वा इस स्तुति ही से क्या है, शास्त्र सब असत्य हैं नहीं तो आर्यपुत्र से धर्मी की यह गति हो! यह केवल देवताओं और ब्राह्मणों का पाषंड है।

ह.: (दोनों कानों पर हाथ रखकर) नारायण नारायण! महाभागे ऐसा मत कहोय शास्त्र, ब्राह्मण और देवता त्रिकाल में सत्य हैं। ऐसा कहोगी तो प्रायश्चित होगा। अपना धर्म बिचारो। लाओ मृतकंबल हमें दो और अपना काम आरंभ करो (हाथ फैलाता है)

शै.: (महाराज हरिश्चन्द्र के हाथ में चक्रवर्ती का चिह्न देखकर और कुछ स्वर कुछ आकृति से अपने पति को पहचान कर) हा आर्यपुत्र, इतने दिन तक कहाँ छिपे थे! देखो अपने गोद के खेलाए दुलारे पुत्र की दशा! तुम्हारा प्यारा रोहिताश्व देखो अब अनाथ की भांति मसान में पड़ा है। (रोती है।)

ह.: प्रिये धीरज धरो। यह रोने का समय नहीं है। देखो सबेरा हुआ चाहता है, ऐसा न हो कि कोई आ जाय और हम लोगों की जान ले और एक लज्जा मात्रा बच गई है वह भी जाय। चलो कलेजे पर सिल रखकर अब रोहिताश्व की क्रिया करो और आधा कंबल हमको दो।

शै.: (रोती हुई) नाथ! मेरे पास तो एक भी कपड़ा नहीं था, अपना आंचल फाड़कर इसे लपेट लाई हूं, उसमें से भी जो आधा दे दूंगी तो यह खुला ही रह जायगा। हाय! चक्रवर्ती के पुत्र को आज कफन नहीं मिलता! (बहुत रोती है)

ह.: (बलपूर्वक आंसुओं को रोककर और बहुत धीरज धर कर) प्यारी, रोओ मत। ऐसे ही समय में तो धीरज और धरम रखना काम है। मैं जिस का दास हूं उस की आज्ञा है कि बिना आधा कफन लिए क्रिया मत करने दो। इससे मैं यदि अपनी स्त्री और अपना पुत्र समझकर तुम से इसका आधा कफन न लूं तो बड़ा अधर्म हो। जिस हरिश्चन्द्र ने उदय से अस्त तक की पृथ्वी के लिए धर्म न छोड़ा उसका धर्म आध गज कपड़े के वास्ते मत छुड़ाओ और कफन से जल्दी आधा कपड़ा फाड़ दो। देखो सबेरा हुआ चाहता है ऐसा न हो कि कुलगुरु भगवान् सूर्य अपने वंश की यह दुर्दशा देखकर चित् में उदास हों। (हाथ फैलाता है)

शै.: (रोती हुई) नाथ जो आज्ञा। (रोहिताश्व का मृत कंबल फाड़ा चाहती है कि रंगभूमि की पृथ्वी हिलती है, तोप छूटने का सा बड़ा शब्द और बिजली का सा उजाला होता है। नेपथ्य में बाजे की ओर बस धन्य और जय-जय की ध्वनि होती है, फूल बरसते हैं और भगवान् नारायण प्रकट होकर राजा हरिश्चन्द्र का हाथ पकड़ लेते हैं।)

भ.: बस महाराज बस (धर्म और सत्य सब की परमावधि हो गई। देखो तुम्हारे पुण्य भय से पृथ्वी बारम्बार कांपती है, अब त्रैलोक्य की रक्षा करो। (नेत्रों से आंसू बहते हैं)

ह.: (साष्टांग दंडवत् करके रोता हुआ गद्गद् स्वर से) भगवान! मेरे वास्ते आपने परिश्रम किया! कहाँ यह श्मशान भूमि, कहाँ यह मर्त्यलोक, कहाँ मेरा मनुष्य शरीर और कहां पूर्ण परब्रह्म सच्चिदानंदघन साक्षात् आप! (प्रेम के आंसुओं से गद्गद् कंठ होने से कुछ कहा नहीं जाता)

भ.: (शैव्या से) पुत्री अब शोक मत कर! धन्य तेरा सौभाग्य कि तुझे राजर्षि हरिश्चन्द्र ऐसा पति मिला है (रोहिताश्व की ओर देखकर वत्स रोहिताश्व उठो, देखो तुम्हारे माता-पिता देर से तुम्हारे मिलने को व्याकुल हो रहे हैं।) (रोहिताश्व उठ खड़ा होता है और आश्चर्य से भवगान् को प्रणाम कर के माता-पिता का मुंह देखने लगता है, आकाश से फिर पुष्पवृष्टि होती है)

ह. और शै.: (आश्चर्य, आनंद, करुणा और प्रेम से कुछ कह नहीं सकते, आंखों से आंसू बहते हैं और एकटक भगवान् के मुखारविंद की ओर देखते हैं)

(श्री महादेव, पार्वती, भैरव, धर्म, सत्य, इंद्र और विश्वामित्र आते हैं)1

सब: धन्य महाराज हरिश्चन्द्र धन्य! जो आपने किया, सो किसी ने न किया न होगा।

(राजा हरिश्चन्द्र शैव्या और रोहिताश्व सबको प्रणाम करते हैं)

बि.: महाराज यह केवल चन्द्र सूर्य तक आप की कीर्त्तिस्थिर रहने के हेतु मैंने छल किया था सो क्षमा कीजिए और अपना राज्य लीजिए।

(हरिश्चन्द्र भगवान और धर्म का मुंह देखते हैं)

धर्म: महाराज राज आप का है इसका मैं साक्षी हूं आप निस्संदेह लीजिए।

सत्य: ठीक है, जिसने हमारा अस्तित्त्व संसार में प्रत्यक्ष कर दिखाया उसी का पृथ्वी का राज्य है।

श्रीमहादेव: पुत्र हरिश्चन्द्र, भगवान नारायण के अनुग्रह से ब्रह्मलोक पर्यंत तुम ने पाया तथापि मैं आशीर्वाद देता हूँ कि तुम्हारी कीर्ति, जब तक पृथ्वी है तब तक स्थिर रहे और रोहिताश्व दीर्घायु, प्रतापी और चक्रवर्ती होय।

पा.: पुत्री शैव्या! तुम्हारे पति के साथ तुम्हारी कीर्ति स्वर्ग की स्त्रियाँ गावें, तुम्हारी पुत्रवधू सौभाग्यवती हो और लक्ष्मी तुम्हारे घर का कभी त्याग न करे।

(हरिश्चन्द्र और शैव्या प्रणाम करते हैं)

भै.: और जो तुम्हारी कीर्त्ति कहे सुने और उसका अनुसरण करे उस की भैरवी यातना न हो।

इन्द्र: (राजा को आलिंगन करके और हाथ जोड़ के) महाराज, मुझे क्षमा कीजिये। यह सब मेरी दुष्टता थी परंतु इस बात से आप का तो कल्याण ही हुआ। स्वर्ग कौन कहे आप ने अपने सत्यबल से ब्रह्मपद पाया। देखिये आप की रक्षा के हेतु श्रीशिव जी ने भैरवनाथ को आज्ञा दी थी, आप उपाध्यक्ष बने थे, नारद जी बटु बने थे, साक्षात् धर्म ने आप के हेतु चांडाल और कापालिक का भेष लिया और सत्य ने आप ही के कारण चांडाल के अनुचर और बैताल का रूप धारण किया। न आप बिके, न दास हुए, यह सब चरित्र भगवान नारायण की इच्छा से केवल आप के सुयश के हेतु किया गया।

ह.: (गद्गद स्वर से) अपने दासों का यश बढ़ाने वाला और कौन है।

भ.: महाराज और जो भी इच्छा हो मांगो।

ह.: (प्रणाम करके गद्गद स्वर से) प्रभु! आप के दर्शन से सब इच्छा पूर्ण हो गई, तथापि आप की आज्ञानुसार यह वर मांगता हूं कि मेरी प्रजा भी मेरे साथ बैकुंठ जाय और सत्य सदा पृथ्वी पर स्थिर रहे।

भ.: एवमस्तु, तुम ऐसे ही पुण्यात्मा हो कि तुम्हारे कारण अयोध्या के कीट पतंग जीव मात्र सब परमधाम जायंगे और कलियुग में धर्म के सब चरण टूट जायंगे तब भी वह तुम्हारी इच्छानुसार सत्य मात्र एक पद से स्थित रहेगा। इतना ही देकर मुझे सन्तोष नहीं हुआ कुछ और भी मांगो। मैं तुम्हें क्या-क्या दूं क्योंकि मैं तो अपने ही को तुम्हें दे चुका। तथापि मेरी इच्छा यही है कि तुम को कुछ और वर दूं। तुम्हें वर देने में मुझे सन्तोष नहीं होता।

ह.: (हाथ जोड़कर) भगवान मुझे अब कौन इच्छा है। मैं और क्या वर मांगूं तथापि भरत का यह वाक्य सुफल हो-

खल गनन सो सज्जन दुखी मति होइ, हरिपद रति रहे।

उपधर्म छूटैं सत्व निज भारत गहै, कर दुख बहै। ।
बुध तजहिं मत्सर, नारि नर सम होहिं, सबजगसुखल है।
तजि ग्रामकविता सुकविजन की अमृत बानी सब कहै। ।
(पुष्पवृष्टि और बाजे की धुनि के साथ जवनिका गिरती है)

2

प्रेमचंद की पुस्तकें

धनपत राय श्रीवास्तव नाम से जाने जाते हैं, वो हिन्दी और उर्दू के सर्वाधिक लोकप्रिय उपन्यासकार, कहानीकोर एवं विचारक थे। उन्होंने सेवासदन, प्रेमाश्रम, रंगभूमि, निर्मला, गबन, कर्मभूमि, गोदान आदि लगभग डेढ़ दर्जन उपन्यास तथा कफन, पूस की रात, पंच परमेश्वर, बड़े घर की बेटी, बूढ़ी काकी, दो बैलों की कथा आदि तीन सौ से अधिक कहानियाँ लिखीं। उनमें से अधिकांश हिंदी तथा उर्दू दोनों भाषाओं में प्रकाशित हुईं। उन्होंने अपने दौर की सभी प्रमुख उर्दू और हिंदी पत्रिकाओं जमाना, सरस्वती, माधुरी, मर्यादा, चाँद, सुधा आदि में लिखा। उन्होंने हिंदी समाचार पत्र जागरण तथा साहित्यिक पत्रिका हंस का संपादन और प्रकाशन भी किया। इसके लिए उन्होंने सरस्वती प्रेस खरीदा जो बाद में घाटे में रहा और बंद करना पड़ा। प्रेमचंद फिल्मों की पटकथा लिखने मुंबई आए और लगभग तीन वर्ष तक रहे। जीवन के अंतिम दिनों तक वे साहित्य सृजन में लगे रहे। महाजनी सभ्यता उनका अंतिम निबंध, साहित्य का उद्देश्य अंतिम व्याख्यान, कफन अंतिम कहानी, गोदान अंतिम पूर्ण उपन्यास तथा मंगलसूत्र अंतिम अपूर्ण उपन्यास माना जाता है।

1906 से 1936 के बीच लिखा गया प्रेमचंद का साहित्य इन तीस वर्षों का सामाजिक सांस्कृतिक दस्तावेज है। इसमें उस दौर के समाजसुधार आंदोलनों, स्वाधीनता संग्राम तथा प्रगतिवादी आंदोलनों के सामाजिक प्रभावों का स्पष्ट चित्रण है। उनमें दहेज, अनमेल विवाह, पराधीनता, लगान, छूआछूत, जाति भेद,

विधवा विवाह, आधुनिकता, स्त्री-पुरुष समानता, आदि उस दौर की सभी प्रमुख समस्याओं का चित्रण मिलता है। आदर्शोन्मुख यथार्थवाद उनके साहित्य की मुख्य विशेषता है। हिंदी कहानी तथा उपन्यास के क्षेत्र में 1918 से 1936 तक के कालखंड को 'प्रेमचंद युग' कहा जाता है।

जीवन-परिचय

प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1880 को वाराणसी जिले (उत्तर प्रदेश) के लमही गाँव में एक कायस्थ परिवार में हुआ था। उनकी माता का नाम आनन्दी देवी तथा पिता का नाम मुंशी अजायबराय था जो लमही में डाकमुंशी थे। उनका वास्तविक नाम धनपत राय श्रीवास्तव था। प्रेमचंद की आरंभिक शिक्षा फारसी में हुई। प्रेमचंद के माता-पिता के संबंध में रामविलास शर्मा लिखते हैं कि- 'जब वे सात साल के थे, तभी उनकी माता का स्वर्गवास हो गया। जब पंद्रह साल के हुए तब उनकी शादी कर दी गई और सोलह साल के होने पर उनके पिता का भी देहांत हो गया।'

इसके कारण उनका प्रारंभिक जीवन संघर्षमय रहा। प्रेमचंद के जीवन का साहित्य से क्या संबंध है इस बात की पुष्टि रामविलास शर्मा के इस कथन से होती है कि- 'सौतेली माँ का व्यवहार, बचपन में शादी, पंडे-पुरोहित का कर्मकांड, किसानों और क्लर्कों का दुखी जीवन-यह सब प्रेमचंद ने सोलह साल की उम्र में ही देख लिया था। इसीलिए उनके ये अनुभव एक जबर्दस्त सचाई लिए हुए उनके कथा-साहित्य में झलक उठे थे।' उनकी बचपन से ही पढ़ने में बहुत रुचि थी। 13 साल की उम्र में ही उन्होंने तिलिस्म-ए-होशरुबा पढ़ लिया और उन्होंने उर्दू के मशहूर रचनाकार रतननाथ 'शरसार', मिर्जा हादी रुस्वा और मौलाना शरर के उपन्यासों से परिचय प्राप्त कर लिया। उनका पहला विवाह पंद्रह साल की उम्र में हुआ। 1906 में उनका दूसरा विवाह शिवरानी देवी से हुआ जो बाल-विधवा थीं। वे सुशिक्षित महिला थीं जिन्होंने कुछ कहानियाँ और प्रेमचंद घर में शीर्षक पुस्तक भी लिखी। उनकी तीन संतानें हुईं-श्रीपत राय, अमृत राय और कमला देवी श्रीवास्तव। 1898 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक स्थानीय विद्यालय में शिक्षक नियुक्त हो गए। नौकरी के साथ ही उन्होंने पढ़ाई जारी रखी। उनकी शिक्षा के संदर्भ में रामविलास शर्मा लिखते हैं कि- '1910 में अंग्रेजी, दर्शन, फारसी और इतिहास लेकर इंटर किया और 1919 में अंग्रेजी, फारसी और इतिहास लेकर

बी. ए. किया।' 1919 में बी.ए. पास करने के बाद वे शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर पद पर नियुक्त हुए।

1921 ई. में असहयोग आंदोलन के दौरान महात्मा गाँधी के सरकारी नौकरी छोड़ने के आह्वान पर स्कूल इंस्पेक्टर पद से 23 जून को त्यागपत्र दे दिया। इसके बाद उन्होंने लेखन को अपना व्यवसाय बना लिया। मर्यादा, माधुरी आदि पत्रिकाओं में वे संपादक पद पर कार्यरत रहे। इसी दौरान उन्होंने प्रवासीलाल के साथ मिलकर सरस्वती प्रेस भी खरीदा तथा हंस और जागरण निकाला। प्रेस उनके लिए व्यावसायिक रूप से लाभप्रद सिद्ध नहीं हुआ। 1933 ई. में अपने ऋण को पटाने के लिए उन्होंने मोहनलाल भवनानी के सिनेटोन कंपनी में कहानी लेखक के रूप में काम करने का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। फिल्म नगरी प्रेमचंद को रास नहीं आई। वे एक वर्ष का अनुबंध भी पूरा नहीं कर सके और दो महीने का वेतन छोड़कर बनारस लौट आए। उनका स्वास्थ्य निरंतर बिगड़ता गया। लम्बी बीमारी के बाद 8 अक्टूबर 1936 को उनका निधन हो गया।

साहित्यिक जीवन

भित्तिलेख

प्रेमचंद के साहित्यिक जीवन का आरंभ 1901 से हो चुका था आरंभ में वे नवाब राय के नाम से उर्दू में लिखते थे। प्रेमचंद की पहली रचना के संबंध में रामविलास शर्मा लिखते हैं कि-'प्रेमचंद की पहली रचना, जो अप्रकाशित ही रही, शायद उनका वह नाटक था जो उन्होंने अपने मामा जी के प्रेम और उस प्रेम के फलस्वरूप चमारों द्वारा उनकी पिटाई पर लिखा था। इसका जिक्र उन्होंने 'पहली रचना' नाम के अपने लेख में किया है।' उनका पहला उपलब्ध लेखन उर्दू उपन्यास 'असरारे मआबिद' है, जो धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ। इसका हिंदी रूपांतरण देवस्थान रहस्य नाम से हुआ। प्रेमचंद का दूसरा उपन्यास 'हमखुर्मा व हमसवाब' है, जिसका हिंदी रूपांतरण 'प्रेमा' नाम से 1907 में प्रकाशित हुआ। 1908 ई. में उनका पहला कहानी संग्रह सोजे-वतन प्रकाशित हुआ। देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत इस संग्रह को अंग्रेज सरकार ने प्रतिबंधित कर दिया और इसकी सभी प्रतियाँ जब्त कर लीं और इसके लेखक नवाब राय को भविष्य में लेखन न करने की चेतावनी दी। इसके कारण उन्हें नाम बदलकर

प्रेमचंद के नाम से लिखना पड़ा। उनका यह नाम दयानारायन निगम ने रखा था। 'प्रेमचंद' नाम से उनकी पहली कहानी बड़े घर की बेटी जमाना पत्रिका के दिसम्बर 1910 के अंक में प्रकाशित हुई।

1915 ई. में उस समय की प्रसिद्ध हिंदी मासिक पत्रिका सरस्वती के दिसम्बर अंक में पहली बार उनकी कहानी सौत नाम से प्रकाशित हुई। 1918 ई. में उनका पहला हिंदी उपन्यास सेवासदन प्रकाशित हुआ। इसकी अत्यधिक लोकप्रियता ने प्रेमचंद को उर्दू से हिंदी का कथाकार बना दिया। हालाँकि उनकी लगभग सभी रचनाएँ हिंदी और उर्दू दोनों भाषाओं में प्रकाशित होती रहीं। उन्होंने लगभग 300 कहानियाँ तथा डेढ़ दर्जन उपन्यास लिखे।

1921 में असहयोग आंदोलन के दौरान सरकारी नौकरी से त्यागपत्र देने के बाद वे पूरी तरह साहित्य सृजन में लग गए। उन्होंने कुछ महीने मर्यादा नामक पत्रिका का संपादन किया। इसके बाद उन्होंने लगभग छह वर्षों तक हिंदी पत्रिका माधुरी का संपादन किया। 1922 में उन्होंने बेदखली की समस्या पर आधारित प्रेमाश्रम उपन्यास प्रकाशित किया। 1925 ई. में उन्होंने रंगभूमि नामक वृहद उपन्यास लिखा, जिसके लिए उन्हें मंगलप्रसाद पारितोषिक भी मिला। 1926-27 ई. के दौरान उन्होंने महादेवी वर्मा द्वारा संपादित हिंदी मासिक पत्रिका चाँद के लिए धारावाहिक उपन्यास के रूप में निर्मला की रचना की। इसके बाद उन्होंने कायाकल्प, गबन, कर्मभूमि और गोदान की रचना की। उन्होंने 1930 में बनारस से अपना मासिक पत्रिका हंस का प्रकाशन शुरू किया। 1932 ई. में उन्होंने हिंदी साप्ताहिक पत्र जागरण का प्रकाशन आरंभ किया। उन्होंने लखनऊ में 1936 में अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ के सम्मेलन की अध्यक्षता की। उन्होंने मोहन दयाराम भवनानी की अजंता सिनेटोन कंपनी में कथा-लेखक की नौकरी भी की। 1934 में प्रदर्शित फिल्म मजदूर की कहानी उन्होंने ही लिखी थी।

1920-36 तक प्रेमचंद लगभग दस या अधिक कहानी प्रतिवर्ष लिखते रहे। मरणोपरांत उनकी कहानियाँ 'मानसरोवर' नाम से 8 खंडों में प्रकाशित हुईं। उपन्यास और कहानी के अतिरिक्त वैचारिक निबंध, संपादकीय, पत्र के रूप में भी उनका विपुल लेखन उपलब्ध है।

गोदान (उपन्यास)

गोदान, प्रेमचन्द का अंतिम और सबसे महत्त्वपूर्ण उपन्यास माना जाता है। कुछ लोग इसे उनकी सर्वोत्तम कृति भी मानते हैं। इसका प्रकाशन 1936 ई. में

हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर कार्यालय, बम्बई द्वारा किया गया था। इसमें भारतीय ग्राम समाज एवं परिवेश का सजीव चित्रण है। गोदान ग्राम्य जीवन और कृषि संस्कृति का महाकाव्य है। इसमें प्रगतिवाद, गांधीवाद और मार्क्सवाद (साम्यवाद) का पूर्ण परिप्रेक्ष्य में चित्रण हुआ है।

गोदान हिंदी के उपन्यास-साहित्य के विकास का उज्ज्वलतम प्रकाशस्तंभ है। गोदान के नायक और नायिका होरी और धनिया के परिवार के रूप में हम भारत की एक विशेष संस्कृति को सजीव और साकार पाते हैं, ऐसी संस्कृति जो अब समाप्त हो रही हैं या हो जाने को हैं, फिर भी जिसमें भारत की मिट्टी की सोंधी सुबास भरी है। प्रेमचंद ने इसे अमर बना दिया है।

उपन्यास का सारांश

गोदान प्रेमचंद का हिंदी उपन्यास है, जिसमें उनकी कला अपने चरम उत्कर्ष पर पहुँची है। गोदान में भारतीय किसान का संपूर्ण जीवन - उसकी आकांक्षा और निराशा, उसकी धर्मभीरुता और भारतपरायणता के साथ स्वार्थपरता ओर बैठकबाजी, उसकी बेबसी और निरीहता-का जीता-जागता चित्र उपस्थित किया गया है। उसकी गर्दन जिस पैर के नीचे दबी है उसे सहलाता, क्लेश और वेदना को झुठलाता, 'मरजाद' की झूठी भावना पर गर्व करता, ऋणग्रस्तता के अभिशाप में पिसता, तिल-तिल शूलों भरे पथ पर आगे बढ़ता, भारतीय समाज का मेरुदंड यह किसान कितना शिथिल और जर्जर हो चुका है, यह गोदान में प्रत्यक्ष देखने को मिलता है। नगरों के कोलाहलमय चकाचौंध ने गाँवों की विभूति को कैसे ढँक लिया है, जमींदार, मिल मालिक, पत्रसंपादक, अध्यापक, पेशेवर वकील और डाक्टर, राजनीतिक नेता और राजकर्मचारी जोंक बने कैसे गाँव के इस निरीह किसान का शोषण कर रहे हैं और कैसे गाँव के ही महाजन और पुरोहित उनकी सहायता कर रहे हैं, गोदान में ये सभी तत्त्व नखदर्पण के समान प्रत्यक्ष हो गए हैं। गोदान वास्तव में 20वीं शताब्दी की तीसरी और चौथी दशाब्दियों के भारत का ऐसा सजीव चित्र है, जैसा हमें अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।

गोदान में बहुत-सी बातें कही गई हैं। जान पड़ता है प्रेमचंद ने अपने संपूर्ण जीवन के व्यंग और विनोद, कसक और वेदना, विद्रोह और वैराग्य, अनुभव और आदर्श-सभी को इसी एक उपन्यास में भर देना चाहा है। कुछ आलोचकों को इसी कारण उसमें अस्तव्यस्तता मिलती है। उसका कथानक

शिथिल, अनियंत्रित और स्थान-स्थान पर अति नाटकीय जान पड़ता है। ऊपर से देखने पर है भी ऐसा ही है, परंतु सूक्ष्म रूप से देखने पर गोदान में लेखक का अद्‌भुत उपन्यास-कौशल दिखाई पड़ेगा क्योंकि उन्होंने जितनी बातें कहीं हैं वे सभी समुचित उत्थान में कही गई हैं। प्रेमचंद ने एक स्थान पर लिखा है - 'उपन्यास में आपकी कलम में जितनी शक्ति हो अपना जोर दिखाइए, राजनीति पर तर्क कीजिए, किसी महफिल के वर्णन में 10-20 पृष्ठ लिख डालिए (भाषा सरस होनी चाहिए), कोई दूषण नहीं।' प्रेमचंद ने गोदान में अपनी कलम का पूरा जोर दिखाया है। सभी बातें कहने के लिये उपयुक्त प्रसंगकल्पना, समुचित तर्कजाल और सही मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रवाहशील, चुस्त और दुरुस्त भाषा और वर्णनशैली में उपस्थित कर देना प्रेमचंद का अपना विशेष कौशल है और इस दृष्टि से उनकी तुलना में शायद ही किसी उपन्यास लेखक को रखा जा सकता है।

जिस समय प्रेमचन्द का जन्म हुआ वह युग सामाजिक-धार्मिक रुढ़िवाद से भरा हुआ था। इस रुढ़िवाद से स्वयं प्रेमचन्द भी प्रभावित हुए। जब अपने कथा-साहित्य का सफर शुरु किया अनेकों प्रकार के रुढ़िवाद से ग्रस्त समाज को यथाशक्ति कला के शस्त्र द्वारा मुक्त कराने का संकल्प लिया। अपनी कहानी के बालक के माध्यम से यह घोषणा करते हुए कहा कि 'मैं निरर्थक रूढ़ियों और व्यर्थ के बन्धनों का दास नहीं हूँ।'

प्रेमचन्द और शोषण का बहुत पुराना रिश्ता माना जा सकता है। क्योंकि बचपन से ही शोषण के शिकार रहे प्रेमचन्द इससे अच्छी तरह वाकिफ हो गए थे। समाज में सदा वर्गवाद व्याप्त रहा है। समाज में रहने वाले हर व्यक्ति को किसी न किसी वर्ग से जुड़ना ही होगा।

प्रेमचन्द ने वर्गवाद के खिलाफ लिखने के लिए ही सरकारी पद से त्यागपत्र दे दिया। वह इससे सम्बन्धित बातों को उन्मुख होकर लिखना चाहते थे। उनके मुताबिक वर्तमान युग न तो धर्म का है और न ही मोक्ष का। अर्थ ही इसका प्राण बनता जा रहा है। आवश्यकता के अनुसार अर्थोपार्जन सबके लिए अनिवार्य होता जा रहा है। इसके बिना जिन्दा रहना सर्वथा असंभव है।

वह कहते हैं कि समाज में जिन्दा रहने में जितनी कठिनाइयों का सामना लोग करेंगे उतना ही वहाँ गुनाह होगा। अगर समाज में लोग खुशहाल होंगे तो समाज में अच्छाई ज्यादा होगी और समाज में गुनाह नहीं के बराबर होगा। प्रेमचन्द ने शोषितवर्ग के लोगों को उठाने का हर संभव प्रयास किया। उन्होंने आवाज

लगाई 'ए लोगों जब तुम्हें संसार में रहना है तो जिन्दों की तरह रहो, मुर्दों की तरह जिन्दा रहने से क्या फायदा।'

प्रेमचन्द ने अपनी कहानियों में शोषक-समाज के विभिन्न वर्गों की करतूतों व हथकण्डों का पर्दाफाश किया है।

कथानक

उपन्यास वे ही उच्चकोटि के समझे जाते हैं जिनमें आदर्श तथा यथार्थ का पूर्ण सामंजस्य हो। 'गोदान' में समान्तर रूप से चलने वाली दोनों कथाएं हैं - एक ग्राम्य कथा और दूसरी नागरी कथा, लेकिन इन दोनों कथाओं में परस्पर सम्बद्धता तथा सन्तुलन पाया जाता है। ये दोनों कथाएं इस उपन्यास की दुर्बलता नहीं वरन, सशक्त विशेषता है।

यदि हमें तत्कालीन समय के भारत वर्ष को समझना है तो हमें निश्चित रूप से गोदान को पढ़ना चाहिए इसमें देश-काल की परिस्थितियों का सटीक वर्णन किया गया है। कथा नायक होरी की वेदना पाठकों के मन में गहरी संवेदना भर देती है। संयुक्त परिवार के विघटन की पीड़ा होरी को तोड़ देती है, परन्तु गोदान की इच्छा उसे जीवित रखती है और वह यह इच्छा मन में लिए ही वह इस दुनिया से कूच कर जाता है।

गोदान औपनिवेशिक शासन के अंतर्गत किसान का महाजनी व्यवस्था में चलने वाले निरंतर शोषण तथा उससे उत्पन्न संत्रास की कथा है। गोदान का नायक होरी एक किसान है, जो किसान वर्ग के प्रतिनिधि के तौर पर मौजूद है। 'आजीवन दुर्धर्ष संघर्ष के बावजूद उसकी एक गाय की आकांक्षा पूर्ण नहीं हो पाती'। गोदान भारतीय कृषक जीवन के संत्रसमय संघर्ष की कहानी है।

'गोदान' होरी की कहानी है, उस होरी की जो जीवन भर मेहनत करता है, अनेक कष्ट सहता है, केवल इसलिए कि उसकी मर्यादा की रक्षा हो सके और इसीलिए वह दूसरों को प्रसन्न रखने का प्रयास भी करता है, किंतु उसे इसका फल नहीं मिलता और अंत में मजबूर होना पड़ता है, फिर भी अपनी मर्यादा नहीं बचा पाता। परिणामत: वह जप-तप के अपने जीवन को ही होम कर देता है। यह होरी की कहानी नहीं, उस काल के हर भारतीय किसान की आत्मकथा है और इसके साथ जुड़ी है शहर की प्रासंगिक कहानी। 'गोदान' में उन्होंने ग्राम और शहर की दो कथाओं का इतना यथार्थ रूप और संतुलित

मिश्रण प्रस्तुत किया है। दोनों की कथाओं का संगठन इतनी कुशलता से हुआ है कि उसमें प्रवाह आद्योपांत बना रहता है। प्रेमचंद की कलम की यही विशेषता है।

इस रचना में प्रेमचन्द का गांधीवाद से मोहभंग साफ-साफ दिखाई पड़ता है। प्रेमचन्द के पूर्व के उपन्यासों में जहां आदर्शवाद दिखाई पड़ता है, गोदान में आकर यथार्थवाद नग्न रूप में परिलक्षित होता है। कई समालोचकों ने इसे महाकाव्यात्मक उपन्यास का दर्जा भी दिया है।

दो बैलों की कथा

जानवरों में गधा सबसे ज्यादा बुद्धिहीन समझा जाता है। हम जब किसी आदमी को पहले दरजे का बेवकूफ कहना चाहते हैं तो उसे गधा कहते हैं। गधा सचमुच बेवकूफ है, या उसके सीधेपन, उसकी निरापद सहिष्णुता ने उसे यह पदवी दे दी है, इसका निश्चय नहीं किया जा सकता। गायें सींग मारती हैं, ब्याई हुई गाय तो अनायास ही सिंहनी का रूप धारण कर लेती है। कुत्ता भी बहुत गरीब जानवर है, लेकिन कभी-कभी उसे भी क्रोध आ ही जाता है, लेकिन गधे को कभी क्रोध करते नहीं सुना, न देखा। जितना चाहो उस गरीब को मारो, चाहे जैसी खराब सी हुई घास सामने डाल दो। उसके चेहरे पर कभी असंतोष की छाया भी न दिखायी देगी। वैशाख में चाहे एकाध बार कुलेल कर लेता होय पर हमने तो उसे कभी खुश होते नहीं देखा। उसके चेहरे पर एक स्थायी विषाद स्थाई रूप के छाया रहता है। सुख-दुःख, हानि-लाभ, किसी दशा में भी उसे बदलते नहीं देखा। ऋषियों-मुनियों के जितने गुण हैं, वह सभी उसमें पराकाष्ठा को पहुँच गये हैं, पर आदमी उसे बेवकूफ कहता है। सदगुणों का इतना अनादर कहीं नहीं देखा। कदाचित् सीधापन संसार के लिए उपयुक्त नहीं है। देखिए न, भारतवासियो की अफ्रीका में क्यों दुर्दशा हो रही है। क्यों अमेरिका में उन्हें घुसने नहीं दिया जाता? बेचारे शराब नहीं पीते, चार पैसे कुसमय के लिए बचाकर रखते हैं, जी तोड़कर काम करते हैं, किसी से लड़ाई-झगड़ा नहीं करते, चार बातें सुनकर गम खा जाते हैं। फिर भी बदमाश है। कहा जाता है, वे जीवन के आदर्श को नीचा करते हैं। अगर वे भी ईंट का जवाब पत्थर से देना सीख जाते, तो शायद

सभ्य कहलाने लगते। जापान की मिसाल सामने है। एक ही विजय ने उसे संसार की सभ्य जातियों में गण्य बना दिया।

लेकिन गधे का एक छोटा भाई और भी है, जो उससे कुछ ही कम गधा है और वह है 'बैल'। जिस अर्थ में हम गधा का प्रयोग करते हैं, कुछ उसी से मिलते-जुलते अर्थ में बछिया के ताऊ का प्रयोग भी करते हैं। कुछ लोग बैल को शायद बेवकूफों में सर्वश्रेष्ठ कहेंगे, मगर हमारा विचार ऐसा नहीं। बैल कभी-कभी मारता भी है, कभी-कभी अड़ियल बैल भी देखने में आ जाता है और भी कई रीतियों से वह अपना असन्तोष प्रकट कर देता है, अतएव उसका स्थान गधे से नीचा है।

झूरी काछी के दोनों बैलो के नाम थे हीरा और मोती। दोनों पछाई जाति के थे। देखने में सुन्दर, काम में चौकस, डील ऊँचे। बहुत दिनों साथ रहते-रहते दोनों में भाईचारा हो गया था। दोनों आमने-सामने या आस-पास बैठे हुए दूसरे से मूक भाषा में विचार-विनिमय करते थे। एक-दूसरे के मन की बात कैसे समझ जाता था, हम नहीं कह सकते। अवश्य ही उनमें कोई ऐसी गुप्त शक्ति थी, जिससे जीवों में श्रेष्ठता का दावा करनेवाला मनुष्य वंचित है। दोनों एक-दूसरे को चाटकर और सूँघकर अपना प्रेम प्रकट करते, कभी-कभी दोनों सींग भी मिला लिया करते थे। विग्रह के भाव से नहीं, केवल विनोद के भाव से, आत्मीयता के भाव से जैसे दोस्तों में घनिष्ठता होते ही धौल-घप्पा होने लगता है। इसके बिना दोस्ती कुछ फुसफुसी, कुछ हलकी-सी रहती है, जिस पर ज्यादा विश्वास नहीं किया जा सकता। जिस वक्त यह दोनों बैल हल या गाड़ी में जोत दिये जाते और गरदनें हिला-हिलाकर चलते, तो हरएक की यही चेष्टा होती थी कि ज्यादा-से-ज्यादा बोझ मेरी ही गरदन पर रहे। दिन-भर के बाद दोपहर या सन्ध्या को दोनों खुलते, तो एक-दूसरे को चाट-चूटकर अपनी थकान मिटा लिया करते। नाँद में खली-भूसा पड़ जाने के बाद दोनों साथ उठते, साथ नाँद में मुँह डालते और साथ ही बैठते थे। एक मुँह हटा लेता तो दूसरा भी हटा लेता था।

संयोग की बात, झूरी ने एक बार गोई को ससुराल भेज दिया। बैलों को क्या मालूम, वे क्यों भेजे जा रहे हैं। समझे, मालिक ने हमें बेच दिया। अपना यों बेचा जाना उन्हें अच्छा लगा या बुरा, कौन जाने, पर झूरी के साले गया को घर तक गोई ले जाने में दाँतों पसीना आ गया। पीछे से हाँकता तो दोनों दाएँ-बाएँ भागते, पगहिया पकड़कर आगे से खींचता, तो दोनों पीछे को जोर लगाते। मारता तो दोनों सींग नीचे करके हुँकारते। अगर ईश्वर ने उन्हें वाणी दी होती, तो झूरी

से पूछते-तुम हम गरीबों को क्यों निकाल रहे हो? हमने तो तुम्हारी सेवा करने में कोई कसर नहीं उठा रखी। अगर इतनी मेहनत से काम न चलता था तो और काम लेते। हमें तो तुम्हारी चाकरी में मर जाना कबूल था। हमने कभी दाने-चारे की शिकायत नहीं की। तुमने जो कुछ खिलाया, वह सिर झुकाकर खा लिया, फिर तुमने हमें इस जालिम के हाथ क्यों बेच दिया?

सन्ध्या समय दोनों बैल अपने नये स्थान पर पहुँचे। दिन-भर के भूखे थे, लेकिन जब नाँद में लगाये गये, तो एक ने भी उसमें मुँह न डाला। दिल भारी हो रहा था। जिसे उन्होंने अपना घर समझ रखा था, वह आज उनसे छूट गया था। यह नया घर, नया गाँव, नये आदमी सब उन्हें बेगाने-से लगते थे।

दोनों ने अपनी मूक भाषा में सलाह की, एक-दूसरे को कनखियों से देखा और लेट गये। जब गाँव में सोता पड़ गया, तो दोनों ने जोर मारकर पगहे तुड़ा डाले और घर की तरफ चले! पगहे बहुत मजबूत थे।

अनुमान न हो सकता था कि कोई बैल उन्हें तोड़ सकेगा, पर इन दोनों में इस समय दूनी शक्ति आ गयी थी। एक-एक झटके में रस्सियाँ टूट गयीं।

झूरो प्रातःकाल सोकर उठा, तो देखा कि दोनों बैल चरनी पर खड़े हैं। दोनों की गरदनों में आधा-आधा गराँव लटक रहा है। घुटनों तक पाँव कीचड़ से भरे हैं और दोनों की आँखों में विद्रोहमय स्नेह झलक रहा है।

भूरी बैलों को देखकर स्नेह से गद्‌गद हो गया। दौड़कर उन्हें गले लगा लिया। प्रेमालिंगन और चुंबन का वह दृश्य बड़ा ही मनोहर था।

घर और गाँव के लड़के जमा हो गये और तालियाँ बजा-बजाकर उनका स्वागत करने लगे। गाँव के इतिहास में यह घटना अभूतपूर्व न होने पर भी महत्त्वपूर्ण थी। बाल-सभा ने निश्चय किया, दोनों पशुवीरों को अभिनन्दन-पत्र देना चाहिए कोई अपने घर से रोटियाँ लाया, कोई गुड़, कोई चोकर, कोई भूसी।

एक बालक ने कहा-ऐसे बैल किसी के पास न होंगे।

दूसरे ने समर्थन किया-इतनी दूर से दोनों अकेले चले आये।

तीसरा बोला-बैल नहीं हैं वे, उस जन्म के आदमी हैं।

इसका प्रतिवाद करने का किसी को साहस न हुआ।

झूरी की स्त्री ने बैलों को द्वार पर देखा, तो जल उठी। बोली कैसे नमकहराम बैल हैं कि एक दिन भी वहाँ काम न किया। भाग खड़े हुए।

झूरी अपने बैलों पर यह आक्षेप न सुन सका-नमकहराम क्यों हैं? चारा-दाना न दिया होगा, तो क्या करते!

स्त्री ने रोब के साथ कहा–बस, तुम्हीं तो बैलों को खिलाना जानते हो और तो सभी पानी पिला–पिलाकर रखते हैं। झूरी ने चिढ़ाया–चारा मिलता तो क्यो भागते?

स्त्री चिढ़ी–भागे इसलिए कि वे लोग तुम जैसे बुद्धुओं की तरह बैलों को सहलाते नहीं। खिलाते हैं तो रगड़कर जोतते भी हैं। यह दोनों ठहरे कामचोर, भाग निकले। अब देखूँ कहाँ से खली और चोकर मिलता है! सूखे भूसे के सिवा कुछ न दूँगी, खायें चाहे मरें।

वही हुआ। मजूर को कड़ी ताकीद कर दी गयी कि बैलों को खाली सूखा भूसा दिया जाय।

बैलों में नाँद में मुँह डाला तो फीका–फीका। न कोई चिकनाहट न कोई रस! क्या खायें। आशा भरी आँखों से द्वार की ओर ताकने लगे।

भूरी ने मजूर से कहा–थोड़ी–सी खली क्यों नहीं डाल देता बे?

'मालकिन मुझे मार ही डालेंगी।'

'चुराकर डाल आ।'

'न दादा, पीछे से तुम भी उन्हीं की–सी कहोगे।'

(3)

दूसरे दिन भूरी का साला फिर आया और बैलों को ले चला। उसने दोनों को गाड़ी में जोता।

दो–चार बार मोती ने गाड़ी को सड़क की खाई में गिराना चाहा, पर हीरा ने संभाल लिया। वह ज्यादा सहनशील था।

सन्ध्या समय घर पहुँचकर उसने दोनों को मोटी रस्सियों से बाँधा और कल की शरारत का मजा चखाया। फिर वही सूखा भूसा डाल दिया। अपने दोनों बैलों को खली, चूनी, सब कुछ दी।

दोनों बैलों का ऐसा अपमान कभी न हुआ था। भूरी इन्हें फूल की छड़ी से भी न छूता था। उसकी टिटकार पर दोनों उड़ने लगते थे। यहाँ मार पड़ी। आहत सम्मान की व्यथा तो थी ही, उस पर मिला सूखा भूसा! नाँद की तरफ आँखें तक न उठायीं। दूसरे दिन गया ने बैलों को हल में जोता, पर इन दोनों ने जैसे पाँव उठाने की कसम खा ली थी। वह मारते–मारते थक गया, पर दोनों ने पाँव न उठाया। एक बार जब उस निर्दयी ने हीरा के नाक में खूब उंडे जमाये, तो मोती का गुस्सा काबू के बाहर हो गया। हल लेकर भागा। हल, रस्सी, जुआ,

जोत, सब टूट-टाटकर बराबर हो गया। गले में बड़ी-बड़ी रस्सियाँ न होतीं, तो दोनों पकड़ाई में न आते।

हीरा ने मूक भाषा में कहा-भागना व्यर्थ है।

मोती ने उसी भाषा में उत्तर दिया-तुम्हारी तो इसने जान ही ले ली थी। अबकी बड़ी मार पड़ेगी।

'पड़ने दो, बैल का जन्म लिया है, तो मार से कहाँ तक बचेंगे।'

'गया दो आदमियो के साथ दौड़ा आ रहा है। दोनों के हाथों में लाठियाँ है।'

मोती बोला-कहो तो दिखा दूं कुछ मजा मैं भी। लाठी लेकर आ रहा है।'

हीरा ने समझाया-नहीं भाई! खड़े हो जाओ।

'मुझे मारेगा, तो मैं भी एक-दो को गिरा दूँगा।'

'नहीं। हमारी जाति का यह धर्म नहीं है।

मोती दिल में ऐंठकर रह गया। गया आ पहुँचा और दोनों को पकड़कर ले चला। कुशल हुई कि उसने इस वक्त मार-पीट न की, नहीं मोती भी पलट पड़ता। उसके तेवर देखकर गया और सहायक समझ गये, कि इस वक्त टाल जाना ही मसलहत है।

आज दोनों के सामने फिर वही सूखा भूसा लाया गया। दोनों चुपचाप खड़े रहे। घर के लोग भोजन करने लगे। उसी वक्त एक छोटी-सी लड़की दो रोटियाँ लिये निकली और दोनों के मुँह में देकर चली गयी। उस एक रोटी से इनकी भूख तो क्या शान्त होती, पर दोनों के हृदय की मानो भोजन मिल गया। यहाँ भी किसी सज्जन का वास है। लड़की भैरों की थी। उसकी माँ मर चुकी थी। सौतेली माँ उसे मारती रहती थी, इसलिए इन बैलों से उसे एक प्रकार की आत्मीयता हो गयी थी।

दोनों दिन-भर जोते जाते, डण्डे खाते, अड़ते। शाम को थान पर बाँध दिये जाते और रात को वही बालिका उन्हें दो रोटियाँ खिला जाती। प्रेम के इस प्रसाद को वह बरकत थी कि दो-दो गाल सूखा भूसा खाकर भी दोनों दुर्बल न होते थे, मगर दोनों की आँखों में, रोम-रोम में विद्रोह भरा हुआ था।

एक दिन मोती ने मूक भाषा में कहा- अब तो नहीं सहा जाता हीरा!

'क्या करना चाहते हो?'

'एकाध को सींगों पर उठाकर फेक दूँगा।'

'लेकिन जानते हो वह प्यारी लड़की, जो हमे रोटियाँ खिलाती है, उसी की लड़की है, जो इस घर का मालिक है। वह बेचारी अनाथ हो जायगी।'

'तो मालकिन को न फेक दूँ। वही तो उस लड़की को मारती है।'

'लेकिन औरत जात पर सींग चलाना मना है, यह भूले जाते हो।'

'तुम तो किसी तरह निकलने ही नहीं देते। तो आओ, आज तुड़ाकर भाग चलें।

'हाँ, यह मैं स्वीकार करता हूँ, लेकिन इतनी मोटी रस्सी टूटेगी कैसे!'

'इसका उपाय है। पहले रस्सी को थोड़ा-सा चबा लो। फिर एक झटके में जाती है।'

रात को जब बालिका रोटियाँ खिलाकर चली गयी, तो दोनों रस्सियाँ चबाने लगे, पर मोटी रस्सी मुँह में न आती थी। बेचारे बार-बार जोर लगाकर रह जाते थे।

सहसा घर का द्वार खुला और वही लड़की निकली। दोनों सिर झुकाकर उसका हाथ चाटने लगे। दोनों की पूछे खड़ी हो गयीं। उसने उनके माथे सहलाये और बोली-खोले देती हूँ। चुपके से भाग जाओ, नहीं यहाँ लोग मार डालेंगे। आज घर में सलाह हो रही है कि इनकी नाकों में नाथ डाल दी जाय।

उसने गराँव खोल दिया, पर दोनों चुपचाप खड़े रहे।

मोती ने अपनी भाषा में पूछा-अब चलते क्यों नहीं?

हीरा ने कहा-चलें तो, लेकिन कल इस अनाथ पर आफत आयेगी। सब इसी पर संदेह करेंगे। सहसा बालिका चिल्लायी-दोनों फूफावाले बैल भागे जा रहे हैं। ओ दादा! दादा! दोनों बैल भागे जा रहे हैं! जल्दी दौड़ो!

गया हड़बड़ाकर भीतर से निकला और बैलों को पकड़ने चला। वह दोनों भागे। गया ने पीछा किया। वह और भी तेज हुए। गया ने शोर मचाया। फिर गाँव के कुछ आदमियों को साथ लेने के लिए लौटा। दोनों मित्रों को भागने का मौका मिल गया। सीधे दौड़ते चले गये। यहाँ तक कि मार्ग का ज्ञान न रहा। जिस परिचित मार्ग से आये थे, उसका यहाँ पता न था। नये-नये गाँव मिलने लगे। तब दोनों एक खेत के किनारे खड़े होकर सोचने लगे, अब क्या करना चाहिए।

हीरा ने कहा-मालूम होता है राह भूल गये।

'तुम भी तो बेतहाशा भागे। वहीं उसे मार गिराना था।'

'उसे मार गिराते, तो दुनिया क्या कहती? वह अपना धर्म छोड़ दे लेकिन हम अपना धर्म क्यों छोड़ें!'

दोनों भूख से व्याकुल हो रहे थे। खेत में मटर खड़ी थी। चरने लगे। रह-रहकर आहट ले लेते थे, कोई आता तो नहीं है।

जब पेट भर गया, दोनों ने आजादी का अनुभव किया, तो मस्त होकर उछलने-कूदने लगे। पहले दोनों ने डकार ली। फिर सींग मिलाये और एक-दूसरे को ठेलने लगे। मोती ने हीरा को कई कदम पीछे हटा दिया, यहाँ तक कि वह खाई में गिर गया। तब उसे भी क्रोध आया। सँभलकर उठा और फिर मोती से भिड़ गया। मोती ने देखा-खेल में झगड़ा हुआ चाहता है, तो किनारे हट गया।

अरे! वह क्या! कोई साँड़ डौंकता चला आ रहा है। हाँ, साँड़ ही हैं। वह सामने आ पहुँचा। दोनों मित्र बगलें झाँक रहे हैं। साँड़ पूरा हाथी है। उससे भिड़ना जान से हाथ धोना है, लेकिन न भिड़ने पर भी तो जान बचती नहीं नजर आती। इन्हीं की तरफ आ भी रहा है। कितनी भयंकर सूरत है!

मोती ने मूक भाषा में कहा-बुरे फँसे। जान कैसे बचेगी। कोई उपाय सोचो।

हीरा ने चिन्तित स्वर में कहा-अपने घमंड में भूला हुआ है। आरजू-विनती न सुनेगा।

'भाग क्यों न चलें।'

'भागना कायरता है।'

'तो फिर यहीं मरो। बन्दा तो नौ-दो ग्यारह होता है।'

'और जो दौड़ाये?'

'वो फिर कोई उपाय सोचो जल्द!'

'उपाय यही है कि उस पर दोनों जने एक साथ चोट करें। मैं आगे से रगेदता हूँ, तुम पीछे से रगेदो, दोहरी मार पड़ेगी, तो भाग खड़ा होगा। ज्योंही मेरी ओर झपटे तुम बगल से उसके पेट में सींग धुसेड़ देना। जान जोखिम है, पर दूसरा उपाय नहीं है।'

दोनों मित्र जान हथेलियों पर लेकर लपके। साँड़ को कभी संगठित शत्रुओं से लड़ने का तजुरबा न था। वह तो एक शत्रु से मल्लयुद्ध करने का आदी था। ज्योंही हीरा पर झपटा, मोती ने पीछे से दौड़ाया। साँड़ उसकी तरफ मुड़ा, तो हीरा ने रगेदा। साँड़ चाहता था कि एक एक करके दोनों को गिरा लें। पर यह दोनों उस्ताद थे। उसे यह अवसर न देते थे। एक बार साँड़ झल्लाकर हीरा का अन्त कर देने के लिए चला, कि मोती ने बगल से पाकर उसके पेट में सींग भोंक दी। साँड़ क्रोध में आकर पीछे फिरा तो हीरा ने दूसरे पहलू में सींग चुभा दिया।

आखिर बेचारा जख्मी होकर भागा और दोनों मित्रों ने दूर तक उसका पीछा किया। यहाँ तक कि साँड़ बेदम होकर गिर पड़ा। तब दोनों ने उसे छोड़ दिया।

दोनों मित्र विजय के नशे में झूमते चले जाते थे।

मोती ने अपनी सांकेतिक भाषा में कहा–मेरा जी चाहता था कि बचा को मार ही डालूँ।

हीरा ने तिरस्कार किया–गिरे हुए वैरी पर सींग न चलाना चाहिए।

'यह सब ढोंग है। वैरी को ऐसा मारना चाहिए कि फिर न उठे।'

'अब घर कैसे पहुँचेगे, यह सोचो।'

'पहले कुछ खा ले, तो सोचे।'

सामने मटर का खेत था ही। मोती उसमें घुस गया। हीरा मना करता रहा, पर उसने एक न सुनी। अभी दो–ही–चार ग्रास खाये थे कि दो आदमी लाठियाँ लिये दौड़ पड़े और दोनों मित्रों को घेर लिया। हीरा तो मेड़ पर था, निकल गया। मोती सींचे हुए खेत में था। उसके खुर कीचड़ में धँसने लगे। भाग न सका। पकड़ लिया गया। हीरा ने देखा, संगी संकट में है, वो लौट पड़ा। फंसेंगे तो दोनों साथ फँसेंगे। रख वालों ने उसे भी पकड़ लिया।

प्रात:काल दोनों मित्र कॉजीहौस में बन्द कर दिये गये।

(5)

दोनों मित्रों को जीवन में पहली बार ऐसा सबका पड़ा कि सारा दिन बीत गया और खाने को एक तिनका भी न मिला। समझ ही में न आता था, यह कैसा स्वामी है। इससे तो गया फिर भी अच्छा था। वहाँ कई भैसें थीं कई बकरियों, कई घोड़े, कई गधे पर किसी के सामने चारा न था,

सब जमीन पर मुरदों की तरह पड़े थे। कई तो इतने कमजोर हो गये थे कि खड़े भी न हो सकते थे। सारा दिन दोनों मित्र फाटक की ओर टकटकी लगाये ताकते रहे, पर कोई चारा लेकर आता न दिखायी दिया। तब दोनों ने दीवार की नमकीन मिट्टी चाटनी शुरू की, पर इससे क्या तृप्ति होती!

रात को भी जब कुछ भोजन न मिला, तो हीरा के दिल में विद्रोह की ज्वाला दहक उठी। मोती से बोला–अब तो नहीं रहा जाता मोती!

मोती ने सिर लटकाये हुए जवाब दिया–मुझे तो मालूम होता है, प्राण निकल रहे हैं।

'इतनी जल्द हिम्मत न हारो भाई! यहाँ से भागने का कोई उपाय निकालना चाहिए।'

'आओ दीवार तोड़ डालें।'

'मुझसे तो अब कुछ न होगा।'

'बस, इसी बूते पर अकड़ते थे!'

'सारी अकड़ निकल गयी।'

बाड़े की दीवार कच्ची थी। हीरा मजबूत तो था ही, अपने नुकीले सींग दीवार में गड़ा दिये और जोर मारा, तो मिट्टी का एक चिप्पड़ निकल आया। फिर तो उसका साहस बढ़ा। उसने दौड़-दौड़कर दीवार पर चोटें की और हर चोट में थोड़ी-थोड़ी मिट्टी गिराने लगा।

उसी समय काँजीहौस का चौकीदार लालटेन लेकर जानवरों की हाजिरी लेने आ निकला। हीरा का यह उजड्डपन देखकर उसने उसे कई डंडे रसीद किये और मोटी-सी रस्सी से बाँध दिया।

मोती ने पड़े-पड़े कहा-आखिर मार खाई, क्या मिला?

'अपने बूते-भर जोर तो मार लिया।'

'ऐसा जोर मारना किस काम का कि और बंधन में पड़ गये।'

'जोर तो मारता ही जाऊँगा, चाहे कितने ही बंधन पड़ते जायँ।' 'जान से हाथ धोना पड़ेगा।'

'कुछ परवाह नहीं। यो भी तो मरना ही है। सोचो, दीवार खुद जाती, तो कितनी जान बच जातीं। इतने भाई यहाँ बन्द हैं। किसी की देह में जान नहीं है। दो-चार दिन और यही हाल रहा, तो सब मर जायँगे।'

'हाँ, यह बात तो है। अच्छा तो लो, फिर मैं भी जोर लगाता हूँ।

मोती ने भी दीवार में उसी जगह सींग मारा। थोड़ी-सी मिट्टी गिरी और हिम्मत बढ़ी। फिर तो वह दीवार में सींग लगाकर इस तरह जोर करने लगा, मानो किसी द्वन्द्वी से लड़ रहा है। आखिर कोई दो घंटे की जोर आजमाई के बाद दीवार ऊपर से लगभग एक हाथ गिर गयी उसने दूनी शक्ति से दूसरा धक्का मारा, तो आधी दीवार गिर पड़ी।

दीवार का गिरना था कि अधमरे-से पड़े हुए सभी जानवर चेत उठे। तीनों घोड़ियाँ सरपट भाग निकलीं। फिर बकरियाँ निकलीं। इसके बाद भैसें खिसक गयी, पर गधे अभी तक ज्यों-के-यों खड़े थे।

हीरा ने पूछा-तुम दोनों क्यों नहीं भाग जाते?

एक गधे ने कहा-जो कहीं फिर पकड़ लिये जाय?

'तो क्या हरज है। अभी तो भागने का अवसर है।'

'हमें तो डर लगता है। हम यहीं पड़े रहेंगे।'

आधी रात से ऊपर जा चुकी थी। दोनों गधे अभी तक खड़े सोच रहे थे, भागें या न भागें और मोती अपने मित्र की रस्सी तोड़ने में लगा हुआ था, जब वह हार गया तो, हीरा ने कहा–तुम जाओ, मुझे मुझे यहीं पड़ा रहने दो। शायद कहीं भेंट हो जाय।

मोती ने आँखों में आँसू लाकर कहा––तुम मुझे इतना स्वार्थी समझते हो हीरा? हम और तुम इतने दिनों एक साथ रहे। आज तुम विपत्ति में पड़ गये, तो मै तुम्हें छोड़कर अलग हो जाऊँ? हीरा ने कहा–बहुत मार पड़ेगी। लोग समझ जायेंगे, यह तुम्हारी शरारत है।

मोती गर्व से बोला–जिस अपराध के लिए तम्हारे गले में बंधन पड़ा, उसके लिए अगर मुझ पर मार पड़े, तो क्या चिन्ता। इतना तो हो ही गया कि नौ–दस प्राणियों की जान बच गयी। वह सब तो आशीर्वाद देंगे।

यह कहते हुए मोती ने दोनों गधों को सींगों से मार–मारकर बाड़े के बाहर निकाला और तब अपने बन्धु के पास आकर सो रहा।

भोर होते ही मुंशी और चौकीदार और अन्य कर्मचारियों में कैसी खलबली मची, इसके लिखने को जरूरत नहीं। बस इतना ही काफी है कि मोती को खूब मरम्मत हुई और उसे भी मोटी रस्सी से बाँध दिया गया।

(6)

एक सप्ताह तक दोनों मित्र वहाँ बंधे पड़े रहे। किसी ने चारे का एक तृण भी न डाला। हाँ, एक बार पानी दिखा दिया जाता था। यही उनका आधार था। दोनों इतने दुर्बल हो गये थे कि उठा तक न जाता था। ठठरियाँ निकल आयी थीं।

एक दिन बाड़े के सामने डुग्गी बजने लगी और दोपहर होते–होते वहाँ पचास–साठ आदमी जमा हो गये। तब दोनों मित्र निकाले गये और उनकी देख–भाल होने लगी। लोग आ–आकर उनकी सूरत देखते और मन फीका करके चले जाते। ऐसे मृतक बैलों का कौन खरीदार होता?

सहसा एक दढ़ियल आदमी जिसकी आँखें लाल थीं और मुद्रा अत्यन्त कठोर, आया और दोनों मित्रों के कूल्हों में उँगली गोदकर मुंशीजी से बातें करने लगा। उसका चेहरा देखकर अन्तरज्ञान से दोनों मित्रों के दिल काँप उठे। वह कौन है और उन्हें क्यों टटोल रहा है, इस विषय में उन्हें कोई सन्देह न हुआ। दोनों

ने एक-दूसरे को भीत नेत्रों से देखा और सिर झुका लिया। हीरा ने कहा-गया के घर से नाहक भागे। अब जान न बचेगी।

मोती ने अश्रद्धा के भाव से उत्तर दिया-कहते हैं, भगवान् सबके ऊपर दया करते हैं। उन्हें हमारे ऊपर क्यों दया नहीं आती?

'भगवान् के लिए हमारा मरना-जीना दोनों बराबर है। चलो, अच्छा ही है, कुछ दिन उनके पास तो रहेंगे। एक बार भगवान् ने उस लड़की के रूप में हमें बचाया था। क्या अब न बचायेंगे!

'यह आदमी छुरी चलायेगा। देख लेना।'

'तो क्या चिन्ता है। मांस, खाल, सींग, हड्डी सब किसी-न-किसी काम आ जायँगी।

नीलाम हो जाने के बाद दोनों मित्र उस दढ़ियल के साथ चले। दोनों की बोटी-बोटी काँप रही थी! बेचारे पाँव तक न उठा सकते थे, पर भय के मारे गिरते-पड़ते भागे जाते थे क्योकि वह जरा भी चाल धीमी हो जाने पर जोर से डडा जमा देता था।

राह में गाय बैलों का एक रेवड़ हरे-हरे हार में चरता नजर आया। सभी जानवर प्रसन्न थे, चिकने, चपल। कोई उछलता था, कोई आनन्द से बैठा पागुर करता था। कितना सुखी जीवन था इनका, पर कितने स्वार्थी हैं सब। किसी को चिन्ता नहीं कि उनके दो भाई बधिक के हाथ पड़े कैसे दु:खी हैं!

सहसा दोनों को ऐसा मालूम हुआ, कि यह परिचित राह है। हाँ, इसी रास्ते से गया उन्हें ले गया था। वही खेत, वही बाग वही गाँव मिलने लगे। प्रतिक्षण उनकी चाल तेज होने लगी। सारी थकान, सारी दुर्बलता गायब हो गयी। अहा! यह लो! अपना ही हार आ गया। इसी कुएँ पर हम पुर चलाने आया करते थे। हाँ, यही कुआँ है।

मोती ने कहा-हमारा घर नगीच आ गया।

हीरा बोला-भगवान् की दया है। 'मैं तो अब घर भागता हूँ।'

'यह जाने देगा!'

'इसे मैं मार गिराता हूँ।'

'नहीं-नहीं, दौड़कर थान पर चलो। वहाँ से हम आगे न जायेंगे।'

दोनों उन्मत्त होकर बछड़ों की भाँति कुलेलें करते हुए घर की ओर दौड़े। वह हमारा थान है। दोनों दौड़कर अपने थान पर आये और खड़े हो गये। दढ़ियल भी पीछे-पीछे दौड़ा चला आता था।

झूरी द्वार पर बैठा धूप खा रहा था। बैलों को देखते ही दौड़ा और उन्हें बारी-बारी से गले लगाने लगा। मित्रों की आँखों से आनन्द के आँसू बहने लगे। एक झूरो का हाथ चाट रहा था।

दढ़ियल ने जाकर बैलों की रस्सियाँ पकड़ लीं।

भूरी ने कहा-मेरे बैल हैं।

'तुम्हारे बैल कैसे? मै मवेशीखाने से नीलाम लिये आता हूँ।'

मैं तो समझता हूँ, चुराये लिये आते हो। चुपके से चले जाओ। मेरे बैल हैं। मै बेचूँगा, तो बिकेंगे। किसी को मेरे बैल नीलाम करने का क्या अखतियार है!

'जाकर थाने में रपट कर दूँगा।'

'मेरे बैल हैं। इसका सबूत यह है कि मेरे द्वार पर खड़े हैं।'

दढ़ियल झल्लाकर बैलों को जबरदस्ती पकड़ ले जाने के लिए बढ़ा। उसी वक्त मोती ने सींग चलाया। दढ़ियल पीछे हटा। मोती ने पीछा किया। दढ़ियल भागा। मोती पीछे दौड़ा। गाँव के बाहर निकल जाने पर वह रुका, पर खड़ा दढ़ियल का रास्ता देख रहा था। दढ़ियल दूर खड़ा धमकियाँ दे रहा या, गालियाँ निकाल रहा था, पत्थर फेंक रहा था और मोती विजयी शूर की भाँति उसका रास्ता रोके खड़ा था। गाँव के लोग तमाशा देखते थे और हँसते थे। जब दढ़ियल हारकर चला गया, तो मोती अकड़ता हुआ लौटा।

हीरा ने कहा-मैं डर रहा था कि कहीं तुम गुस्से में आकर मार न बैठो।

'अगर वह मुझे पकड़ता, तो मैं बे-मारे न छोड़ता।'

'अब न आयेगा।'

'आयेगा तो दूर ही से खबर लूँगा। देखू कैसे ले जाता है!'

'जो गोली मरवा दे?'

'मर जाऊँगा, पर उसके काम तो न आऊँगा।'

'हमारी जान को कोई जान ही नहीं समझता।'

'इसीलिए कि हम इतने सीधे होते हैं।'

जरा देर में नौदों में खली, भूसा, चोकर, दाना भर दिया गया और दोनों मित्र खाने लगे। झूरी खड़ी दोनों को सहला रहा था और बीसों लड़के तमाशा देख रहे थे। सारे गाँव में उछाह-सा मालूम होता था। उसी समय मालकिन ने आकर दोनों के माथे चूम लिये।

कर्मभूमि

कर्मभूमि प्रेमचन्द का राजनीतिक उपन्यास है, जो पहली बार 1932 में प्रकाशित हुआ। आज कई प्रकाशकों द्वारा इसके कई संस्करण निकल चुके हैं। इस उपन्यास में विभिन्न राजनीतिक समस्याओं को कुछ परिवारों के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। ये परिवार यद्यपि अपनी पारिवारिक समस्याओं से जूझ रहे हैं तथापि तत्कालीन राजनीतिक आन्दोलन में भाग ले रहे हैं।

कथानक

उपन्यास का कथानक काशी और उसके आस-पास के गाँवों से संबंधित है। आन्दोलन दोनों ही जगह होता है और दोनों का उद्देश्य क्रान्ति है। किन्तु यह क्रान्ति गाँधी जी के सत्याग्रह से प्रभावित है। गाँधीजी का कहना था कि जेलों को इतना भर देना चाहिए कि उनमें जगह न रहे और इस प्रकार शांति और अहिंसा से अंग्रेज सरकार पराजित हो जाए। इस उपन्यास की मूल समस्या यही है। उपन्यास के सभी पात्र जेलों में ठूस दिए जाते हैं। इस तरह प्रेमचन्द क्रान्ति के व्यापक पक्ष का चित्रण करते हुए तत्कालीन सभी राजनीतिक एवं सामाजिक समस्याओं को कथानक से जोड़ देते हैं। निर्धनों के मकान की समस्या, अछूतोद्धार की समस्या, अछूतों के मन्दिर में प्रवेश की समस्या, भारतीय नारियों की मर्यादा और सतीत्व की रक्षा की समस्या, ब्रिटिश साम्राज्य के दमन चक्र से उत्पन्न समस्याएँ, भारतीय समाज में व्याप्त धार्मिक पाखण्ड की समस्या पुनर्जागरण और नवीन चेतना के समाज में संचरण की समस्या, राष्ट्र के लिए आन्दोलन करने वालों की पारिवारिक समस्याएँ आदि इस उपन्यास में बड़े यथार्थवादी तरीके से व्यक्त हुई हैं।

'कर्मभूमि' का नायक अमरकांत एक अस्थिर गांधीवादी के रूप में चित्रित किया गया है। अमरकांत तत्कालीन मध्यमवर्ग का प्रतिनिधि है, जिसकी मूल-प्रवृत्ति स्थिति के प्रति समझौतावादी है, उसकी राजनीतिक दृष्टि एवं चारित्रिक दृढ़ता अविश्वसनीय है। गांधीवाद से प्रभावित जन समुदाय की भावना, सामूहिक सत्याग्रह, गांवों के रचनात्मक कार्यक्रम का चित्रण पूरी आस्था से किया गया है। इनके सभी चरित्रों द्वारा लेखक ने राष्ट्रीय चेतना, आदर्श पारिवारिक व्यवस्था आदि में गांधी दर्शन स्पष्ट किया है।

समालोचना

प्रेमचन्द की रचना कौशल इस तथ्य में है कि उन्होंने इन समस्याओं का चित्रण सत्यानुभूति से प्रेरित होकर किया है कि उपन्यास पढ़ते समय तत्कालीन राष्ट्रीय सत्याग्रह आन्दोलन पाठक की आँखों के समक्ष सजीव हो जाता हैं। छात्रों तथा घटनाओं की बहुलता के बावजूद उपन्यास न कहीं बोझिल होता है न कहीं नीरस। प्रेमचन्द हर पात्र और घटना की डोर अपने हाथ में रखते हैं इसलिए कहीं शिथिलता नहीं आने देते। आदर्शोन्मुख यथार्थवाद से ओतप्रोत कर्मभूमि उपन्यास प्रेमचन्द की एक प्रौढ़ रचना है, जो हर तरह से प्रभावशाली बन पड़ी है।

3

जयशंकर प्रसाद की पुस्तकें

जयशंकर प्रसाद, हिन्दी कवि, नाटककार, उपन्यासकार तथा निबन्धकार थे। वे हिन्दी के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभों में से एक हैं। उन्होंने हिन्दी काव्य में एक तरह से छायावाद की स्थापना की जिसके द्वारा खड़ी बोली के काव्य में न केवल कमनीय माधुर्य की रससिद्ध धारा प्रवाहित हुई, बल्कि जीवन के सूक्ष्म एवं व्यापक आयामों के चित्रण की शक्ति भी संचित हुई और कामायनी तक पहुँचकर वह काव्य प्रेरक शक्तिकाव्य के रूप में भी मशहूर हो गए। बाद के प्रगतिशील एवं नई कविता दोनों धाराओं के प्रमुख आलोचकों ने उसकी इस शक्तिमत्ता को स्वीकृति दी। इसका एक और अतिरिक्त प्रभाव हुआ कि खड़ीबोली हिन्दी काव्य की निर्विवाद सिद्ध भाषा बन गयी।

आधुनिक हिन्दी साहित्य के इतिहास में इनके कृतित्त्व का गौरव अक्षुण्ण है। वे एक युगप्रवर्तक लेखक थे जिन्होंने एक ही साथ कविता, नाटक, कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में हिंदी को गौरवान्वित होने योग्य कृतियाँ दीं। कवि के रूप में वे निराला, पन्त, महादेवी के साथ छायावाद के प्रमुख स्तम्भ के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं, नाटक लेखन में भारतेन्दु के बाद वे एक अलग धारा बहाने वाले युगप्रवर्तक नाटककार रहे जिनके नाटक आज भी पाठक न केवल चाव से पढ़ते हैं, बल्कि उनकी अर्थगर्भिता तथा रंगमंचीय प्रासंगिकता भी दिनानुदिन बढ़ती ही गयी है। इस दृष्टि से उनकी महत्ता पहचानने एवं स्थापित करने में वीरेन्द्र नारायण, शांता गाँधी, सत्येन्द्र तनेजा एवं अब कई दृष्टियों से सबसे बढ़कर महेश

आनन्द का प्रशंसनीय ऐतिहासिक योगदान रहा है। इसके अलावा कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में भी उन्होंने कई यादगार कृतियाँ दीं। विविध रचनाओं के माध्यम से मानवीय करुणा और भारतीय मनीषा के अनेकानेक गौरवपूर्ण पक्षों का उद्‌घाटन। 48 वर्षों के छोटे से जीवन में कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास और आलोचनात्मक निबंध आदि विभिन्न विधाओं में रचनाएँ कीं।

जीवनी

जयशंकर प्रसाद का जन्म माघ शुक्ल 10, संवत् 1946 वि. (तदनुसार 30 जनवरी 1889ई. दिन-गुरुवार) को काशी के सरायगोवर्धन में हुआ। इनके पितामह बाबू शिवरतन साहू दान देने में प्रसिद्ध थे और इनके पिता बाबू देवीप्रसाद जी कलाकारों का आदर करने के लिये विख्यात थे। कच्ची गृहस्थी, मे ही मौसा की लडकी से शादी कर ली और एक अन्य पत्नी का भी उल्लेख आता है इनकी कुल सात संतानें मानी गयी हैं, जिसमें छह पुत्रियां व एक पुत्र था, इन सबका सामना उन्होंने धीरता और गंभीरता के साथ किया। प्रसाद जी की प्रारंभिक शिक्षा काशी में क्वींस कालेज में हुई, किंतु बाद में घर पर इनकी शिक्षा का व्यापक प्रबंध किया गया, जहाँ संस्कृत, हिंदी, उर्दू, तथा फारसी का अध्ययन इन्होंने किया। दीनबंधु ब्रह्मचारी जैसे विद्वान् इनके संस्कृत के अध्यापक थे। इनके गुरुओं में 'रसमय सिद्ध' की भी चर्चा की जाती है।

घर के वातावरण के कारण साहित्य और कला के प्रति उनमें प्रारंभ से ही रुचि थी और कहा जाता है कि नौ वर्ष की उम्र में ही उन्होंने 'कलाधर' के नाम से व्रजभाषा में एक सवैया लिखकर 'रसमय सिद्ध' को दिखाया था। उन्होंने वेद, इतिहास, पुराण तथा साहित्य शास्त्र का अत्यंत गंभीर अध्ययन किया था। वे बाग-बगीचे तथा भोजन बनाने के शौकीन थे और शतरंज के खिलाड़ी भी थे। वे नियमित व्यायाम करने वाले, सात्विक खान-पान एवं गंभीर प्रकृति के व्यक्ति थे। वे नागरीप्रचारिणी सभा के उपाध्यक्ष भी थे। क्षय रोग से नवम्बर 14 1937 (दिन-सोमवार) को प्रातःकाल (उम्र 47) उनका देहान्त काशी में हुआ।

कामायनी

कामायनी हिंदी भाषा का एक महाकाव्य है। इसके रचयिता जयशंकर प्रसाद हैं। यह आधुनिक छायावादी युग का सर्वोत्तम और प्रतिनिधि हिंदी

महाकाव्य है। 'प्रसाद' जी की यह अंतिम काव्य रचना 1936 ई. में प्रकाशित हुई, परंतु इसका प्रणयन प्रायः 7-8 वर्ष पूर्व ही प्रारंभ हो गया था। 'चिंता' से प्रारंभ कर 'आनंद' तक 15 सर्गों के इस महाकाव्य में मानव मन की विविध अंतर्वृत्तियों का क्रमिक उन्मीलन इस कौशल से किया गया है कि मानव सृष्टि के आदि से अब तक के जीवन के मनोवैज्ञानिक और सांस्कृतिक विकास का इतिहास भी स्पष्ट हो जाता है।

कला की दृष्टि से कामायनी छायावादी काव्यकला का सर्वोत्तम प्रतीक माना जा सकता है। चित्तवृत्तियों का कथानक के पात्र के रूप में अवतरण इस काव्य की अन्यतम विशेषता है और इस दृष्टि से लज्जा, सौंदर्य, श्रद्धा और इड़ा का मानव रूप में अवतरण हिंदी साहित्य की अनुपम निधि है। कामायनी प्रत्यभिज्ञा दर्शन पर आधारित है। साथ ही इस पर अरविन्द दर्शन और गांधी दर्शन का भी प्रभाव यत्र तत्र मिल जाता है।

कथानक

मानव के अग्रजन्मा देव निश्चित जाति के जीव थे। किसी भी प्रकार की चिंता न होने के कारण वे 'चिर-किशोर-वय' तथा 'नित्यविलासी' देव आत्म-मंगल-उपासना में ही विभोर रहते थे। प्रकृति यह अतिचार सहन न कर सकी और उसने अपना प्रतिशोध लिया। भीषण जलप्लावन के परिणामस्वरूप देवसृष्टि का विनाश हुआ, केवल मनु जीवित बचे। देवसृष्टि के विध्वंस पर जिस मानव जाति का विकास हुआ उसके मूल में थी 'चिंता', जिसके कारण वह जरा और मृत्यु का अनुभव करने को बाध्य हुई। चिंता के अतिरिक्त मनु में दैवी और आसुरी वृत्तियों का भी संघर्ष चल रहा था जिसके कारण उनमें एक ओर आशा, श्रद्धा, लज्जा और इड़ा का आविर्भाव हुआ तो दूसरी ओर कामवासना, ईर्षा और संघर्ष की भी भावना जगी। इन विरोधी वृत्तियों के निरंतर घात-प्रतिघात से मनु में निर्वेद जगा और श्रद्धा के पथ प्रदर्शन से यही निर्वेद क्रमशः दर्शन और रहस्य का ज्ञान प्राप्त कर अंत में आंनद की उपलब्धि का कारण बना। यह चिंता से आनंद तक मानव के मनौवैज्ञानिक विकास का क्रम है। साथ ही मानव के आखेटक रूप में प्रारंभ कर श्रद्धा के प्रभाव से पशुपालन, कृषक जीवन और इड़ा के सहयोग से सामाजिक और औद्योगिक क्रांति के रूप में भौतिक विकास एवं अंत में आध्यात्मिक शांति की प्राप्ति का उद्योग मानव के सांस्कृतिक विकास

के विविध सोपान हैं। इस प्रकार कामायनी मानव जाति के उद्‌भव और विकास की कहानी है।

प्रसाद ने इस काव्य के प्रधान पात्र 'मनु' और कामपुत्री कामायनी 'श्रद्धा' को ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में माना है, साथ ही जलप्लावन की घटना को भी एक ऐतिहासिक तथ्य स्वीकार किया है। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम कांड के आठवें अध्याय से जलप्लावन संबंधी उल्लेखों का संकलन कर प्रसाद ने इस काव्य का कथानक निर्मित किया है, साथ ही उपनिषद् और पुराणों में मनु और श्रद्धा का जो रूपक दिया गया है, उन्होंने उसे भी अस्वीकार नहीं किया, वरन् कथानक को ऐसा स्वरूप प्रदान किया जिसमें मनु, श्रद्धा और इड़ा के रूपक की भी संगति भली भाँति बैठ जाए। परंतु सूक्ष्म सृष्टि से देखने पर जान पड़ता है कि इन चरित्रों के रूपक का निर्वाह ही अधिक सुंदर और सुसंयत रूप में हुआ, ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में वे पूर्णत: एकांगी और व्यक्तित्त्वहीन हो गए हैं।

मनु मन के समान ही अस्थिरमति हैं। पहले श्रद्धा की प्रेरणा से वे तपस्वी जीवन त्याग कर प्रेम और प्रणय का मार्ग ग्रहण करते हैं, फिर असुर पुरोहित आकुलि और किलात के बहकावे में आकर हिंसावृत्ति और स्वेच्छाचरण के वशीभूत हो श्रद्धा का सुख-साधन-निवास छोड़ झंझा समीर की भाँति भटकते हुए सारस्वत प्रदेश में पहुँचते हैं, श्रद्धा के प्रति मनु के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध काम का अभिशाप सुन हताश हो किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं और इड़ा के संसर्ग से बुद्धि की शरण में जा भौतिक विकास का मार्ग अपनाते हैं। वहाँ भी संयम के अभाव के कारण इड़ा पर अत्याचार कर बैठते हैं और प्रजा से उनका संघर्ष होता है। इस संघर्ष में पराजित और प्रकृति के रुद्र प्रकोप से विक्षुब्ध मनु जीवन से विरक्त हो पलायन कर जाते हैं और अंत में श्रद्धा के पथप्रदर्शन में उसका अनुसरण करते हुए आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करते हैं। इस प्रकार श्रद्धा-आस्तिक्य भाव तथा इड़ा बौद्धिक क्षमता का मनु के मन पर जो प्रभाव पड़ता है उसका सुंदर विश्लेषण इस काव्य में मिलता है।

सर्ग

कामायनी 15 सर्ग (अध्यायों) का महाकाव्य है। ये सर्ग निम्नलिखित हैं-

1. चिन्ता 2. आशा 3. श्रद्धा 4. काम 5. वासना 6. लज्जा 7. कर्म 8. ईर्ष्या 9. इडा (तर्क, बुद्धि) 10. स्वप्न 11. संघर्ष 12. निर्वेद (त्याग) 13. दर्शन 14. रहस्य

15. आनन्द सूत्र–(1) चिंता की आशा से श्रद्धा ने काम वासना को लज्जित किया। (2) कर्म की ईर्ष्या से इड़ा ने स्वप्न में संघर्ष किया। (3) निदरआ (निद्रा)।

मूल संवेदना

काव्य रूप की दृष्टि से कामायनी चिंतनप्रधान है, जिसमें कवि ने मानव को एक महान् संदेश दिया है। 'तप नहीं, केवल जीवनसत्य' के रूप में कवि ने मानव जीवन में प्रेम की महत्ता घोषित की है। यह जगत् कल्याणभूमि है, यही श्रद्धा की मूल स्थापना है। इस कल्याणभूमि में प्रेम ही एकमात्र श्रेय और प्रेय है। इसी प्रेम का संदेश देने के लिए कामायनी का अवतार हुआ है। प्रेम मानव और केवल मानव की विभूति है। मानवेतर प्राणी, चाहे वे चिरविलासी देव हों, चाहे देव और प्राण की पूजा में निरत असुर, दैत्य और दानव हों, चाहे पशु हों, प्रेम की कला और महिमा वे नहीं जानते, प्रेम की प्रतिष्ठा केवल मानव ने की है। परंतु इस प्रेम में सामरस्य की आवश्यकता है। समरसता के अभाव में यह प्रेम उच्छृंखल प्रणयवासना का रूप ले लेता है। मनु के जीवन में इस सामरस्य के अभाव के कारण ही मानव प्रजा को काम का अभिशाप सहना पड़ रहा है। भेद–भाव, ऊँच–नीच की प्रवृत्ति, आडंबर और दंभ की दुर्भावना सब इसी सामरस्य के अभाव से उत्पन्न होती हैं, जिससे जीवन दु:खमय और अभिशापग्रस्त हो जाता है। कामायनी में इसी कारण समरसता का आग्रह है। यह समरसता द्वंद्व भावना में सामंजस्य उपस्थित करती है। संसार में द्वंद्वों का उद्‌गम शाश्वत तत्त्व है। फूल के साथ काँटे, भाव के साथ अभाव, सुख के साथ दु:ख और रात्रि के साथ दिन नित्य लगा ही रहता है। मानव इनमें अपनी रुचि के अनुसार एक को चुन लेता है, दूसरे को छोड़ देता है और यही उसके विषाद का कारण है। मानव के लिए दोनों को स्वीकार करना आवश्यक है, किसी एक को छोड़ देने से काम नहीं चलता। यही द्वंद्वों की समन्वय स्थिति ही सामरस्य है। प्रसाद ने हृदय और मस्तिष्क, भक्ति और ज्ञान, तप, संयम और प्रणय, प्रेम, इच्छा, ज्ञान और क्रिया सबके समन्वय पर बल दिया है।

अजातशत्रु

जयशंकर प्रसाद

इतिहास में घटनाओं की प्राय: पुनरावृत्ति होते देखी जाती है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि उसमें कोई नई घटना होती ही नहीं। किन्तु असाधारण नई घटना

भी भविष्य में फिर होने की आशा रखती है। मानव-समाज की कल्पना का भण्डार अक्षय है, क्योंकि वह इच्छा-शक्ति का विकास है। इन कल्पनाओं का, इच्छाओं का मूल-सूत्र बहुत ही सूक्ष्म और अपरिस्फुट होता है। जब वह इच्छा-शक्ति किसी व्यक्ति या जाति में केन्द्रीभूत होकर अपना सफल या विकसित रूप धारण करती है, तभी इतिहास की सृष्टि होती है। विश्व में जब तक कल्पना इयत्ता को नहीं प्राप्त होती, तब तक वह रूप-परिवर्तन करती हुई, पुनरावृत्ति करती ही जाती है। समाज की अभिलाषा अनन्त स्रोतवाली है। पूर्व कल्पना के पूर्ण होते-होते एक नई कल्पना उसका विरोध करने लगती है और पूर्व कल्पना कुछ काल तक ठहरकर, फिर होने के लिए अपना क्षेत्र प्रस्तुत करती है। इधर इतिहास का नवीन अध्याय खुलने लगता है। मानव-समाज के इतिहास का इसी प्रकार संकलन होता है।

भारत का ऐतिहासिक काल गौतम बुद्ध से माना जाता है, क्योंकि उस काल की बौद्ध-कथाओं में वर्णित व्यक्तियों का पुराणों की वंशावली में भी प्रसंग आता है। लोग वहीं से प्रामाणिक इतिहास मानते हैं। पौराणिक काल के बाद गौतम बुद्ध के व्यक्तित्त्व ने तत्कालीन सभ्य संसार में बड़ा भारी परिवर्तन किया। इसलिए हम कहेंगे कि भारत के ऐतिहासिक काल का प्रारम्भ धन्य है, जिसने संसार में पशु-कीट-पतंग से लेकर इन्द्र तक के साम्यवाद की शंखध्वनि की थी। केवल इसी कारण हमें, अपना अतीव प्राचीन इतिहास रखने पर भी, यहीं से इतिहास-काल का प्रारम्भ मानने से गर्व होना चाहिए।

भारत-युद्ध के पौराणिक काल के बाद इन्द्रप्रस्थ के पाण्डवों की प्रभुता कम होने पर बहुत दिनों तक कोई सम्राट् नहीं हुआ। भिन्न-भिन्न जातियाँ अपने-अपने देशों में शासन करती थीं। बौद्धों के प्राचीन संघों में ऐसे 16 राष्ट्रों के उल्लेख हैं, प्रायः उनका वर्णन भौगोलिक क्रम के अनुसार न होकर जातीयता के अनुसार है। उनके नाम हैं-अंग, मगध, काशी, कोसल, वृजि, मल्ल, चेदि, वत्स, कुरु, पांचाल मत्स्य, शूरसेन, अश्वक, अवन्ति, गांधार और काम्बोज।

उस काल में जिन लोगों से बौद्धों का सम्बन्ध हुआ है, इनमें उन्हीं का नाम है। जातक-कथाओं में शिवि, सौवीर, नद्र, विराट् और उद्यान का भी नाम आया है, किन्तु उनकी प्रधानता नहीं है। उस समय जिन छोटी-से-छोटी जातियों, गणों और राष्ट्रों का सम्बन्ध बौद्ध धर्म से हुआ, उन्हें प्रधानता दी गई, जैसे 'मल्ल' आदि।

अपनी-अपनी स्वतन्त्र कुलीनता और आचार रखने वाले इन राष्ट्रों में-कितनों ही में गणतन्त्र शासन-प्रणाली भी प्रचलित थी-निसर्ग-नियमानुसार एकता, राजनीति के कारण नहीं, किन्तु एक-से होने वाली धार्मिक क्रान्ति से थी।

वैदिक हिंसापूर्ण यज्ञों और पुरोहितों के एकाधिपत्य से साधारण जनता के हृदय-क्षेत्र में विद्रोह की उत्पत्ति हो रही थी। उसी के फलस्वरूप जैन-बौद्ध धर्मों का प्रादुर्भाव हुआ। चरम अहिंसावादी जैन-धर्म के बाद बौद्ध-धर्म का प्रादुर्भाव हुआ। वह हिंसामय 'वेद-वाद' और पूर्ण अहिंसा वाली जैन-दीक्षाओं के 'अति-वाद' से बचता हुआ एक मध्यवर्ती नया मार्ग था। सम्भवत: धर्म-चक्र-प्रवर्तन के समय गौतम ने इसी से अपने धर्म को 'मध्यमा प्रतिपदा' के नाम से अभिहित किया और इसी धार्मिक क्रान्ति ने भारत के भिन्न-भिन्न राष्ट्रों को परस्पर सन्धि-विग्रह के लिए बाध्य किया।

इन्द्रप्रस्थ और अयोध्या के प्रभाव का ह्रास होने पर, इसी धर्म के प्रभाव से पाटलिपुत्र पीछे बहुत दिनों तक भारत की राजधानी बना रहा। उस समय के बौद्ध-ग्रन्थों में ऊपर कहे हुए बहुत-से राष्ट्रों में से चार प्रमुख राष्ट्रों का अधिक वर्णन है-कोसल, मगध, अवन्ति और वत्स। कोसल का पुराना राष्ट्र सम्भवत: उस काल में सब राष्ट्रों से विशेष मर्यादा रखता था, किन्तु वह जर्जर हो रहा था। प्रसेनजित् वहाँ का राजा था। अवन्ति में प्रद्योत (पज्जोत) राजा था। मालव का राष्ट्र भी उस समय सबल था। मगध, जिसने कौरवों के बाद भारत में महान् साम्राज्य स्थापित किया, शक्तिशाली हो रहा था। बिम्बिसार वहाँ के राजा थे। अजातशत्रु वैशाली (वृजि) की राजकुमारी से उत्पन्न, उन्हीं का पुत्र था। इसका वर्णन भी बौद्धों की प्राचीन कथाओं में बहुत मिलता है। बिम्बिसार की बड़ी रानी कोसला (वासवी) कोसल नरेश प्रसेनजित् की बहन थी। वत्स-राष्ट्र की राजधानी कौशाम्बी थी, जिसका खँडहर जिला बाँदा (करुई सब-डिवीजन) में यमुना-किनारे 'कोसम' नाम से प्रसिद्ध है। उदयन इसी कौशाम्बी का राजा था। इसने मगध-राज और अवन्ति-नरेश की राजकुमारियों से विवाह किया था। भारत के सहस्र-रजनी-चरित्र 'कथा-सरित्सागर' का नायक इसी का पुत्र नरवाहनदत्त है।

वृहत्कथा (कथा-सरित्सागर) के आदि आचार्य वररुचि हैं, जो कौशाम्बी में उत्पन्न हुए थे और जिन्होंने मगध में नन्द का मन्त्रित्व किया। उदयन के

समकालीन अजातशत्रु के बाद उदयाश्व, नन्दिवर्द्धन और महानन्द नाम के तीन राजा मगध के सिंहासन पर बैठे। शूद्रा के गर्भ से उत्पन्न, महानन्द के पुत्र, महादूाम ने नंद-वंश की नींव डाली। इसके बाद सुमाल्य आदि आठ नन्दों ने शासन किया। (विष्णुपुराण, 4 अंश)। किसी के मत से महानन्द के बाद नवनन्दों ने राज्य किया। इस 'नवनन्द' वाक्य के दो अर्थ हुए-नवनन्द (नवीन नन्द), तथा महादूाम और सुमाल्य आदि नौ नन्द। इनका राज्यकाल भी, पुराणों के अनुसार, 100 वर्ष होता है। नन्द के पहले राजाओं का राज्य-काल भी, पुराणों के अनुसार, लगभग 100 वर्ष होता है। ढुण्ढि ने मुद्राराक्षस के उपोद्घात में अन्तिम नन्द का नाम धननन्द लिखा है। इसके बाद योगानन्द का मन्त्री वररुचि हुआ। यदि ऊपर लिखी हुई पुराणों की गणना सही है, तो मानना होगा कि उदयन के पीछे 200 वर्ष के बाद वररुचि हुए, क्योंकि पुराणों के अनुसार 4 शिशुनाग वंश के और 9 नन्दवंश के राजाओं का राज्य-काल इतना ही होता है। महावंश और जैनों के अनुसार कालाशोक के बाद केवल नवनन्द का नाम आता है। कालाशोक पुराणों का महापद्म नन्द है। बौद्धमतानुसार इन शिशुनाग तथा नन्दों का सम्पूर्ण राज्यकाल 100 वर्ष से कुछ ही अधिक होता है। यदि इसे माना जाए, तो उदयन के 100-125 वर्ष पीछे वररुचि का होना प्रमाणित होगा। कथा-सरित्सागर में इसी का नाम 'कात्यायन' भी है-"नाम्नावररुचिः किं च कात्यायन इति श्रुतः"। इन विवरणों से प्रतीत होता है कि वररुचि उदयन के 125-200 वर्ष बाद हुए। विख्यात उदयन की कौशाम्बी वररुचि की जन्मभूमि है।

मूल वृहत्कथा वररुचि ने काणभूति से कही और काणभूति ने गुणाढ्य से। इससे व्यक्त होता है कि यह कथा वररुचि के मस्तिष्क का आविष्कार है, जो सम्भवतः उसने संक्षिप्त रूप से संस्कृत में कही थी, क्योंकि उदयन की कथा उसकी जन्म-भूमि में किम्वदन्तियों के रूप में प्रचलित रही होगी। उसी मूल उपाख्यान को क्रमशः काणभूति और गुणाढ्य ने प्राकृत और पैशाची भाषाओं में विस्तारपूर्वक लिखा। महाकवि क्षेमेन्द्र ने उसे वृहत्कथा-मंजरी नाम से, संक्षिप्त रूप से, संस्कृत में लिखा। फिर काश्मीर-राज अनन्तदेव के राज्यकाल में कथा-सरित्सागर की रचना हुई। इस उपाख्यान को भारतीयों ने बहुत आदर दिया और वत्सराज उदयन कई नाटकों और उपाख्यानों में नायक बनाए गए। स्वप्न-वासवदत्ता, प्रतिज्ञा-यौगन्धरायण और रत्नावली में इन्हीं का वर्णन है। 'हर्षचरित' में लिखा है-"नागवन विहारशीलं च मायामातंगांगान्निर्गताः महासेनसैनिकाः

वत्सपतिंन्ययंसिषु।'' मेघदूत में भी-"प्राप्यावन्तीनुदयन- कथाकोविदग्राममवृद्धान्" और "प्रद्योतस्य प्रियदुहितरं वत्सराजोऽत्र जह्वे" इत्यादि हैं। इससे इस कथा की सर्वलोकप्रियता समझी जा सकती है। वररुचि ने इस उपाख्यान-माला को सम्भवत: 350 ई. पूर्व लिखा होगा। सातवाहन नामक आंध्र-नरपति के राजपण्डित गुणाढ्य ने इसे वृहत्कथा नाम से ईसा की पहली शताब्दी में लिखा। इस कथा का नायक नरवाहनदत्त इसी उदयन का पुत्र था।

बौद्धों के यहाँ इसके पिता का नाम 'परन्तप' मिलता है और 'मरन परिदीपितउदेनिवस्तु' के नाम से एक आख्यायिका है। उसमें भी (जैसा कि कथा-सरित्सागर में) इसकी माता का गरुड़ वंश के पक्षी द्वारा उदयगिरि की गुफा में ले जाया जाना और वहाँ एक मुनि कुमार का उनकी रक्षा और सेवा करना लिखा है। बहुत दिनों तक इसी प्रकार साथ रहते-रहते मुनि से उसका स्नेह हो गया और उसी से वह गर्भवती हुई। उदयगिरि (कलिंग) की गुफा में जन्म होने के कारण लड़के का नाम उदयन पड़ा। मुनि ने उसे हस्ती-वश करने की विद्या और भी कई सिद्धियाँ दीं। एक वीणा भी मिली (कथा-सरित्सागर के अनुसार, वह प्राण बचाने पर, नागराज ने दी थी)। वीणा द्वारा हाथियों और शबरों की बहुत-सी सेना एकत्र करके उसने कौशाम्बी को हस्तगत किया और अपनी राजधानी बनाया, किन्तु वृहत्कथा के आदि आचार्य वररुचि का कौशाम्बी में जन्म होने के कारण उदयन की ओर विशेष पक्षपात-सा दिखाई देता है। अपने आख्यान के नायक को कुलीन बनाने के लिए उसने उदयन को पाण्डव वंश का लिखा है। उनके अनुसार उदयन गाण्डीवधारी अर्जुन की सातवीं पीढ़ी में उत्पन्न सहस्रानीक का पुत्र था। बौद्धों के मतानुसार 'परन्तप' के क्षेत्रज पुत्र उदयन की कुलीनता नहीं प्रकट होती, परन्तु वररुचि ने लिखा है कि इन्द्रप्रस्थ नष्ट होने पर पाण्डव-वंशियों ने कौशाम्बी को राजधानी बनाया। वररुचि ने यों सहस्रानीक से कौशाम्बी के राजवंश का आरम्भ माना है। कहा जाता है, इसी उदयन ने अवन्तिका को जीतकर उसका नाम उदयपुरी या उज्जयनपुरी रखा। कथा-सरित्सागर में उदयन के बाद नरवाहनदत्त का ही वर्णन मिलता है। विदित होता है, एक-दो पीढ़ी चलकर उदयन का वंश मगध की साम्राज्य-लिप्सा और उसकी रणनीति में अपने स्वतन्त्र अस्तित्त्व को नहीं रख सका।

किन्तु विष्णुपुराण की एक प्राचीन प्रति में कुछ नया शोध मिला है और उससे कुछ और नई बातों का पता चलता है। विष्णुपुराण के चतुर्थ अंक के 21वें

अध्याय में लिखा है कि "तस्यापि, जन्मेजयश्रुतसेनोप्रसेनभीमसेना: पुत्राश्चत्वारो भविष्यन्ति। । 1। तस्यापर: शतानीको भविष्यति योऽसौ...विषयविरक्तचित्तो... निर्वाणमाप्यति। । 2। । शतानीकादश्वमेघदत्तो भविता। तस्मादप्यधिसीमकृष्ण: अधिसीमकृष्णात् नृचक्षु: यो गंगयापहृते हस्तिनापुरे कौशाम्ब्याम् निवत्स्यति। "

इसके बाद 17 राजाओं के नाम हैं। फिर "ततोप्यपर: शतानीक: तस्माच्च उदयन: उदयनादहीनर:" लिखा है।

इससे दो बातें व्यक्त होती हैं। पहली यह कि शतानीक कौशाम्बी में नहीं गए, किन्तु नृचक्षु नामक पाण्डव-वंशी राजा हस्तिनापुर के गंगा में बह जाने पर कौशम्बी गए। उनसे 29वीं पीढ़ी में उदयन हुए। सम्भवत: उनके पुत्र अहीनर का ही नाम कथा-सरित्सागर में नरवाहनदत्त लिखा है।

दूसरी यह कि शतानीक इस अध्याय में दोनों स्थान पर 'अपरशतानीक' करके लिखा गया है। 'अपरशतानीक' का विषय-विरागी होना, विरक्त हो जाना लिखा है। सम्भवत: यह शतानीक उदयन के पहले का कौशाम्बी का राजा है। अथवा बौद्धों की कथा के अनुसार इसकी रानी का क्षेत्रज पुत्र उदयन है, किन्तु वहाँ नाम-इस राजा का परन्तप है। जन्मेजय के बाद जो 'अपरशतानीक' आता है, वह भ्रम-सा प्रतीत होता है, क्योंकि जन्मेजय ने अश्वमेध यज्ञ किया था, इसलिए जन्मेजय के पुत्र का नाम अश्वमेधदत्त होना कुछ संगत प्रतीत होता है, अतएव कौशाम्बी में इस दूसरे शतानीक की ही वास्तविक स्थिति ज्ञात होती है, जिसकी स्त्री किसी प्रकार (गरुड़ पक्षी द्वारा) हरी गई। उस राजा शतानीक के विरागी हो जाने पर उदयगिरि की गुफा में उत्पन्न विजयी और वीर उदयन, अपने बाहुबल से, कौशाम्बी का अधिकारी हो गया। इसके बाद कौशाम्बी के सिंहासन पर क्रमश: अहीनर (नरवाहनदत्त), खण्डपाणि, नरमित्र और क्षेमक-ये चार राजा बैठे। इसके बाद कौशाम्बी के राजवंश या पाण्डव-वंश का अवसान होता है।

अर्जुन से सातवीं पीढ़ी में उदयन का होना तो किसी प्रकार से ठीक नहीं माना जा सकता, क्योंकि अर्जुन के समकालीन जरासंध के पुत्र सहदेव से लेकर, शिशुनाग वंश से पहले के जरासंध वंश के 22 राजा मगध के सिंहासन पर बैठ चुके हैं। उनके बाद 12 शिशुनाग वंश के बैठे जिनमें छठे और सातवें राजाओं के समकालीन उदयन थे। तो क्या एक वंश में उतने ही समय में, तीस पीढ़ियाँ हो गईं जितने में कि दूसरे वंश में केवल सात पीढ़ियाँ हुईं! यह बात कदापि मानने योग्य न होगी। सम्भवत: इसी विषमता को देखकर श्रीगणपति शास्त्री ने

"अभिमन्योः पंचविंश सन्तानः" इत्यादि लिखा है। कौशाम्बी में न तो अभी विशेष खोज हुई है और न शिलालेख इत्यादि ही मिले हैं, इसलिए सम्भव है, कौशाम्बी के राजवंश का रहस्य अभी पृथ्वी के गर्भ में ही दबा पड़ा हो।

कथा-सरित्सागर में उदयन की दो रानियों के ही नाम मिले हैं। वासवदत्ता और पद्मावती। किन्तु बौद्धों के प्राचीन ग्रन्थों में उसकी तीसरी रानी मागन्धी का नाम भी आया है।

वासवदत्ता उसकी बड़ी रानी थी जो अवन्ति के चण्डमहासेन की कन्या थी। इसी चण्ड का नाम प्रद्योत भी था, क्योंकि मेघदूत में "प्रद्योतस्य प्रियदुहितरं वत्सराजोऽत्र जह्वे" और किसी प्रति में "चण्डस्यात्र प्रियदुहितरं वत्सराजो विजह्वे" ये दोनों पाठ मिलते हैं। इधर बौद्धों के लेखों में अवन्ति के राजा का नाम प्रद्योत मिलता है और कथा-सरित्सागर के एक श्लोक से एक भ्रम और भी उत्पन्न होता है। वह यह है-"ततश्चण्डमहासेनप्रद्योतो पितरो द्वयो देव्योः" तो क्या प्रद्योत पद्मावती के पिता का नाम था किन्तु कुछ लोग प्रद्योत और चण्डमहासेन को एक ही मानते हैं। यही मत ठीक है, क्योंकि भास ने अवन्ति के राजा का नाम प्रद्योत ही लिखा है और वासवदत्ता में उसने यह दिखाया है कि मगध राजकुमारी पद्मावती को यह अपने लिए चाहता था। जैकोबी ने अपने वासवदत्ता के अनुवाद में अनुमान किया कि यह प्रद्योत चण्डमहासेन का पुत्र था, किन्तु जैसा कि प्राचीन राजाओं में देखा जाता है, यह अवश्य अवन्ति के राजा का मुख्य नाम था। उसका राजकीय नाम चण्डमहासेन था। बौद्धों के लेख से प्रसेनजित् के एक-दूसरे नाम 'अग्निदत्त' का भी पता लगता है। बिम्बिसार 'श्रेणिक' और अजातशत्रु 'कुणीक' के नाम से भी विख्यात थे।

पद्मावती, उदयन की दूसरी रानी, के पिता के नाम में बड़ा मतभेद है। यह तो निर्विवाद है कि वह मगधराज की कन्या थी, क्योंकि कथा-सरित्सागर में भी यही लिखा है, किन्तु बौद्धों ने उसका नाम श्यामावती लिखा है, जिस पर मागन्धी के द्वारा उत्तेजित किए जाने पर, उदयन बहुत नाराज हो गए थे। वे श्यामावती के ऊपर, बौद्ध-धर्म का उपदेश सुनने के कारण, बहुत क्रुद्ध हुए। यहाँ तक कि उसे जला डालने का भी उपक्रम हुआ था, किन्तु भास की वासवदत्ता में इस रानी के भाई का नाम दर्शक लिखा है। पुराणों में भी अजातशत्रु के बाद दर्शक, दर्भक और वंशक-इन कई नामों से अभिहित एक राजा का उल्लेख है, किन्तु महावंश आदि बौद्ध ग्रन्थों में केवल अजातशत्रु के पुत्र उदयाश्व का ही

नाम उदायिन, उदयभद्रक के रूपान्तर में मिलता है। मेरा अनुमान है कि पद्मावती अजातशत्रु की बहन थी और भास ने सम्भवत: (कुणीक के स्थान में) अजात के दूसरे नाम दर्शक का ही उल्लेख किया है जैसा कि चण्डमहासेन के लिए प्रद्योत नाम का प्रयोग किया है।

यदि पद्मावती अजातशत्रु की कन्या हुई, तो इन बातों को भी विचारना होगा कि जिस समय बिम्बिसार मगध में, अपनी वृद्धावस्था में राज्य कर रहा था, उस समय पद्मावती का विवाह हो चुका था। प्रसेनजित् उसका समवयस्क था। वह बिम्बिसार का साला था, कलिंगदत्त ने प्रसेनजित् को अपनी कन्या देनी चाही थी, किन्तु स्वयं उसकी कन्या कलिंगसेना ने प्रसेन को वृद्ध देखकर उदयन से विवाह करने का निश्चय किया था।

"श्रावस्तीं प्राप्य पूर्वं च तं प्रसेनजितम् नृपम्!
मृगयानिर्गतं दूराज्जरापाण्डुं ददर्श सा। ।
तमुद्यानगता सावैवत्सेशं सख्युरुदीरितम।" इत्यादि
(मदनमंजुका लम्बक)

अर्थात्-पहले श्रावस्ती में पहुँचकर, उद्यान में ठहरकर, उसने सखी के बताए हुए वत्सराज प्रसेनजित् को, शिकार के लिए जाते समय, दूर से देखा। वह वृद्धावस्था के कारण पाण्डु-वर्ण हो रहे थे।

इधर बौद्धों ने लिखा है कि "गौतम ने अपना नवाँ चातुर्मास्य कौशाम्बी में, उदयन के राज्य-काल में, व्यतीत किया और 45 चातुर्मास्य करके उनका निर्वाण हुआ।" ऐसा भी कहा जाता है-अजातशत्रु के राज्याभिषेक के नवें या आठवें वर्ष में गौतम का निर्वाण हुआ। इससे प्रतीत होता है कि गौतम के 35वें 36वें चातुर्मास्य के समय अजातशत्रु सिंहासन पर बैठा। तब तक वह बिम्बिसार का प्रतिनिधि या युवराज मात्र था, क्योंकि अजात ने अपने पिता को अलग करके, प्रतिनिधि रूप से, बहुत दिनों तक राज-कार्य किया था और इसी कारण गौतम ने राजगृह का जाना बन्द कर दिया था। 35वें चातुर्मास्य में 9 चातुर्मास्यों का समय घटा देने से निश्चय होता है कि अजात के सिंहासन पर बैठने के 26 वर्ष पहले उदयन ने पद्मावती और वासवदत्ता से विवाह कर लिया था और वह एक स्वतन्त्र शक्तिशाली नरेश था। इन बातों को देखने से यह ठीक जँचता है कि पद्मावती अजातशत्रु की बड़ी बहन थी और पद्मावती को अजातशत्रु से बड़ी मानने के लिए यह विवरण यथेष्ट है। दर्शक का उल्लेख पुराणों में मिलता है

और भास ने भी अपने नाटक में वही नाम लिखा है, किन्तु समय का व्यवधान देखने से-और बौद्धों के यहाँ उसका नाम न मिलने से-यही अनुमान होता है कि प्रायः जैसे एक ही राजा को बौद्ध, जैन और पौराणिक लोग भिन्न-भिन्न नाम से पुकारते हैं, वैसे ही दर्शक, कुणीक और अजातशत्रु-ये नाम एक ही व्यक्ति के हैं, जैसे बिम्बिसार के लिए विन्ध्यसेन और श्रेणिक-ये दो नाम और भी मिलते हैं। प्रोफेसर गैगर महावंश के अनुवाद में बड़ी दृढ़ता से अजातशत्रु और उदयाश्व के बीच में दर्शक नाम के किसी राजा के होने का विरोध करते हैं। कथा-सरित्सागर के अनुसार प्रद्योत ही पद्मावती के पिता का नाम था। इन सब बातों को देखने से यही अनुमान होता है कि पद्मावती बिम्बिसार की बड़ी रानी कोसला (वासवी) के गर्भ से उत्पन्न मगध राजकुमारी थी।

नवीन उन्नतिशील राष्ट्र मगध, जिसने कौरवों के बाद महान् साम्राज्य भारत में स्थापित किया, इस नाटक की घटना का केन्द्र है। मगध को कोसल का दिया हुआ, राजकुमारी कोसला (वासवी) के दहेज में काशी का प्रान्त था, जिसके लिए मगध के राजकुमार अजातशत्रु और प्रसेनजित् से युद्ध हुआ। इस युद्ध का कारण, काशी-प्रान्त का आयकर लेने का संघर्ष था। 'हरितमात', 'बड्ढकीसूकर', 'तच्छसूकर' जातक की कथाओं का इसी घटना से सम्बन्ध है।

अजातशत्रु जब अपने पिता के जीवन में ही राज्याधिकार का भोग कर रहा था और जब उसकी विमाता कोसलकुमारी वासवी अजात के द्वारा एक प्रकार से उपेक्षित-सी हो रही थी, उस समय उसके पिता (कोसलनरेश) प्रसेनजित् ने उद्योग किया कि मेरे दिए हुए काशी-प्रान्त का आयकर वासवी को ही मिले। निदान, इस प्रश्न को लेकर दो युद्ध हुए। दूसरे युद्ध में अजातशत्रु बन्दी हुआ। सम्भवतः इस बार उदयन ने भी कोसल को सहायता दी थी। फिर भी निकट-सम्बन्धी जानकर समझौता होना अवश्यम्भावी था, अतएव प्रसेनजित् ने मैत्री चिस्थायी करने के लिए और अपनी बात भी रखने के लिए अजातशत्रु से अपनी दुहिता वाजिराकुमारी का ब्याह कर दिया।

अजातशत्रु के हाथ से उसके पिता बिम्बिसार की हत्या होने का उल्लेख भी मिलता है। 'थुस जातक कथा' अजातशत्रु के अपने पिता से राज्य छीन लेने के सम्बन्ध में, भविष्यवाणी के रूप में, कही गई है। परन्तु बुद्धघोष ने बिम्बिसार को बहुत दिन तक अधिकारच्युत होकर बन्दी की अवस्था में रहना लिखा है और जब अजातशत्रु को पुत्र हुआ, तब उसे 'पैतृक स्नेह' का मूल्य समझ पड़ा। उस

समय वह स्वयं पिता को कारागार से मुक्त करने के लिए गया, किन्तु उस समय वहाँ महाराज बिम्बिसार की अन्तिम अवस्था थी। इस तरह से भी पितृहत्या का कलंक उस पर आरोपित किया जाता है, किन्तु कई विद्वानों के मत से इसमें सन्देह है कि अजात ने वास्तव में पिता को बन्दी बनाया या मार डाला था। उस काल की घटनाओं को देखने से प्रतीत होता है कि बिम्बिसार पर गौतम बुद्ध का अधिक प्रभाव पड़ा था। उसने अपने पुत्र का उद्धत स्वभाव देखकर जो कि गौतम के विरोधी देवदत्त के प्रभाव में विशेष रहता था, स्वयं सिंहासन छोड़ दिया होगा।

इसका कारण भी है। अजातशत्रु की माता छलना, वैशाली के राजवंश की थी, जो जैन तीर्थंकर महावीर स्वामी की निकट-सम्बन्धिनी भी थी। वैशाली की वृजि-जाति (लिच्छवि) अपने गोत्र के महावीर स्वामी का धर्म विशेष रूप से मानती थी। छलना का झुकाव अपने कुल-धर्म की ओर अधिक था। इधर देवदत्त जिसके बारे में कहा जाता है कि उसने गौतम बुद्ध को मार डालने का एक भारी षड्यन्त्र रचा था और किशोर अजात को अपने प्रभाव में लाकर राजशक्ति से भी उसमें सहायता लेना चाहता था- चाहता था कि गौतम से संघ में अहिंसा की ऐसी व्याख्या प्रचारित करावे जो कि जैन धर्म से मिलती हो और उसके इस उद्देश्य में राजमाता की सहानुभूति का भी मिलना स्वाभाविक ही था।

बौद्ध-मत में बुद्ध ने कृत, दृष्ट और उद्दिष्ट-इन्हीं तीन प्रकार की हिंसाओं का निषेध किया था। यदि भिक्षा में मांस भी मिले, तो वर्जित नहीं था। किन्तु देवदत्त यह चाहता था कि 'संघ में यह नियम हो जाए कि कोई भिक्षु मांस खाए ही नहीं।' गौतम ने ऐसी आज्ञा नहीं प्रचारित की। देवदत्त को धर्म के बहाने छलना की सहानुभूति मिली और बड़ी रानी तथा बिम्बिसार के साथ, जो बुद्धभक्त थे, शत्रुता की जाने लगी।

इसी गृह-कलह को देखकर बिम्बिसार ने स्वयं सिंहासन त्याग दिया होगा और राजशक्ति के प्रलोभन से अजात को अपने पिता पर सन्देह रखने का कारण हुआ होगा और विशेष नियन्त्रण की भी आवश्यकता रही होगी। देवदत्त और अजात के कारण गौतम को कष्ट पहुँचाने का निष्फल प्रयास हुआ। सम्भवत: इसी से अजात की क्रूरताओं का बौद्ध-साहित्य में बड़ा अतिरंजित वर्णन मिलता है।

कोसल-नरेश प्रसेनजित् के-शाक्य-दासी-कुमारी के गर्भ से उत्पन्न-कुमार का नाम विरुद्धक था। विरुद्धक की माता का नाम जातकों में बासभखत्तिया मिलता

है। (उसी का कल्पित नाम शक्तिमती है) प्रसेनजित् अजात के पास सहायता के लिए राजगृह आया था, किन्तु 'भद्दसाल-जातक' में इसका विस्तृत विवरण मिलता है कि विद्रोही विरुद्धक गौतम के कहने पर फिर से अपनी पूर्व मर्यादा पर अपने पिता के द्वारा अधिष्ठित हुआ। इसने कपिलवस्तु का जनसंहार इसलिए चिढ़कर किया था कि शाक्यों ने धोखा देकर प्रसेनजित् से शाक्य-कुमारी के बदले एक दासीकुमारी से ब्याह कर दिया था, जिससे दासी-सन्तान होने के कारण विरुद्धक को अपने पिता के द्वारा अपदस्थ होना पड़ा था। शाक्यों के संहार के कारण बौद्धों ने इसे भी क्रूरता का अवतार अंकित किया है। 'भद्दसाल-कथा' के सम्बन्ध में जातक में कोसल-सेनापति बन्धुल और उसकी स्त्री मल्लिका का विशद वर्णन है। इस बन्धुल के पराक्रम से भीत होकर कोसल-नरेश ने इसकी हत्या करा डाली थी और इसका बदला लेने के लिए उसके भागिनेय दीर्घकारायण ने प्रसेनजित् से राजचिह्न लेकर क्रूर विरुद्धक को कोसल के सिंहासन पर अभिषिक्त किया।

प्रसेन और विरुद्धक सम्बन्धिनी घटना का वर्णन 'अवदान-कल्पलता' में भी मिलता है। बिम्बिसार और प्रसेन दोनों के पुत्र विद्रोही थे और तत्कालीन धर्म के उलट-फेर में गौतम के विरोधी थे। इसीलिए इनका क्रूरतापूर्ण अतिरंजित चित्र बौद्ध-इतिहास में मिलता है। उस काल के राष्ट्रों के उलट-फेर में धर्म-दुराग्रह ने भी सम्भवतः बहुत भाग लिया था।

मागन्धी (श्यामा), जिसके उकसाने से पद्मावती पर उदयन बहुत असन्तुष्ट हुए थे, ब्राह्मण-कन्या थी, जिसको उसके पिता गौतम से ब्याहना चाहते थे और गौतम ने उसका तिरस्कार किया था। इसी मागन्धी को और बौद्धों के साहित्य में वर्णित आम्रपाली (अम्बपाली) को, हमने कल्पना द्वारा एक में मिलाने का साहस किया है। अम्बपाली पतिता और वेश्या होने पर भी गौतम के द्वारा अन्तिम काल में पवित्र की गई। (कुछ लोग जीवक को इसी का पुत्र मानते हैं।)

लिच्छवियों का निमन्त्रण अस्वीकार करके गौतम ने उसकी भिक्षा ग्रहण की थी। बौद्धों की श्यामावती वेश्या आम्रपाली, मागन्धी और इस नाटक की श्यामा वेश्या का एकत्र संघटन कुछ विचित्र तो होगा, किन्तु चरित्र का विकास और कौतुक बढ़ाना ही इसका उद्देश्य है।

सम्राट् अजातशत्रु के समय में मगध साम्राज्य-रूप में परिणत हुआ, क्योंकि अंग और वैशाली को इसने स्वयं विजय किया था और काशी अब निर्विवाद रूप से उसके अधीन हो गई थी। कोसल भी इसका मित्रराष्ट्र था। उत्तरी भारत में यह इतिहासकाल का प्रथम सम्राट् हुआ। मथुरा के समीप परखम गाँव में मिली

हुई अजातशत्रु की मूर्ति देखकर मिस्टर जायसवाल की सम्मति है कि अजातशत्रु ने सम्भवत: पश्चिम में मथुरा तक भी विजय किया था।

जयशंकर 'प्रसाद'

पात्र

बिम्बिसार: मगध का सम्राट्,
अजातशत्रु (कुणीक): मगध का राजकुमार,
उदयन: कौशाम्बी का राजा, मगध सम्राट् का जामाता,
प्रसेनजित्: कोसल का राजा,
विरुद्धक (शैलेन्द्र): कोसल का राजकुमार,
गौतम: बुद्धदेव,
सारिपुत्र: सद्धर्म के आचार्य,
आनन्द: गौतम के शिष्य,
देवदत्त (भिक्षु): गौतम बुद्ध का प्रतिद्वन्द्वी,
समुद्रदत्त: देवदत्त का शिष्य,
जीवक: मगध का राजवैद्य,
वसन्तक: उदयन का विदूषक,
बन्धुल: कोसल का सेनापति,
सुदत्त: कोसल का कोषाध्यक्ष,
दीर्घकारायण: सेनापति बन्धुल का भांजा, सहकारी सेनापति,
लुब्धक: शिकारी,
(काशी का दण्डनायक, अमात्य, दूत, दौवारिक और अनुचरगण),
वासवी: मगध-सम्राट् की बड़ी रानी,
छलना: मगध-सम्राट् की छोटी रानी और राजमाता,
पद्मावती: मगध की राजकुमारी,
मागन्धी (श्यामा): आम्रपाली,
वासवदत्ता: उज्जयिनी की राजकुमारी,
शक्तिमती (महामाया): शाक्यकुमारी, कोसल की रानी,
मल्लिका: सेनापति बन्धुल की पत्नी,
बाजिरा: कोसल की राजकुमारी,
नवीना: सेविका,
(विजया, सरला, कंचुकी, दासी, नर्त्तकी इत्यादि)।

4

महादेवी वर्मा की पुस्तकें

महादेवी वर्मा हिन्दी की सर्वाधिक प्रतिभावान कवयित्रियों में से हैं। वे हिन्दी साहित्य में छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंभलेखकों, में से एक मानी जाती हैं। आधुनिक हिन्दी की सबसे सशक्त कवयित्रियों में से एक होने के कारण उन्हें आधुनिक मीरा के नाम से भी जाना जाता है। कवि निराला ने उन्हें "हिन्दी के विशाल मन्दिर की सरस्वती" भी कहा है। महादेवी ने स्वतंत्रता के पहले का भारत भी देखा और उसके बाद का भी। वे उन कवियों में से एक हैं जिन्होंने व्यापक समाज में काम करते हुए भारत के भीतर विद्यमान हाहाकार, रुदन को देखा, परखा और करुण होकर अन्धकार को दूर करने वाली दृष्टि देने की कोशिश की। न केवल उनका काव्य बल्कि उनके सामाज सुधार के कार्य और महिलाओं के प्रति चेतना भावना भी इस दृष्टि से प्रभावित रहे। उन्होंने मन की पीड़ा को इतने स्नेह औरश्रृंगार से सजाया कि दीपशिखा में वह जन-जन की पीड़ा के रूप में स्थापित हुई और उसने केवल पाठकों को ही नहीं समीक्षकों को भी गहराई तक प्रभावित किया।

उन्होंने खड़ी बोली हिन्दी की कविता में उस कोमल शब्दावली का विकास किया जो अभी तक केवल बृजभाषा में ही संभव मानी जाती थी। इसके लिए उन्होंने अपने समय के अनुकूल संस्कृत और बांग्ला के कोमल शब्दों को चुनकर हिन्दी का जामा पहनाया। संगीत की जानकार होने के कारण उनके गीतों का नाद-सौंदर्य और पैनी उक्तियों की व्यंजना शैली अन्यत्र दुर्लभ है। उन्होंने

अध्यापन से अपने कार्यजीवन की शुरूआत की और अन्तिम समय तक वे प्रयाग महिला विद्यापीठ की प्रधानाचार्या बनी रहीं। उनका बाल-विवाह हुआ परन्तु उन्होंने अविवाहित की भांति जीवन-यापन किया। प्रतिभावान कवयित्री और गद्य लेखिका महादेवी वर्मा साहित्य और संगीत में निपुण होने के साथ-साथ कुशल चित्रकार और सृजनात्मक अनुवादक भी थीं। उन्हें हिन्दी साहित्य के सभी महत्त्वपूर्ण पुरस्कार प्राप्त करने का गौरव प्राप्त है। भारत के साहित्य आकाश में महादेवी वर्मा का नाम ध्रुव तारे की भांति प्रकाशमान है। गत शताब्दी की सर्वाधिक लोकप्रिय महिला साहित्यकार के रूप में वे जीवन भर पूजनीय बनी रहीं। वर्ष 2007 उनकी जन्म शताब्दी के रूप में मनाया गया। 27 अप्रैल 1982 को भारतीय साहित्य में अतुलनीय योगदान के लिए ज्ञानपीठ पुरस्कार से इन्हें सम्मानित किया गया था। गूगल ने इस दिवस की याद में वर्ष 2018 में गूगल डूडल के माध्यम से मनाया। महादेवी वर्मा पर आप महादेवी वर्मा जीवन परिचय लेख भी पढ़ सकते हो।

जन्म और परिवार

महादेवी का जन्म 26 मार्च 1907 को प्रातः 8 बजे फर्रुखाबाद उत्तर प्रदेश, भारत में हुआ। उनके परिवार में लगभग 200 वर्षों या सात पीढ़ियों के बाद पहली बार पुत्री का जन्म हुआ था। अतः बाबा बाबू बाँके विहारी जी हर्ष से झूम उठे और इन्हें घर की देवी-महादेवी मानते हुए पुत्री का नाम महादेवी रखा। उनके पिता श्री गोविंद प्रसाद वर्मा भागलपुर के एक कॉलेज में प्राध्यापक थे। उनकी माता का नाम हेमरानी देवी था। हेमरानी देवी बड़ी धर्म परायण, कर्मनिष्ठ, भावुक एवं शाकाहारी महिला थीं। विवाह के समय अपने साथ सिंहासनासीन भगवान की मूर्ति भी लायी थीं वे प्रतिदिन कई घंटे पूजा-पाठ तथा रामायण, गीता एवं विनय पत्रिका का पारायण करती थीं और संगीत में भी उनकी अत्यधिक रुचि थी। इसके बिल्कुल विपरीत उनके पिता गोविन्द प्रसाद वर्मा सुन्दर, विद्वान, संगीत प्रेमी, नास्तिक, शिकार करने एवं घूमने के शौकीन, मांसाहारी तथा हँसमुख व्यक्ति थे। महादेवी वर्मा के मानस बंधुओं में सुमित्रानंदन पंत एवं निराला का नाम लिया जा सकता है, जो उनसे जीवन पर्यन्त राखी बँधवाते रहे। निराला जी से उनकी अत्यधिक निकटता थी, उनकी पुष्ट कलाइयों में महादेवी जी लगभग चालीस वर्षों तक राखी बाँधती रहीं।

शिक्षा

महादेवी जी की शिक्षा इंदौर में मिशन स्कूल से प्रारम्भ हुई साथ ही संस्कृत, अंग्रेजी, संगीत तथा चित्रकला की शिक्षा अध्यापकों द्वारा घर पर ही दी जाती रही। बीच में विवाह जैसी बाधा पड़ जाने के कारण कुछ दिन शिक्षा स्थगित रही। विवाहोपरान्त महादेवी जी ने 1919 में क्रास्थवेट कॉलेज इलाहाबाद में प्रवेश लिया और कॉलेज के छात्रावास में रहने लगीं। 1921 में महादेवी जी ने आठवीं कक्षा में प्रान्त भर में प्रथम स्थान प्राप्त किया। यहीं पर उन्होंने अपने काव्य जीवन की शुरुआत की। वे सात वर्ष की अवस्था से ही कविता लिखने लगी थीं और 1925 तक जब उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की, वे एक सफल कवयित्री के रूप में प्रसिद्ध हो चुकी थीं। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आपकी कविताओं का प्रकाशन होने लगा था। कालेज में सुभद्रा कुमारी चौहान के साथ उनकी घनिष्ठ मित्रता हो गई। सुभद्रा कुमारी चौहान महादेवी जी का हाथ पकड़ कर सखियों के बीच में ले जाती और कहतीं-"सुनो, ये कविता भी लिखती हैं"। 1932 में जब उन्होंने इलाहाबाद विश्वविद्यालय से संस्कृत में एम. ए. पास किया तब तक उनके दो कविता संग्रह नीहार तथा रश्मि प्रकाशित हो चुके थे।

वैवाहिक जीवन

सन् 1916 में उनके बाबा श्री बाँके विहारी ने इनका विवाह बरेली के पास नबाव गंज कस्बे के निवासी श्री स्वरूप नारायण वर्मा से कर दिया, जो उस समय दसवीं कक्षा के विद्यार्थी थे। श्री वर्मा इण्टर करके लखनऊ मेडिकल कॉलेज में बोर्डिंग हाउस में रहने लगे। महादेवी जी उस समय क्रास्थवेट कॉलेज इलाहाबाद के छात्रावास में थीं। श्रीमती महादेवी वर्मा को विवाहित जीवन से विरक्ति थी। कारण कुछ भी रहा हो पर श्री स्वरूप नारायण वर्मा से कोई वैमनस्य नहीं था। सामान्य स्त्री-पुरुष के रूप में उनके सम्बंध मधुर ही रहे। दोनों में कभी-कभी पत्रचार भी होता था। यदा-कदा श्री वर्मा इलाहाबाद में उनसे मिलने भी आते थे। श्री वर्मा ने महादेवी जी के कहने पर भी दूसरा विवाह नहीं किया। महादेवी जी का जीवन तो एक संन्यासिनी का जीवन था। उन्होंने जीवन भर श्वेत वस्त्र पहना, तख्त पर सोईं और कभी शीशा नहीं देखा। सन् 1966 में पति की मृत्यु के बाद वे स्थाई रूप से इलाहाबाद में रहने लगीं।

पथ के साथी

पथ के साथी महादेवी वर्मा द्वारा लिखे गए संस्मरणों का संग्रह है, जिसमें उन्होंने अपने समकालीन रचनाकारों का चित्रण किया है। जिस सम्मान और आत्मीयतापूर्ण ढंग से उन्होंने इन साहित्यकारों का जीवन-दर्शन और स्वभावगत महानता को स्थापित किया है वह अपने आप में बड़ी उपलब्धि है। 'पथ के साथी' में संस्मरण भी हैं और महादेवी द्वारा पढ़े गए कवियों के जीवन पृष्ठ भी। उन्होंने एक ओर साहित्यकारों की निकटता, आत्मीयता और प्रभाव का काव्यात्मक उल्लेख किया है और दूसरी ओर उनके समग्र जीवन दर्शन को परखने का प्रयत्न किया है।

'पथ के साथी' में निम्नलिखित 11 संस्मरणों का संग्रह किया गया है-

दद्दा (मैथिली शरण गुप्त),
निराला भाई,
स्मरण प्रेमचंद,
प्रसाद,
सुमित्रनंदन पंत,
सुभद्रा (कुमारी चौहान),
प्रणाम (रवींद्रनाथ ठाकुर),
पुण्य स्मरण (महात्मा गांधी),
राजेन्द्रबाबू (बाबू राजेन्द्र प्रसाद),
जवाहर भाई (जवाहरलाल नेहरू),
संत राजर्षि (पुरुषोत्तमदास टंडन)।

दीपशिखा (कविता-संग्रह)

दीपशिखा महादेवी वर्मा का पाँचवाँ कविता-संग्रह है। इसका प्रकाशन 1942 में हुआ। इसमें 1936 से 1942 ई. तक के गीत हैं। इस संग्रह में 147 पृष्ठ हैं और यह लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित किया गया है।

इस संग्रह के गीतों का मुख्य प्रतिपाद्य स्वयं मिटकर दूसरे को सुखी बनाना है। इस संग्रह की भूमिका में वे स्वयं कहती हैं- 'दीप-शिखा में मेरी कुछ ऐसी रचनाएँ संग्रहित हैं जिन्हें मैंने रंगरेखा की धुंधली पृष्ठभूमि देने का प्रयास किया है। सभी रचनाओं को ऐसी पीठिका देना न सम्भव होता है और न रुचिकर, अत:

रचनाक्रम की दृष्टि से यह चित्रगीत बहुत बिखरे हुए ही रहेंगे।' और मेरे गीत अध्यात्म के अमूर्त आकाश के नीचे लोक-गीतों की धरती पर पले हैं।

दीपशिखा- नया संस्करण

महादेवी के गीतों का अधिकारिक विषय 'प्रेम' है। पर प्रेम की सार्थकता उन्होंने मिलन के उल्लासपूर्ण क्षणों से अधिक विरह की अन्तश्चेतनामूलक पीड़ा में तलाश की। मिलन के चित्र उनके चित्र उनके गीतों में आकांक्षित और संभावित, अतः कल्पनाश्रित ही हो सकते थे, पर विरहानुभूति को भी उन्होंने सूक्ष्म, निगूढ़ प्रतीकों और धुंधले बिंबों के माध्यम से ही अधिक अंकित किया। उनके प्रतीकों का विश्लेषण करते हुए अज्ञेय ने कहा–'उन्हें तो वैयक्तिक अनुभूतियों की अभिव्यक्ति भी देनी थी और सामाजिक शिष्टाचार तथा रूढ़ बंधनों की मर्यादा भी निभानी थी। यही भाव उन्हें प्रतीकों का आश्रय लेने पर बाध्य करता है।' महादेवी के गीतों में ऐसे बिम्बों की बहुतायत है, जो दृष्यरूप या चित्र खड़े करने की बजाय सूक्ष्म संवेदन अधिक जगाते हैं, 'रजत् रश्मियों की छाया में धूमिल घन-सा वह आता' जैसी पंक्तियों में 'वह' को प्रकट करने की अपेक्षा धुंधलाने का प्रयास अधिक दिखाई देता है।

इसका ताजा संस्करण वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली से पेपरबैक पर प्रकाशित किया गया है, जिसमें 59 पृष्ठ हैं। इसमें मूल पुस्तक की भूमिका को हटा दिया गया है।

5

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' हिन्दी कविता के छायावादी युग के चार प्रमुख स्तंय लेखकों, में से एक माने जाते हैं। वे जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा के साथ हिन्दी साहित्य में छायावाद के प्रमुख स्तंभ माने जाते हैं। उन्होंने कई कहानियाँ, उपन्यास और निबंध भी लिखे हैं, किन्तु उनकी ख्याति विशेष रूप से कविता के कारण ही है।

जीवन-परिचय

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म बंगाल की महिषादल रियासत (जिला मेदिनीपुर) में माघ शुक्ल 11, संवत् 1955, तदनुसार 21 फरवरी, सन् 1899 में हुआ था। वसंत पंचमी पर उनका जन्मदिन मनाने की परंपरा 1930 में प्रारंभ हुई। उनका जन्म मंगलवार को हुआ था। जन्म-कुण्डली बनाने वाले पंडित के कहने से उनका नाम सुर्जकुमार रखा गया। उनके पिता पंडित रामसहाय तिवारी उन्नाव (बैसवाड़ा) के रहने वाले थे और महिषादल में सिपाही की नौकरी करते थे। वे मूल रूप से उत्तर प्रदेश के उन्नाव जिले के गढ़ाकोला नामक गाँव के निवासी थे।

निराला की शिक्षा हाई स्कूल तक हुई। बाद में हिन्दी संस्कृत और बांग्ला का स्वतंत्र अध्ययन किया। पिता की छोटी-सी नौकरी की असुविधाओं और मान-अपमान का परिचय निराला को आरम्भ में ही प्राप्त हुआ। उन्होंने

दलित-शोषित किसान के साथ हमदर्दी का संस्कार अपने अबोध मन से ही अर्जित किया। तीन वर्ष की अवस्था में माता का और बीस वर्ष का होते-होते पिता का देहांत हो गया। अपने बच्चों के अलावा संयुक्त परिवार का भी बोझ निराला पर पड़ा। पहले महायुद्ध के बाद जो महामारी फैली उसमें न सिर्फ पत्नी मनोहरा देवी का, बल्कि चाचा, भाई और भाभी का भी देहांत हो गया। शेष कुनबे का बोझ उठाने में महिषादल की नौकरी अपर्याप्त थी। इसके बाद का उनका सारा जीवन आर्थिक-संघर्ष में बीता। निराला के जीवन की सबसे विशेष बात यह है कि कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी उन्होंने सिद्धांत त्यागकर समझौते का रास्ता नहीं अपनाया, संघर्ष का साहस नहीं गंवाया। जीवन का उत्तरार्द्ध इलाहाबाद में बीता। वहीं दारागंज मुहल्ले में स्थित रायसाहब की विशाल कोठी के ठीक पीछे बने एक कमरे में 15 अक्टूबर 1961 को उन्होंने अपनी इहलीला समाप्त की।

कार्यक्षेत्र

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की पहली नियुक्ति महिषादल राज्य में ही हुई। उन्होंने 1918 से 1922 तक यह नौकरी की। उसके बाद संपादन, स्वतंत्र लेखन और अनुवाद कार्य की ओर प्रवृत्त हुए। 1922 से 1923 के दौरान कोलकाता से प्रकाशित 'समन्वय' का संपादन किया, 1923 के अगस्त से मतवाला के संपादक मंडल में कार्य किया। इसके बाद लखनऊ में गंगा पुस्तक माला कार्यालय में उनकी नियुक्ति हुई जहाँ वे संस्था की मासिक पत्रिका सुधा से 1935 के मध्य तक संबद्ध रहे। 1935 से 1940 तक का कुछ समय उन्होंने लखनऊ में भी बिताया। इसके बाद 1942 से मृत्यु पर्यन्त इलाहाबाद में रह कर स्वतंत्र लेखन और अनुवाद कार्य किया। उनकी पहली कविता जन्मभूमि प्रभा नामक मासिक पत्र में जून 1920 में, पहला कविता संग्रह 1923 में अनामिका नाम से, तथा पहला निबंध बंग भाषा का उच्चारण अक्टूबर 1920 में मासिक पत्रिका सरस्वती में प्रकाशित हुआ।

अपने समकालीन अन्य कवियों से अलग उन्होंने कविता में कल्पना का सहारा बहुत कम लिया है और यथार्थ को प्रमुखता से चित्रित किया है। वे हिन्दी में मुक्तछंद के प्रवर्तक भी माने जाते हैं। 1930 में प्रकाशित अपने काव्य संग्रह परिमल की भूमिका में वे लिखते हैं-

मनुष्यों की मुक्ति की तरह कविता की भी मुक्ति होती है। मनुष्यों की मुक्ति कर्म के बंधन से छुटकारा पाना है और कविता की मुक्ति छन्दों के शासन से अलग हो जाना है। जिस तरह मुक्त मनुष्य कभी किसी तरह दूसरों के प्रतिकूल आचरण नहीं करता, उसके तमाम कार्य औरों को प्रसन्न करने के लिए होते हैं फिर भी स्वतंत्र। इसी तरह कविता का भी हाल है।

लेखनकार्य

निराला ने 1920 ई. के आसपास से लेखन कार्य आरंभ किया। उनकी पहली रचना 'जन्मभूमि' पर लिखा गया एक गीत था। लंबे समय तक निराला की प्रथम रचना के रूप में प्रसिद्ध 'जूही की कली' शीर्षक कविता, जिसका रचनाकाल निराला ने स्वयं 1916 ई. बतलाया था, वस्तुतः 1921 ई. के आसपास लिखी गयी थी तथा 1922 ई. में पहली बार प्रकाशित हुई थी। कविता के अतिरिक्त कथासाहित्य तथा गद्य की अन्य विधाओं में भी निराला ने प्रभूत मात्रा में लिखा है।

बिल्लेसुर बकरिहा

बिल्लेसुर बकरिहा भारत के महान कवि एवं रचनाकार सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का एक व्यंग उपन्यास है। निराला के शब्दों में 'हास्य लिये एक स्केच' कहा गया यह उपन्यास अपनी यथार्थवादी विषयवस्तु और प्रगतिशील जीवनदृष्टि के लिए बहुचर्चित है। बिल्लेसुर एक गरीब ब्राह्मण है, लेकिन ब्राह्मणों के रूढ़िवाद से पूरी तरह मुक्त। गरीबी के उबार के लिए वह शहर जाता है और लौटने पर बकरियाँ पाल लेता है। इसके लिए वह बिरादरी की रुष्टता और प्रायश्चित के लिए डाले जा रहे दबाव की परवाह नहीं करता। अपने दम पर शादी भी कर लेता है। वह जानता है कि जात-पाँत इस समाज में महज एक ढकोसला है, जो आर्थिक वैषम्य के चलते चल रहा है। यही कारण है कि पैसेवाला होते ही बिल्लेसुर का जाति-बहिष्कार समाप्त हो जाता है। संक्षेप में यह उपन्यास आर्थिक सम्बन्धों में सामन्ती जड़वाद की धूर्तता, पराजय और बेबसी की कहानी है।

अणिमा

अणिमा भारत के महान हिन्दी कवि और रचनाकार पण्डित सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की एक काव्य रचना है। अणिमा नामक, 1943 में प्रकाशित इस कविता संग्रह में निम्नलिखित कविताएं संकलित हैं–

नूपुर के सुर मन्द रहे बादल छाये
जन-जन के जीवन के सुन्दर
उन चरणों में मुझे दो शरण
सुन्दर हे, सुन्दर
दलित जन पर करो
भाव जो छलके पदों पर
धूलि में तुम मुझे भर दो
तुम्हें चाहता वह भी सुन्दर
मैं बैठा था पथ पर
मैं अकेला
स्नेह-निर्झर बह गया है

अणिमा निराला के इससे पहले की काव्य रचनाओं से कुछ अलग स्वर में विरचित कृति है जैसे कवि का अपने पहले के विचारों से मोहभंग हो रहा हो। 'स्नेह निर्झर बह गया है' नामक कविता के शुरुआती अंश निम्नवत हैं–

'स्नेह निर्झर बह गया है
रेत ज्यों तन रह गया है
आम की यह डाल जो सूखी दिखी
कह रही है - अब यहाँ पिक या शिखी
नहीं आते, पंक्ति मैं वह हूँ लिखी
नहीं जिसका अर्थ
----जीवन दह गया है'

6

रूसो की पुस्तकें

महान दार्शनिक रूसो

जीन-जक्कुएस रूसो (1712 - 78) की गणना पश्चिम के युगप्रवर्तक विचारकों में है।

किंतु अंतर्विरोध तथा विरोधाभासों से पूर्ण होने के कारण उसके दर्शन का स्वरूप विवादास्पद रहा है। अपने युग की उपज होते हुए भी उसने तत्कालीन मान्यताओं का विरोध किया, बद्धिवाद के युग में उसने बुद्धि की निंदा की (विश्वकोश के प्रणेताओं (Encyclopaedists) से उसका विरोध इस बात पर था) और सहज मानवीय भावनाओं को अत्यधिक महत्त्व दिया। सामाजिक प्रसंविदा (सोशल कंट्रैक्ट) की शब्दावली का अवलंबन करते हुए भी उसने इस सिद्धांत की अंतरात्मा में सर्वथा नवीन अर्थ का सन्निवेश किया। सामाजिक बंधन तथा राजनीतिक दासता की कटु आलोचना करते हुए भी उसने राज्य को नैतिकता के लिए अनिवार्य बताया। आर्थिक असमानता और व्यक्तिगत संपत्ति को अवांछनीय मानते हुए भी रूसो साम्यवादी नहीं था। घोर व्यक्तिवाद से प्रारंभ होकर उसे दर्शन की परिणति समष्टिवाद में होती है। स्वतंत्रता और जनतंत्र का पुजारी होते हुए भी वह राबेसपीयर जैसे निरंकुशतावादियों का आदर्श बन जाता है।

मुख्य रचनाएँ

उसकी मुख्य रचनाएँ ये हैं-

1. डिस्कोर्स ऑन दि आरिजिन ऑव इनईक्वैलिटी,
2. इकानामी पालिटिक,
3. दि सोशल कंट्रैक्ट,
4. ईमिली। 5. द स्पिरिट ऑफ द लाज।

रूसो का चरित्र व दर्शन

प्रत्येक विचारक का दर्शन उसके जीवन से अलग नहीं किया जा सकता। किंतु रूसो को समझने के लिए उसकी चारित्रिरक विशेषताएँ तथा दुबर्लताएँ विशेष रूप से ज्ञातव्य हैं। अपने व्यक्तिगत दोषों के लिए समाज को उत्तरदायी ठहराकर रूसो ने न केवल अपने को निरपराध बल्कि मनुष्यमात्र को निसर्गत: नेक और विशुद्धात्मा बताया। पेरिस की भौतिकवादी सभ्यता के कृत्रिम वातावरण को अपने स्वभाव के प्रतिकूल पाकर उसने प्राकृतिक अवस्था के सरल जीवन की कल्पना की। शिक्षित और सभ्य समाज के साथ अपने व्यक्तित्त्व का सामंजस्य वह कभी नहीं स्थापित कर पाया। उसके जीवन के अंतिम वर्ष दैहिक संताप, मानसिक विषाद, काल्पनिक भय, विक्षोभ तथा उन्माद के आवेग से पूर्ण थे। बाल्यावस्था से ही वह चरित्रहीन था। किंतु वासनाओं का दास होते हुए भी उसमें उदात्त भावनाओं का अभाव नहीं था। उसकी कृतियाँ उसकी सहज अनुभूतियों की अभिव्यक्ति हैं। इसीलिए वे इतनी मर्मस्पर्शनी तथा प्रभावोत्पादक हैं।

आधुनिक सभ्यता के दोषों का वर्णन करते हुए रूसो अपने समय के अन्य विचारकों की भाँति प्राकृतिक और रूढ़िगत का अंतर प्रस्तुत करता है। किन्तु प्राकृतिक अवस्था की कल्पना उसके राज्य संबंधी विचारों की पुष्टि के लिए अनावश्यक-सी है। रूसो के अनुसार प्राकृतिक अवस्था में जीवन सरल था। बुद्धि तथा भाषा का विकास नहीं हुआ था। मनुष्य अपनी सहज प्रवृत्तियों के अनुसार आचरण करता था। वह नैतिकता अनैतिकता से परे था। उसे न हम सुखी कह सकते हैं, न दु:खी। यह अवस्था रूसो का आदर्श नहीं है। वह बुद्धि तथा भावना का सामंजस्य चाहता है, जो प्राकृतिक अवस्था के विकास की दूसरी मंजिल है। यह प्रारम्भिक जीवन की सरल निष्क्रियता तथा वैज्ञानिक सीयता की विषाक्त जटिलता के बीच की स्थिति है। भाषा का विकास, सामाजिक सहयोग, शांति

और सौहार्द्र, इसकी विशेषताएँ हैं। धीरे-धीरे बुद्धि भावनाओं को पराभूत कर लेती है और श्रद्धा, विश्वास प्रेम तथा दया का स्थान अविश्वास, वैमनस्य, स्वार्थ ले लेते हैं। व्यक्तिगत संपत्ति का आविर्भाव होता है और मनुष्य दासता कीशृंखला में जकड़ जाता है। आर्थिक शोषण तथा सामाजिक अत्याचार के कारण उसका व्यक्ति नष्ट हो जाता है। इस वर्णन में फ्रांस की राज्यक्रांति के पूर्व की अवस्था प्रतिबिम्बित है। इसी स्थिति से मुक्ति पाने के लिए सामाजिक प्रसंविदा की आवश्यकता होती है।

रूसो की प्रारंम्भिक कृतियों तथा सामाजिक प्रसंविदा के कुछ अंशों के अवलोकन से प्रतीत होता है कि लेखक समाज व्यवस्था का विरोधी है और व्यक्ति की निरपेक्ष स्वतंत्रता में विश्वास करता है। किंतु रूसो स्वयं आलोचकों द्वारा वर्णित समानता की उत्पत्ति के घोर व्यक्तिवाद और 'सामाजिक प्रसंविदा' के घोर समष्टिवाद के परस्पर विरोध को नहीं मानता। अपनी प्रारंभिक कृतियों में उसका उदश्य प्रचलित मान्यताओं का खंडन मात्र था। किंतु सामाजिक प्रसंविदा में वह अपना स्वतंत्र दर्शन प्रस्तुत करता है। उसके अनुसार मनुष्य सामाजिक प्राणी है। समाज में ही उसके मानवोचित गुणों का विकास हो सकता है। किंतु वर्तमान समाज उसे अनावश्यक तथा अनिष्टकारी बंधनों से जकड़ देता है। प्रसंविदा का उद्देश्य ऐसे समाज की स्थापना करना है, जो अपनी संपूर्ण सामूहिक शक्ति के द्वारा प्रत्येक सदस्य की स्वतंत्रता और संपत्ति की रक्षा कर सके और जिसमें प्रत्येक व्यक्ति समष्टि में सम्मिलित होकर भी अपनी ही आज्ञा का पालन करे और पूर्ववत् स्वतंत्र बना रहे। इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति अपनी संपूर्ण शक्तियों को सामान्य संकल्प के सर्वोच्च निर्देशन में समाज को सौंप देता है और फिर समष्टि के अविभाज्य अंश के रूप में उन सभी अधिकारों को प्राप्त कर लेता है। प्रसंविदा के परिणामस्वरूप जिस राज्य की उत्पत्ति होती है वह एक नैतिक अवयवी है, जिसका अपना स्वतंत्र संकल्प होता है। यह सामान्य संकल्प जो सदैव समष्टि और व्यष्टि दोनों की रक्षा और कल्याण में प्रवृत्त रहता है, समाज में विधान का स्रोत तथा न्याय का मानदंड है। स्पष्ट है कि ऐसा समाज प्रसंविदा का परिणाम कदापि नहीं हो सकता, क्योंकि प्रसंविदा की पूर्ण मान्यता व्यक्ति की नैतिक तथा तार्किक प्राथमिकता है, न कि समाज की।

रूसो सामान्य संकल्प (जनरल विल) और सबके संकल्प (विल ऑव ऑल) में अंतर बताता है। सबका संकल्प विशेष संकल्पों (पर्टिकुलर विल्स)

का योग मात्र है, जो व्यक्तिगत हितों के ही स्तर पर रह जाता है। सामान्य संकल्प सदैव स्वार्थरहित तथा सामान्य हित के लिए होता है। कभी-कभी रूसो बहुमत को ही सामान्य संकल्प कह देता है। वह यह भी कहता है कि परस्पर विरोधी विचारों के टकराने से जो अवशेष रहता है वही सामान्य संकल्प है। किंतु ये बातें उसकी मूल धारणा के विरुद्ध हैं।

सामाजिक प्रसंविदा का सिद्धांत स्वतंत्रता का विरोधाभास उत्पन्न करता है। रूसो के अनुसार सामान्य संकल्प स्थायी अविभाज्य तथा अदेय है। वह नित्य सत्य है। व्यक्ति का हित उसी से सन्निहित है। चूंकि मनुष्य को अपने हित के विरुद्ध कार्य करने की स्वतंत्रता नहीं हो सकती, इसलिए जो व्यक्ति सामान्य संकल्प का विरोध करता है वह वास्तव में आत्मद्रोही है। सामान्य संकल्प का मूर्तरूप होने के नाते राज्य उसे सच्चे अर्थ में 'स्वतंत्र' होने के लिए बाध्य कर सकता है। दंड भी स्वतंत्रता का ही रूप है। इस प्रकार यह सिद्धांत स्वतंत्रता के नाम पर अधिनायकवाद का पोषक बन जाता है। रूसो स्वयं अधिनायकवाद का समर्थक है, यह कहना ठीक नहीं है, क्योंकि वह कहता है कि संप्रभु समाज की मान्य प्रथाओं का उल्लंघन नहीं कर सकता। सामाजिक हित के लिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता आवश्यक है।

राज्य के लिए रूसो विधायकों (लेजिस्लेटर्स) को आवश्यक बताता है। उसकी आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि यद्यपि जनता सर्वदा लोककल्याण चाहती है तथापि उसको समझने में वह सदैव समर्थ नहीं होती। विधायक या व्यवस्थापक उचित परामर्श देकर उसका पथप्रदर्शन करता है।

रूसो संसदीय प्रतिनिधित्व को सामान्य संकल्प के प्रतिकूल बताता है। वह प्रत्यक्ष जनतंत्र के पक्ष में है, जो केवल उसकी जन्मभूमि जिनीवा जैसे छोटे राज्य में ही संभव है। राष्ट्रसंघ की संभावना मानते हुए भी रूसो राष्ट्रराज्य को ही विशेष महत्त्व देता है। जब तक सत्ता जनता के हाथ में है, सरकार का स्वरूप गौण है। सरकार केवल जनता के हित का साधन है। अतः उसे किसी भी समय बदला जा सकता है। गायर्के (Gierke) ने इसे 'नित्यक्रांति (permanent revolution) का सिद्धांत कहा है। रूसो सरकार के दो अंशों की चर्चा करता है—व्यवस्थापिका तथा कार्यकारिणी। व्यवस्थापिका को वह श्रेष्ठ बताता है, क्योंकि सामान्य संकल्प उसी के द्वारा व्यक्त होता है। राजनीतिक दल सामान्य संकल्प की अभिव्यक्ति में बाधक होते हैं। अतः रूसो उनके विरुद्ध है। एक समिति अर्थ में

धर्म को वह राज्य के लिए उपयोगी बताता है। समाज की सुव्यवस्था के लिए राज्य को धर्म के कुछ सिद्धांतों को निर्दिष्ट कर देना चाहिए और जनता को उन्हें मानने के लिए बाध्य करना चाहिए। रूसो लोकतन्त्र का समर्थक था।

बुद्धिवादी व्यक्तिवाद एवं प्राकृतिक विधान रूसो में कहाँ तक विद्यमान है, यह मतभेद का विषय है। किंतु इसमें संदेह नहीं कि उसने इन सिद्धांतों का अतिक्रमण किया और आधुनिक राजदर्शन में यूनानी दृष्टिकोण को पुनः प्रतिष्ठित किया जिसके अनुसार राज्य की सामूहिक चेतना ही व्यक्ति की नैतिकता और स्वतंत्रता का स्रोत है। जैसा अरस्तू ने कहा था, राज्य के बाहर रहनेवाला व्यक्ति या तो पशु है या देव। इसीलिए रूसो को प्रसंविदावादी विचारकों में अंतिम न कहकर आधुनिक प्रत्ययवादियों में प्रथम कहा जाता है। कांट ने उसे आचारशास्त्र का न्यूटन कहा है। हीगेल तथा उसके आंग्ल अनुयायियों (ग्रीव, बोसांके आदि) पर उसका प्रभाव स्पष्ट है। आधुनिक जनतंत्र तथा राष्ट्रवाद को उससे विशेष प्रेरणा मिली है।

7

कार्ल मार्क्स की पुस्तकें

कार्ल मार्क्स जर्मन दार्शनिक, अर्थशास्त्री, इतिहासकार, राजनीतिक सिद्धांतकार, समाजशास्त्री, पत्रकार और वैज्ञानिक समाजवाद के प्रणेता थे। इनका पूरा नाम कार्ल हेनरिख मार्क्स इनका जन्म 5 मई 1818 को त्रेवेस (प्रशा) के एक यहूदी परिवार में हुआ। 1824 में इनके परिवार ने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया। 17 वर्ष की अवस्था में मार्क्स ने कानून का अध्ययन करने के लिए बॉन विश्वविद्यालय जर्मनी में प्रवेश लिया। तत्पश्चात् उन्होंने बर्लिन और जेना विश्वविद्यालयों में साहित्य, इतिहास और दर्शन का अध्ययन किया। इसी काल में वह हीगेल के दर्शन से बहुत प्रभावित हुए। 1839-41 में उन्होंने दिमॉक्रितस और एपीक्यूरस के प्राकृतिक दर्शन पर शोध-प्रबंध लिखकर डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त की।

शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् 1842 में मार्क्स उसी वर्ष कोलोन से प्रकाशित 'राइनिशे जीतुंग' पत्र में पहले लेखक और तत्पश्चात् संपादक के रूप में सम्मिलित हुआ किंतु सर्वहारा क्रांति के विचारों के प्रतिपादन और प्रसार करने के कारण 15 महीने बाद ही 1843 में उस पत्र का प्रकाशन बंद करवा दिया गया। मार्क्स पेरिस चला गया, वहाँ उसने 'द्यूस फ्रांजोसिश' जारबूशर पत्र में हीगेल के नैतिक दर्शन पर अनेक लेख लिखे। 1845 में वह फ्रांस से निष्कासित

होकर ब्रुसेल्स चला गये और वहीं उसने जर्मनी के मजदूर संगठन और 'कम्युनिस्ट लीग' के निर्माण में सक्रिय योग दिया। 1847 में एजेंल्स के साथ 'अंतर्राष्ट्रीय समाजवाद' का प्रथम घोषणापत्र (कम्युनिस्ट मॉनिफेस्टो) प्रकाशित किया

1848 में मार्क्स ने पुनः कोलोन में 'नेवे राइनिशे जीतुंग' का संपादन प्रारंभ किया और उसके माध्यम से जर्मनी को समाजवादी क्रांति का संदेश देना आरंभ किया। 1849 में इसी अपराघ में वह प्रशा से निष्कासित हुआ। वह पेरिस होते हुए लंदन चला गया, जीवन पर्यंत वहीं रहा। लंदन में सबसे पहले उसने 'कम्युनिस्ट लीग' की स्थापना का प्रयास किया, किंतु उसमें फुट पड़ गई। अंत में मार्क्स को उसे भंग कर देना पड़ा। उसका 'नेवे राइनिश जीतुंग' भी केवल छः अंको में निकल कर बंद हो गया।

कोलकाता, भारत

1859 में मार्क्स ने अपने अर्थशास्त्रीय अध्ययन के निष्कर्ष 'जुर क्रिटिक दर पोलिटिशेन एकानामी' नामक पुस्तक में प्रकाशित किये। यह पुस्तक मार्क्स की उस बृहत्तर योजना का एक भाग थी, जो उसने संपूर्ण राजनीतिक अर्थशास्त्र पर लिखने के लिए बनाई थी। किंतु कुछ ही दिनों में उसे लगा कि उपलब्ध साम्रगी उसकी योजना में पूर्ण रूपेण सहायक नहीं हो सकती। अतः उसने अपनी योजना में परिवर्तन करके नए सिरे से लिखना आंरभ किया और उसका प्रथम भाग 1867 में दास कैपिटल (द कैपिटल, हिंदी में पूंजी शीर्षक से प्रगति प्रकाशन मास्को से चार भागों में) के नाम से प्रकाशित किया। 'द कैपिटल' के शेष भाग मार्क्स की मृत्यु के बाद एंजेल्स ने संपादित करके प्रकाशित किए। 'वर्गसंघर्ष' का सिद्धांत मार्क्स के 'वैज्ञानिक समाजवाद' का मेरूदंड है। इसका विस्तार करते हुए उसने इतिहास की भौतिकवादी व्याख्या और बेशी मूल्य (सरप्लस वैल्यू) के सिद्धांत की स्थापनाएँ की। मार्क्स के सारे आर्थिक और राजनीतिक निष्कर्ष इन्हीं स्थापनाओं पर आधारित हैं।

1864 में लंदन में 'अंतरराष्ट्रीय मजदूर संघ' की स्थापना में मार्क्स ने बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। संघ की सभी घोषणाएँ, नीतिश् और कार्यक्रम मार्क्स द्वारा ही तैयार किये जाते थे। कोई एक वर्ष तक संघ का कार्य सुचारू रूप से चलता रहा, किंतु बाकुनिन के अराजकतावादी आंदोलन, फ्रांसीसी जर्मन युद्ध

और पेरिस कम्युनों के चलते 'अंतरराष्ट्रीय मजदूर संघ' भंग हो गया। किंतु उसकी प्रवृत्ति और चेतना अनेक देशों में समाजवादी और श्रमिक पार्टियों के अस्तित्त्व के कारण कायम रही।

'अंतरराष्ट्रीय मजदूर संघ' भंग हो जाने पर मार्क्स ने पुनः लेखनी उठाई। किंतु निरंतर अस्वस्थता के कारण उसके शोधकार्य में अनेक बाधाएँ आईं। मार्च 14, 1883 को मार्क्स के तुफानी जीवन की कहानी समाप्त हो गई। मार्क्स का प्रायः सारा जीवन भयानक आर्थिक संकटों के बीच व्यतीत हुआ। उसकी छः संतानो में तीन कन्याएँ ही जीवित रहीं।

पूँजी

मेहनतकशों की तहरीक में एक नए तुफान की पेशबीनी करते हुए मार्क्स ने कोशिश की कि अपनी अर्थशास्त्रीय रचनाएँ करने की रफ्तार तेज कर दें। अठारह माह की ताखिर के बाद जब उसने अपने अर्थशास्त्रीय अध्ययन का फिर से आगाज किया तो उसने इस रचना को अप्ज नए सिरे से तर्तीब देने का फैसला किया और उसको 1859 में प्रकाशित जुर क्रिटिक दर पोलिटिशेन एकानामी में हिस्से के रूप में न छापा जाये, बल्कि ये एक अलग किताब हो। 1862 में उस ने ईल कजलमीन को मतला किया कि इस का नाम द कैपिटल और तहती नाम राजनीतिक अर्थव्यवस्था की आलोचना होगा। द कैपिटल इंतिहाई मुश्किल हालात में लिखी गई। अमेरिकी खानाजंगी की वजह से मार्क्स अपनी आमदनी का बड़ा जरीया खो चुका था। अब वह न्यूयार्क के रोजनामा द ट्रिब्यून के लिए नहीं लिख सकता था। उस के बाल बच्चों के लिए इंतिहाई मुश्किलों का जमाना फिर आ गया। ऐसी सूरत-ए-हाल में अगर एंगलज की तरफ से मुतवातिर और बेगरज माली इमदाद न मिलती तो मार्क्स कैपिटल की तकमील न कर सकता। कैपिटल में कार्ल मार्क्स का प्रस्ताव है कि पूंजीवाद के प्रेरित बल श्रम, जिसका काम अवैतनिक लाभ और अधिशेष मूल्य के परम स्रोत के शोषण करने में है।

दास कैपिटल

दास कैपिटल (जर्मनः Das Kapital, अर्थ - पूँजी) एक पुस्तक है, जिसकी रचना कार्ल मार्क्स ने 1867 ई. में की थी। इसमें पूँजी एवं पूँजीवाद का विश्लेषण है तथा मजदूर वर्ग को शोषण से मुक्त करने के उपाय बताये गए हैं।

इस पुस्तक के द्वारा एक सर्वथा नवीन विचारधारा प्रवाहित हुई, जिसने संपूर्ण प्राचीन मान्यताओं को झकझोर कर हिला दिया। इस पुस्तक के प्रकाशित होने के कुछ ही वर्षों के बाद रूस में साम्यवादी क्रांति हुई।

विषय-वस्तु

दास कैपिटल–राजनीतिक अर्थव्यवस्था (1867) की आलोचना, कार्ल मार्क्स का प्रस्ताव है कि पूंजीवाद के प्रेरित बल श्रम, जिसका काम अवैतनिक लाभ और अधिशेष मूल्य के परम स्रोत के शोषण करने में है। नियोक्ता लाभ (नई उत्पादन मूल्य) के अधिकार का दावा कर सकते हैं, क्योंकि वह उत्पादक पूँजी (उत्पादन के साधन) संपत्ति है, जो कानूनी तौर पर संपत्ति के अधिकार के माध्यम से कर रहे हैं, पूंजीवादी राज्य द्वारा संरक्षित मालिक. पूंजी के उत्पादन में (पैसा) वस्तुओं (माल और सेवाओं) के बजाय, कार्यकर्ताओं लगातार आर्थिक स्थिति है, जिसके द्वारा वे श्रम पुनरुत्पादन, कैपिटल 'कानून के प्रस्ताव का' पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली के अपने मूल से, अपने भविष्य के लिए पूंजी, मजदूरी श्रम, कार्यस्थल के परिवर्तन के विकास के संचय की गतिशीलता का वर्णन करके एक विवरण, प्रस्ताव है, पूंजी का केन्द्रीकरण, वाणिज्यिक प्रतियोगिता, बैंकिंग प्रणाली, लाभ की दर की गिरावट, भूमि किराए, आदि।

प्रकाशन

Kapital, प्रथम खंड (1867) मार्क्स जीवनकाल में प्रकाशित किया गया था, लेकिन मार्क्स की 1883 में मृत्यु हो गई। कैपिटल, खंड द्वितीय (1885) और कैपिटल, खंड III (1894), जिसका संपादन दोस्त एवं सहयोगी फ्रेडरिक एंगेल्स ने किया और मार्क्स के काम के रूप में प्रकाशित किया। कैपिटल पहले का अनुवाद प्रकाशन: राजनीतिक अर्थव्यवस्था की आलोचना इंपीरियल रूस में मार्च 1872 में किया गया था। पहला विदेशी प्रकाशन 1887 में अंग्रेजी में करा गया। 2008-9 की वैश्विक आर्थिक पतन के मद्देनजर में, मार्क्स की कैपिटल की जर्मनी में उच्च मांग में थी। 2012 में कैपिटल का हास्य पुस्तक संस्करण जापान में निकाला गया।

सितंबर 2018 में कार्ल मार्क्स द्वारा लिखित पुस्तक दास कैपिटल का 151 वर्ष पूरे हो रहे हैं, इस पुस्तक को कार्ल मार्क्स और फ्रेडरिक एंगल्स द्वारा 1867 में लिखा गया पुस्तक में बताया गया है, पूंजीवाद किस प्रकार से राज्य

के समांतर कार्य करता है, व्यक्ति द्वारा दी गई मजदूरी को राज्य अपने उपयोग में किस प्रकार विच्छेदित करता है, धनबल का संबंध कैसे राज्य का चरित्र परिवर्तित करता है, कार्ल मार्क्स ने कहा है कि सर्वहारा वर्ग, पूंजीपतियों के खिलाफ विद्रोह तय है, मार्क्स ने माना है, पूंजी श्रमिकों के शोषण की बुनियाद पर टिकी है, यह श्रमिकों का खून पीकर और मजबूत हो रही है, मार्क्स ने यथार्थवाद को ध्यान में नहीं रखा है!

दास कैपिटल अर्थशास्त्र को समाजशास्त्र से जोड़कर देखता है, मार्क्स ने कहा है कि उत्पादों की दुनिया में व्यक्तिगत संबंध भी चीजों के आपसी संबंधों की तरह हो गए हैं, मेरे जैसे पुराने फैशन वाले आदमी के लिए यही सत्य है, धन मानव के श्रम के शोषण से ही निकलता है, मार्क्स ने राज्य के प्रभाव को भी समझाया है, बाद में इसे पारिस्थितिकीय प्रभाव माना है!

मशीनों और औद्योगिक उद्योगों पर लिखे अध्याय में उन्होंने बताया है, कैसे साम्राज्यवादी प्रभाव के जरिए यूरोप के लोगों ने अपने उपनिवेशों के उद्योगों को बर्बाद कर दिया, इसके जरिए यह पता चलता है कि शोषणकारी केंद्र और हथियारों के रिश्ते से कार्ल मार्क्स परिचित थे,

पूंजीपतियों के द्वारा अत्यधिक शोषण यह निर्देशित करता है कि किस प्रकार से मजदूरों की उत्पादकता अधिक से अधिक उपयोग करके कम से कम मजदूरी दी जाए, यही सर्वहारा का स्तर नीचे होने से जो श्रमिक रोजगार से वंचित है वह न चाहते हुए भी मजदूरी कम करने का माध्यम बन जाते हैं,

छोटे कारोबारियों के लिए उत्पादन लागत बढ़ रही है, इससे पूरी दुनिया के बड़े पूंजी पतियों के मुनाफे कमाने की क्षमता बढ़ रही है, लेकिन इससे जो स्थिति पैदा हो रही है, उससे लोगों की क्रय शक्ति नहीं बढ़ रही है और खपत कम हो रही है, इससे उद्योगों की लगत बढ़ी हुई दिखती है और नए निवेश पर होने वाले मुनाफा कम हो जाता है, इससे हानि होता होता है!

इस पुस्तक में बुनियादी रुप से यह निर्देशित किया गया है, कि एक समाज के अंदर मजदूर वर्ग किस प्रकार से राज्य और पूंजीपतियों द्वारा शोषित होती हैं, पूंजीपति वर्ग किस प्रकार से असमानताओं को बढ़ावा देते हैं और उत्पादन के ऊपर अपना नियंत्रण प्रभावित करते हैं, समाज में उत्पादन और उत्पादन के साधन के ऊपर उन्हीं व्यक्तियों का अस्तित्त्व होता है, जो राज्य द्वारा समर्थित होते हैं, राज्य का चरित्र पूंजीगत होने के कारण वह सदैव पूंजीवादी व्यवस्था को बढ़ावा देता है, मजदूर वर्ग इससे वंचित रह जाएंगे !

कार्ल मार्क्स ने पुस्तक में बताया है कि इसको ठीक करने के लिए व्यक्तियों द्वारा खुद से क्रांति करनी होगी जब तक क्रांति नहीं होगी तब तक उत्पादन के साधन पर बुर्जुआ वर्ग का ही अधिकार होगा और मजदूर केवल मजदूरी ही प्राप्त करता रहेगा, सदैव वंचित वर्ग प्राकृतिक न्याय की अवधारणा वंचित रहेंगे, मार्क्स ने पुस्तक में यह भी माना है उत्पादन और उत्पादन के साधन के बीच का संबंध राज्य नियंत्रित करता है और राज्य अपेक्षित लाभ को सदैव अपने हित में उपयोग करेगा जिसका संबंध मजदूरों से नहीं हो सकता!

इस पुस्तक में मार्क्स ने भविष्य में होने वाली क्रांतियों को बताया है कि किस प्रकार से समाज और उसके चरित्र में परिवर्तन आएगा और एक समय केवल मजदूरों का शासन ही विश्व अर्थव्यवस्था में दिखाई देगी!

8

विलियम शेक्सपियर की पुस्तकें

विलियम शेक्सपियर एक अंग्रेजी नाटककार, कवि और अभिनेता थे, जिन्हें व्यापक रूप से अंग्रेजी भाषा का सबसे बड़ा लेखक और दुनिया का सबसे बड़ा नाटककार माना जाता था। उन्हें अक्सर इंग्लैंड का राष्ट्रीय कवि और 'बार्ड ऑफ एवन' (या बस 'बार्ड') कहा जाता है। उनके नाटकों का हर प्रमुख में अनुवाद किया गया है उनका अध्ययन और पुनर्व्याख्या भी जारी है।

विलियम शेक्सपियर सिग्नेचर एसवीजी

शेक्सपियर का जन्म और पालन-पोषण स्ट्रैटफोर्ड-ऑन-एवन, वार्विकशायर में हुआ था। 18 साल की उम्र में, उन्होंने ऐनी हैथवे से शादी की, जिनसे उनके तीन बच्चे हुए—सुसाना और जुड़वाँ हेमनेट और जूडिथ। 1585 से 1592 के बीच, उन्होंने लंदन में एक अभिनेता, लेखक और एक प्लेइंग कंपनी के भाग-मालिक के रूप में एक सफल कैरियर शुरू किया, जिसे लॉर्ड चेम्बरलेन मेन कहा जाता है, जिसे बाद में किंग्स मेन के नाम से जाना जाता है। 49 वर्ष की उम्र (1613 के आसपास), वह स्ट्रैटफोर्ड के लिए सेवानिवृत्त हुए प्रतीत होते हैं, जहाँ तीन साल बाद उनकी मृत्यु हो गई। शेक्सपियर के निजी जीवन के कुछ

रिकॉर्ड बच गए, इसने इस तरह के मामलों के बारे में काफी अटकलें लगाई हैं उनकी शारीरिक बनावट, उनकी कामुकता, उनकी धार्मिक मान्यताएं और क्या उनके लिए जिम्मेदार काम दूसरों द्वारा लिखे गए थे।

शेक्सपियर ने अपने अधिकांश ज्ञात कार्यों का निर्माण 1589 और 1613 के बीच किया था। उनके प्रारंभिक नाटक मुख्य रूप से हास्य और इतिहास थे और इन्हें इन शैलियों में निर्मित कुछ सर्वश्रेष्ठ कार्यों के रूप में माना जाता है। लगभग 1608 तक, उन्होंने मुख्य रूप से त्रासदियों को लिखा, उनमें से हैमलेट, रोमियो और जूलियट, ओथेलो, किंग लियर और मैकबेथ, सभी को अंग्रेजी भाषा में बेहतरीन कार्यों में से एक माना जाता है। अपने जीवन के अंतिम चरण में, उन्होंने दुखद उपचार लिखा (जिसे रोमांस के रूप में भी जाना जाता है) और अन्य नाटककारों के साथ सहयोग किया।

शेक्सपियर के कई नाटक उनके जीवनकाल में अलग-अलग गुणवत्ता और सटीकता के संस्करणों में प्रकाशित हुए थे। हालांकि, 1623 में, शेक्सपियर के दो साथी अभिनेताओं और दोस्तों, जॉन हेमिंगस और हेनरी कोंडेल ने फर्स्ट फोलियो के रूप में जाना जाने वाला एक और निश्चित पाठ प्रकाशित किया, जो शेक्सपियर के नाटकीय रूप से मरणोपरांत एकत्र किया गया संस्करण था जिसमें उनके सभी नाटक शामिल थे। वॉल्यूम बेन जोंसन की एक कविता से पूर्व में लिया गया था, जिसमें जोंसन ने वर्तमान में शेक्सपियर को 'एक उम्र का नहीं, बल्कि सभी समय के लिए' कहा।

प्रारंभिक जीवन

विलियम शेक्सपियर के पुत्र थे जॉन शेक्सपियर, एक एल्डरमैन और एक सफल ग्लोवर (दस्ताने निर्माता) मूल रूप से Snitterfield और मरियम आर्डेन, एक संपन्न जमींदार किसान की बेटी। उनका जन्म स्ट्रैटफोर्ड-ऑन-एवन में हुआ था, जहाँ उन्हें 26 अप्रैल 1564 को बपतिस्मा दिया गया था। उनकी जन्मतिथि अज्ञात है, लेकिन परंपरागत रूप से 23 अप्रैल को सेंट जॉर्ज डे मनाया जाता है। यह तारीख, जिसे 1, वीं सदी के एक विद्वान द्वारा की गई गलती के बारे में पता लगाया जा सकता है, ने जीव विज्ञानियों से अपील की है, क्योंकि शेक्सपियर की मृत्यु 1616 में हुई थी। , वह आठ बच्चों में से तीसरे थे और सबसे बड़े जीवित बेटे थे।

जॉन शेक्सपियर का घर, स्ट्रैटफोर्ड-ऑन-एवन में शेक्सपियर का जन्मस्थान माना जाता है।

हालांकि इस अवधि के लिए कोई उपस्थिति रिकॉर्ड नहीं बचता है, अधिकांश जीवनीकार इस बात से सहमत हैं कि शेक्सपियर शायद स्ट्रैटफोर्ड के किंग्स न्यू स्कूल में पढ़े थे, 1553 में एक मुफ्त स्कूल, एक चौथाई मील (400 मीटर) अपने घर से। एलिजाबेथ युग के दौरान व्याकरण के विद्यालयों की गुणवत्ता में विविधता थी, लेकिन व्याकरण के स्कूल पाठ्यक्रम काफी हद तक समान थे–बुनियादी लैटिन पाठ को शाही डिक्री द्वारा मानकीकृत किया गया था और स्कूल ने लैटिन शास्त्रीय लेखकों पर आधारित व्याकरण में गहन शिक्षा प्रदान की होगी। ।

18 साल की उम्र में, शेक्सपियर ने 26 वर्षीय ऐनी हैथवे से शादी की। 6 महीने बाद ऐनी ने एक बेटी को जन्म दिया। सुजाना ने 26 मई 1583 को बपतिस्मा लिया। जुड़वाँ बेटे हमनेट और बेटी जुडिथ, लगभग दो साल बाद और 2 फरवरी 1585 को बपतिस्मा लिया गया। हैमनेट की 11 वर्ष की आयु में अज्ञात कारणों से मृत्यु हो गई और 11 अगस्त 1596 को दफनाया गया।

शेक्सपियर के हथियारों का कोट, जैसा कि जॉन शेक्सपियर को कोट-ऑफ-आर्म देने के लिए आवेदन के किसी न किसी मसौदे पर दिखाई देता है। इसमें परिवार के नाम पर एक भाले की सजा है।

जुड़वा बच्चों के जन्म के बाद, शेक्सपियर ने 1592 में लंदन थिएटर के दृश्य के भाग के रूप में उल्लेख किए जाने तक कुछ ऐतिहासिक निशान छोड़ दिए। यह अपवाद महारानी की अदालत के समक्ष एक कानून के मामले के 'शिकायत बिल' में उनके नाम की उपस्थिति है। वेस्टमिंस्टर ने माइकलमस टर्म 1588 और 9 अक्टूबर 1589 को दिनांकित किया। विद्वानों ने 1585 से 1592 के बीच के वर्षों को शेक्सपियर के 'खोए हुए वर्षों' के रूप में संदर्भित किया है। इस अवधि के लिए प्रयास करने वाले जीवनीकारों ने कई एपोक्रिफल कहानियों की सूचना दी है। शेक्सपियर के पहले जीवनी लेखक निकोलस रोवे ने एक स्ट्रैटफोर्ड किंवदंती को सुनाया कि शेक्सपियर लंदन के लिए शहर से भाग गया था, स्थानीय विद्रोहियों की संपत्ति में हिरण के अवैध शिकार के लिए मुकदमा चलाने के लिए थॉमस लुसी। शेक्सपियर के बारे में यह भी माना जाता है कि उन्होंने लुसी से अपना बदला लेने के लिए उसके बारे में एक भद्दी गाली

लिखवा ली। 1 -वीं शताब्दी की एक अन्य कहानी में शेक्सपियर ने अपने नाटकीय करियर की शुरुआत लंदन में थिएटर के संरक्षक के घोड़ों के साथ की। जॉन ऑब्रे ने बताया कि शेक्सपियर एक देश के स्कूल मास्टर थे। 20 वीं सदी के कुछ विद्वानों ने सुझाव दिया कि शेक्सपियर को कैथोलिक भूस्वामी लंकाशायर के अलेक्जेंडर हॉगटन द्वारा एक स्कूल मास्टर के रूप में नियुक्त किया गया था, जिन्होंने अपनी इच्छा में एक निश्चित 'विलियम शेक्सफाइट' नाम दिया था। लिटिल सबूत के प्रमाण ऐसी कहानियों के अलावा अन्य अफवाह उनकी मृत्यु के बाद एकत्र किया गया था और लंकाशायर क्षेत्र में शेकशाफ्ट एक सामान्य नाम था।

लंदन और नाटकीय कैरियर

यह निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है कि जब शेक्सपियर ने लिखना शुरू किया था, लेकिन समकालीन गठबंधन और प्रदर्शन के रिकॉर्ड बताते हैं कि उनके कई नाटक 1592 तक लंदन के मंच पर थे। तब तक, उन्हें लंदन में पर्याप्त रूप से ज्ञात किया गया था कि उन पर प्रिंट द्वारा हमला किया गया था नाटककार रॉबर्ट ग्रीन अपने ग्रॉट्स-वर्थ ऑफ विट में–

एक अपस्टार्ट क्रो है, जो हमारे पंखों से सुशोभित है, कि एक खिलाड़ी के छिपने में लिपटे अपने टाइगर के दिल के साथ, वह मानती है कि वह आप के रूप में एक खाली कविता को बमबारी करने में सक्षम है– और एक पूर्ण जोहानस फैक्टम होने के नाते, अपने ही दंभ में एक देश में एकमात्र शेक-दृश्य है।

ग्रीन के शब्दों के सटीक अर्थ पर विद्वानों में भिन्नता है, लेकिन ज्यादातर इस बात से सहमत हैं कि ग्रीने शेक्सपियर पर क्रिस्टोफर मारलो, थॉमस नाशे और खुद ग्रीन जैसे विश्वविद्यालय-शिक्षित लेखकों से मेल खाने की कोशिश में अपनी रैंक से ऊपर पहुँचने का आरोप लगा रहे थे। तथाकथित 'विश्वविद्यालय बुद्धि')। इटैलिकाइज्ड वाक्यांश 'शेक्स-सीन' के साथ-साथ 'शेक्स-सीन'। भाग 3 के साथ शेक्सपियर के हेनरी VI के भाग 3 में 'ओह, टाइगर का दिल एक महिला के छिपने में लिपटा हुआ ' स्पष्ट रूप से शेक्सपियर को ग्रीन के लक्ष्य के रूप में पहचानता है। जैसा कि यहां बताया गया है, जोहान्स फैक्टोटम ('सभी ट्रेडों के जैक') अधिक सामान्य 'सार्वभौमिक प्रतिभा' के बजाय दूसरों के काम के साथ एक-दूसरे दर्जे के टिंकरर को संदर्भित करता है।

ग्रीन का हमला थिएटर में शेक्सपियर के काम का सबसे पुराना उल्लेख है। जीवनीकारों का सुझाव है कि हो सकता है कि उनके करियर की शुरुआत 1580 के मध्य से किसी भी समय ग्रीन की टिप्पणी से पहले हो। के बाद ये शेक्सपियर के नाटकों का प्रदर्शन केवल लॉर्ड चेम्बरलेन मेन द्वारा किया गया था, जो कि शेक्सपियर सहित खिलाड़ियों के एक समूह के स्वामित्व वाली कंपनी थी, जो जल्द ही लंदन में अग्रणी खेल कंपनी बन गई। 1603 में रानी एलिजाबेथ की मृत्यु के बाद, कंपनी को नए राजा जेम्स, द्वारा शाही पेटेंट से सम्मानित किया गया और उसका नाम बदलकर किंग्स मेन कर दिया गया।

1599 में, कंपनी के सदस्यों की एक साझेदारी ने टेम्स नदी के दक्षिणी किनारे पर अपना थिएटर बनाया, जिसे उन्होंने ग्लोब नाम दिया। 1608 में, इस साझेदारी ने ब्लैकइयर्स इनडोर थिएटर को भी संभाल लिया। शेक्सपियर की संपत्ति की खरीद और निवेश के रिकॉर्ड से पता चलता है कि कंपनी के साथ उनके सहयोग ने उन्हें एक धनी व्यक्ति बना दिया और 1597 में, उन्होंने स्ट्रैटफोर्ड, नई जगह में दूसरा सबसे बड़ा घर खरीदा।

शेक्सपियर के कुछ नाटक क्वार्टो संस्करणों में प्रकाशित हुए, 1594 में शुरू हुए और 1598 तक, उनका नाम एक विक्रय बिंदु बन गया और शीर्षक पृष्ठों पर दिखाई देने लगे। शेक्सपियर ने नाटककार के रूप में अपनी सफलता के बाद अपने और अन्य नाटकों में अभिनय करना जारी रखा। 1623 का फर्स्ट फोलियो, शेक्सपियर को 'इन सभी नाटकों में प्रधान अभिनेताओं' में से एक के रूप में सूचीबद्ध करता है, जिनमें से कुछ का पहली बार Volpone के बाद मंचन किया गया था, हालांकि किसी को यह पता नहीं चल सकता था कि उसने कौन सी भूमिकाएँ निभाईं। 1610 में, हॉनफोर्ड के जॉन डेविस ने लिखा कि 'अच्छा विल' ने 'किंगली' भूमिकाएं निभाईं। में 1600 रोवे ने एक परंपरा को पारित किया कि शेक्सपियर ने हेमलेट के पिता का भूत खेला। बाद की परंपराओं का कहना है कि उन्होंने एडम इन एज यू लाइक इट और कोरस इन हेनरी वी, खेला है, हालांकि विद्वानों को उस जानकारी के स्रोतों पर संदेह है।

अपने पूरे करियर के दौरान, शेक्सपियर ने अपना समय लंदन और स्ट्रैटफोर्ड के बीच विभाजित किया। 1596 में, स्ट्रेटफोर्ड में अपने परिवार के घर के रूप में न्यू प्लेस खरीदने से पहले, शेक्सपियर सेंट हेलेन, बिशप्सगेट, टेम्स नदी के उत्तर में बसा था। वह 15 99 तक नदी के किनारे साउथवार्क चले गए, उसी वर्ष उनकी कंपनी ने वहां ग्लोब थियेटर का निर्माण किया। 1604 तक,

वह फिर से नदी के उत्तर में चला गया, सेंट पॉल कैथेड्रल के उत्तर में एक बढ़िया घर के साथ। वहाँ, उन्होंने क्रिस्टोफर माउंटजॉय नामक एक फ्रांसीसी हुगैनोट से कमरा किराए पर लिया, जो महिलाओं की विग और अन्य हेडगियर बनाने वाली कंपनी है।

बाद के वर्ष और मृत्यु

रोवे जॉनसन द्वारा दोहराई गई परंपरा को रिकॉर्ड करने वाले पहले जीवनी लेखक थे, कि शेक्सपियर स्ट्रैटफोर्ड को 'उनकी मृत्यु से कुछ साल पहले' सेवानिवृत्त हुए थे। वह अभी भी 160, में लंदन में एक अभिनेता के रूप में काम कर रहे थे, 1635 में शार्कर्स की याचिका के जवाब में, कटहर्ट बर्बेज ने कहा कि हेनरी इवांस के 1608 में ब्लैकपार्स थियेटर के पट्टे को खरीदने के बाद, किंग्स मेन ने 'पुरुष खिलाड़ियों को' वहां रखा, 'जो हेमिंगिस, कॉन्डेल, शेक्सपियर, आदि थे, हालांकि यह संभवत: प्रासंगिक है कि 1609 में बुबोनिक प्लेग लंदन में भड़का। प्लेग के विस्तारित प्रकोपों के दौरान लंदन के प्लेहाउस को बार-बार बंद किया गया (मई 1603 और फरवरी 1610 के बीच कुल 60 से अधिक महीने बंद), जिसका मतलब था कि अक्सर कोई कार्य नहीं होता था। उस समय सभी कार्यों से सेवानिवृत्ति असामान्य थी। 1611-1614 के दौरान शेक्सपियर लंदन जाते रहे। 1612 में, उन्हें बेलौट वी माउंटजोय में एक गवाह के रूप में बुलाया गया था, जो कि माउंटजॉय की बेटी, मैरी की शादी से संबंधित एक अदालत का मामला था। मार्च 1613 में, उन्होंने पूर्व ब्लैकपायर्स के पुजारी का गेटहाउस खरीदा और नवंबर 1614 से, वह अपने दामाद, जॉन हॉल के साथ कई हफ्तों के लिए लंदन में थे। 1610 के बाद, शेक्सपियर ने कम नाटक लिखे और 1613 के बाद किसी ने भी उन्हें जिम्मेदार नहीं ठहराया। उनके आखिरी तीन नाटक सहयोग थे, शायद जॉन फ्लेचर के साथ, [who1, जिन्होंने उन्हें किंग्स मेन के घर नाटककार के रूप में सफल बनाया।

शेक्सपियर का निधन 23 अप्रैल 1616 को 52 वर्ष की आयु में हुआ। उनकी वसीयत पर हस्ताक्षर करने के एक महीने के भीतर उनकी मृत्यु हो गई, एक दस्तावेज जो उन्होंने खुद को 'संपूर्ण स्वस्थ' में होने का वर्णन करते हुए शुरू किया। कोई भी समकालीन समकालीन स्रोत यह नहीं बताता है कि उनकी मृत्यु कैसे या क्यों हुई। आधी सदी के बाद, जॉन वार्ड, स्ट्रैटफोर्ड के पादरी,

उसकी नोटबुक में लिखा है– 'शेक्सपियर, Drayton और बेन जोंसन एक प्रमुदित बैठक बुलाई थी और ऐसा लगता है कि, बहुत कठिन पिया शेक्सपियर को बुखार का वहाँ मृत्यु हो गई। चूंकि शेक्सपियर जोंसन और ड्रेटन को नहीं जानते थे, इसलिए असंभव परिदृश्य नहीं था। साथी लेखकों की ओर से श्रद्धांजलि, उनकी अचानक मृत्यु का उल्लेख है– 'हम आश्चर्यचकित थे, शेक्सपियर, कि तुम इतनी जल्दी चले गए। दुनिया के मंच से कब्र तक थका देने वाला कमरा।'

पवित्र ट्रिनिटी चर्च, स्ट्रैटफोर्ड-ऑन-एवन, जहां शेक्सपियर को बपतिस्मा दिया गया था और दफन किया गया था।

वह अपनी पत्नी और दो बेटियों से बच गया था। Susanna, शेक्सपियर की मृत्यु से पहले दो महीने। 1607 में, एक डॉक्टर जोन हाल से शादी की थी और जूडिथ शादीशुदा था थॉमस क्विनी, एक vintner शेक्सपियर ने 25 मार्च 1616 को अपनी अंतिम वसीयत और वसीयतनामा पर हस्ताक्षर किएय अगले दिन, उनके नए दामाद, थॉमस क्विनी को मार्गरेट व्हीलर द्वारा एक नाजायज बेटे को जन्म देने का दोषी पाया गया, जिसकी प्रसव के दौरान मृत्यु हो गई थी। थॉमस को चर्च की अदालत ने सार्वजनिक तपस्या करने का आदेश दिया था, जिससे शेक्सपियर परिवार को बहुत शर्मिंदगी उठानी पड़ी।

शेक्सपियर ने अपनी बड़ी बेटी सुजाना को अपनी बड़ी संपत्ति का बड़ा हिस्सा इस शर्त के तहत दिया कि वह इसे 'अपने शरीर के पहले बेटे' के रूप में बरकरार रखे। क्विनीस के तीन बच्चे थे, जिनमें से सभी बिना शादी के ही मर गए। होल्स का एक बच्चा था, एलिजाबेथ, जिसने दो बार शादी की लेकिन में बच्चों के बिना मर गया, शेक्सपियर की सीधी रेखा को समाप्त कर दिया। शेक्सपियर की इच्छा में उसकी पत्नी ऐनी का जिक्र होगा, जो शायद अपनी संपत्ति के एक तिहाई हिस्से की हकदार थी। उसने एक बिंदु बनाया, हालाँकि, उसे 'मेरा दूसरा सबसे अच्छा बिस्तर' छोड़ने के कारण, एक ऐसा वाकया हुआ जिसने बहुत अधिक अटकलें लगाईं। कुछ विद्वानों ने वसीयत को ऐनी के अपमान के रूप में देखा, जबकि अन्य का मानना है कि दूसरा सबसे अच्छा बिस्तर वैवाहिक बिस्तर होता और इसलिए महत्त्व में समृद्ध होता।

शेक्सपियर की कब्र, ऐनी शेक्सपियर, उनकी पत्नी और थॉमस नैश, उनकी पोती के पति के बगल में शेक्सपियर में दफनाया गया था वेदी की होली

ट्रिनिटी चर्च उनकी मृत्यु के बाद दो दिन। पत्थर की स्लैब में उनकी कब्र को ढंकने वाले एपिटाफ को उनकी हड्डियों को हिलाने के खिलाफ एक अभिशाप शामिल है, जिसे 2008 में चर्च की बहाली के दौरान सावधानी से बचा गया था–

(आधुनिक वर्तनी: अच्छा दोस्त, यीशु की खातिर, यहाँ घिरे धूल को खोदने के लिए। धन्य हो वह आदमी जो इन पत्थरों को बख्शता है और शापित हो कि वह मेरी हड्डियों को हिला दे।)

1623 से कुछ समय पहले, उत्तर की दीवार पर उनकी स्मृति में एक स्मारक बनाया गया था, जिसमें लेखन के कार्य में उनका आधा पुतला था। इसकी पट्टिका उसकी तुलना नेस्टर, सुकरात और वर्जिल से करती है। 1623 में, फर्स्ट फोलियो के प्रकाशन के साथ, ड्रॉशआउट उत्कीर्णन प्रकाशित किया गया था।

शेक्सपियर को दुनिया भर में कई प्रतिमाओं और स्मारकों में स्मरण किया गया है, जिसमें साउथवार्क कैथेड्रल और वेस्टमिंस्टर एब्बे में कवि सम्मेलन भी शामिल हैं।

इस अवधि के अधिकांश नाटककारों ने आमतौर पर कुछ बिंदु पर दूसरों के साथ सहयोग किया और आलोचक इस बात से सहमत हैं कि शेक्सपियर ने अपने करियर में ज्यादातर शुरुआती और देर से ही ऐसा किया।

शेक्सपियर की पहली रिकॉर्ड की गई रचनाएं हैं रिचर्ड III और हेनरी VI के तीन भाग, ऐतिहासिक नाटक के लिए एक प्रचलन के दौरान 1590 के दशक में लिखे गए। शेक्सपियर के नाटकों तारीख करने के लिए मुश्किल हो जाता है ठीक है, तथापि और ग्रंथों के अध्ययन बताते हैं कि टाइटस एंड्रोनिकस, द कॉमेडी ऑफ एरर्स, कर्कशा के Taming और वेरोना के टू जेंटलमैन हो सकता है शेक्सपियर के प्रारंभिक काल से संबंधित। [10draw, उनका पहला इतिहास है, जो राफेल होलिंशेड के 15वें संस्करण पर भारी पड़ता है इंग्लैंड, स्कॉटलैंड और आयरलैंड का इतिहास, कमजोर या भ्रष्ट शासन के विनाशकारी परिणामों का नाटक करते हैं और ट्यूडर राजवंश की उत्पत्ति के औचित्य के रूप में व्याख्या की गई है। प्रारंभिक नाटक अन्य एलिजाबेथ नाटककारों, विशेष रूप से थॉमस किड और क्रिस्टोफर मार्लो के कामों से, मध्यकालीन नाटक की परंपराओं और सेनेका के नाटकों से प्रभावित थे। कॉमेडी ऑफ एरर्स भी शास्त्रीय

मॉडलों पर आधारित थी, लेकिन द टैमिंग ऑफ द शव के लिए कोई स्रोत नहीं था। पाया गया है, हालांकि यह एक ही नाम के एक अलग नाटक से संबंधित है और एक लोक कथा से लिया गया हो सकता है। वेरोना के दो सज्जनों की तरह, जिसमें दो दोस्त बलात्कार को स्वीकार करते हुए दिखाई देते हैं, एक आदमी द्वारा एक महिला की स्वतंत्र आत्मा के नामकरण की कहानी, जो कभी-कभी आधुनिक आलोचक होती है।

ओबेरियन, टाइटेनिया और पुक विद फेयरिस डांसिंग। विलियम ब्लेक द्वारा, सी. 1786. टेट ब्रिटेन।

शेक्सपियर के शुरुआती शास्त्रीय और इटालियन कॉमेडीज, जिनमें तंग डबल प्लॉट और सटीक कॉमिक सीक्वेंस शामिल हैं, जो उनके सबसे प्रशंसित कॉमेडी के रोमांटिक माहौल के मध्य 1590 के दशक में रास्ता देते हैं। ए मिडसमर नाइट्स ड्रीम रोमांस, परी जादू और कॉमिक लो-लाइफ दृश्यों का एक मजाकिया मिश्रण है। शेक्सपियर की अगली कॉमेडी, समान रूप से रोमांटिक मर्चेंट ऑफ वेनिस, में तामसिक यहूदी साहूकार शीलॉक का चित्रण है, जो एलिजबेथन के विचारों को दर्शाता है, लेकिन आधुनिक दर्शकों के लिए अपमानजनक हो सकता है। वॉट एंड वर्डप्ले ऑफ मच अडो अबाउट नथिंग, आकर्षक ग्रामीण सेटिंग ऑफ अस यू लाइक इट और बारहवीं रात का जीवंत मेलजोल शेक्सपियर के महान हास्य के को पूरा करता है। गीतात्मक रिचर्ड द्वितीय के बाद, लगभग पूरी तरह से कविता में लिखा गया, शेक्सपियर ने 1590 के दशक के अंत में हेनरी चतुर्थ, 1 और 2 और हेनरी वी के इतिहास में गद्य कॉमेडी की शुरुआत की। हास्य और गंभीर दृश्यों, गद्य और कविता के बीच चतुराई से स्विच करने पर उनके चरित्र अधिक जटिल और कोमल हो जाते हैं और उनके परिपक्व काम की कथा विविधता को प्राप्त करते हैं। यह अवधि दो त्रासदियों के साथ शुरू और समाप्त होती है– रोमियो और जूलियट, जो यौन रूप से चार्ज किशोरावस्था, प्यार और मृत्यु की प्रसिद्ध रोमांटिक त्रासदी है और जूलियस सीजर सर पर आधारित थॉमस उत्तर 'की रों 1579 अनुवाद प्लूटार्क' समानांतर thou-which नाटक एक नई तरह की शुरुआत की। शेक्सपियर के विद्वान जेम्स शापिरो के अनुसार, जूलियस सीजर में, 'राजनीति, चरित्र, आवक, समकालीन घटनाओं, यहां तक कि शेक्सपियर के लेखन के कार्य पर अपने स्वयं के प्रतिबिंबों के विभिन्न किस्में, एक-दूसरे को प्रभावित करने लगे'।

हेमलेट, होरैटो, मार्सेलस और घोस्ट ऑफ हैमलेट फादर। हेनरी फुसेली, 1780–1785। कुन्थौस ज्यूरिख।

17 वीं शताब्दी की शुरुआत में, शेक्सपियर ने तथाकथित 'समस्या नाटकों' के लिए उपाय, ट्रॉयलस और क्रेसिडा और ऑल वेल्स एंड एंड्स वेल और उनकी सबसे अच्छी ज्ञात त्रासदियों की एक संख्या लिखी। कई आलोचकों का मानना है कि शेक्सपियर की सबसे बड़ी त्रासदी उनकी कला के शिखर का प्रतिनिधित्व करती है। शेक्सपियर की सबसे बड़ी त्रासदियों में से एक, हेमलेट के शीर्षक नायक, शायद किसी भी अन्य शेक्सपियर चरित्र की तुलना में अधिक चर्चा की गई है, विशेष रूप से उनके प्रसिद्ध एकल के लिए जो 'शुरू होना या न होना, वह सवाल है '। अंतर्मुखी हेमलेट के विपरीत, जिसका घातक दोष हिचकिचाहट है, इसके बाद की त्रासदियों के नायक, ओथेलो और किंग लियर, फैसले की जल्दबाजी में त्रुटिपूर्ण हैं। शेक्सपियर की त्रासदियों के प्लॉट अक्सर ऐसी घातक त्रुटियों या खामियों पर मंडराते हैं, जो नायक के आदेश को पलट देते हैं और जिसे वह प्यार करते हैं उसे नष्ट कर देते हैं। ओथेलो में खलनायक Iago बात करने के लिए ओथेलो की यौन ईर्ष्या स्टोक्स जहां वह निर्दोष पत्नी की हत्या जो उसे प्यार करता है। किंग लियर, में बूढ़ा राजा अपनी शक्तियों को छोड़ देने की दुखद त्रुटि करता है, उन घटनाओं की शुरुआत करता है, जो ग्लॉस्टर के अर्ल को टॉर्चर और अंधा करने और लेयर की सबसे छोटी बेटी कॉर्डेलिया की हत्या के लिए प्रेरित करती हैं। समीक्षक फ्रेंक केर्मोड के अनुसार, 'नाटक ... न तो इसके अच्छे चरित्र प्रस्तुत करता है और न ही इसके दर्शकों को इसकी क्रूरता से कोई राहत मिलती है'। मैकबेथ में सबसे छोटी और ज्यादा शेक्सपियर की त्रासदियों की संकुचित, बेकाबू महत्त्वाकांक्षा को उकसाती मैकबेथ और उसकी पत्नी, लेडी मैकबेथ, इस नाटक में, शेक्सपियर दुखद संरचना के लिए एक अलौकिक तत्त्व जोड़ता है। उनकी अंतिम प्रमुख त्रासदियों, एंटनी और क्लियोपेट्रा और कोरिओलेनस में शेक्सपियर की कुछ बेहतरीन कविताएं हैं और उन्हें कवि और आलोचक टीएस एलियट द्वारा उनकी सबसे सफल त्रासदी माना जाता है।

अपनी अंतिम अवधि में, शेक्सपियर रोमांस या ट्रेजिकोमेडी में बदल गया और तीन और प्रमुख नाटकों को पूरा किया। त्रासदियों की तुलना में कम अस्पष्ट, ये चार नाटक 1590 के दशक के हास्य की तुलना में टोन में गंभीर हैं, लेकिन

वे सामंजस्य और संभावित दुखद त्रुटियों की क्षमा के साथ समाप्त होते हैं। कुछ टिप्पणीकारों ने इस बदलाव को शेक्सपियर के जीवन पर जीवन के एक अधिक निर्मल दृश्य के प्रमाण के रूप में देखा है, लेकिन यह केवल दिन के नाटकीय फैशन को दर्शा सकता है। शेक्सपियर ने दो और जीवित नाटकों में सहयोग किया, हेनरी टप्प् और द टू नोबल किंसमैन, शायद जॉन फ्लेचर के साथ।

प्रदर्शन

यह स्पष्ट नहीं है कि शेक्सपियर ने किन कंपनियों के लिए अपने शुरुआती नाटक लिखे। टाइटस एंड्रोनिकस के 1594 संस्करण के शीर्षक पृष्ठ से पता चलता है कि नाटक में तीन अलग-अलग मंडलों द्वारा अभिनय किया गया था। ग्लोब शरद ऋतु में 15 99 में खेला गया, जिसमें जूलियस सीजर पहले नाटकों में से एक था। शेक्सपियर के सबसे महान पोस्ट -1599 नाटक ग्लोब के लिए लिखे गए थे, जिसमें हेमलेट, ओथेलो और किंग लियर शामिल थे।

1603 में लॉर्ड चैंबरलेन के पुरुषों का नाम बदलकर राजा के पुरुष कर दिया गया, उन्होंने नए राजा जेम्स के साथ एक विशेष संबंध बनाया। हालांकि प्रदर्शन के रिकॉर्ड पैची हैं, राजा के पुरुषों ने 1 नवंबर 1604 और 31 अक्टूबर 1605 के बीच शेक्सपियर के सात नाटकों को कोर्ट ऑफ वेनिस के दो प्रदर्शनों सहित प्रदर्शन किया। 1660 62 के बाद, उन्होंने गर्मियों के दौरान सर्दियों और ग्लोब के दौरान इनडोर ब्लैकगर्ल्स थिएटर में प्रदर्शन किया। इनडोर सेटिंग, भव्य रूप से मंचित मसकों के लिए जैकबियन फैशन के साथ मिलकर, शेक्सपियर को अधिक विस्तृत मंच उपकरणों को पेश करने की अनुमति दी। में Cymbeline, उदाहरण के लिए, बृहस्पति 'गड़गड़ाहट और बिजली की रोशनी में उतरता है, एक बाज पर बैठा है– वह एक वज्र फेंकता है। भूत अपने घुटनों पर गिरते हैं।'

शेक्सपियर की कंपनी में अभिनेताओं में प्रसिद्ध रिचर्ड बर्बेज, विलियम केम्पे, हेनरी कोंडेल और जॉन हेमिंगस शामिल थे। बरबेज ने शेक्सपियर के कई नाटकों के पहले प्रदर्शन में अग्रणी भूमिका निभाई, जिसमें रिचर्ड III, हैमलेट, ओथेलो और किंग लियर शामिल हैं। लोकप्रिय हास्य अभिनेता विल केम्पे ने पीटर नौकर खेला रोमियो और जूलियट और Dogberry में काफी हलचल कुछ भी नहीं है के बारे में, अन्य कलाकारों के बीच। उन्हें रॉबर्ट अर्मिन द्वारा 1600

के आसपास बदल दिया गया, जो इस तरह के रूप में भूमिका निभाई कसौटी में आप इट लाइक के रूप में और में मूर्ख किंग लियर। 1613 में, सर हेनरी वॉटन ने रिकॉर्ड किया कि हेनरी अष्टम 'धूमधाम और समारोह की कई असाधारण परिस्थितियों के साथ स्थापित किया गया था' 29 जून को, हालांकि, एक तोप ने ग्लोब के थैले में आग लगा दी और थिएटर को जमीन पर जला दिया, एक घटना जो शेक्सपियर की तारीख को दुर्लभ सटीकता के साथ दिखाती है।

पाठ के स्रोत

1623 में, जॉन हेमिंग्स और हेनरी कॉंडेल, किंग्स मेन से शेक्सपियर के दोस्तों में से दो, प्रकाशित फर्स्टे फोलियो, शेक्सपियर के नाटकों का एक एकत्र संस्करण। इसमें 36 ग्रंथ शामिल थे, जिसमें पहली बार 18 छपे थे। कई नाटक पहले से ही कर्टो संस्करणों में दिखाई दिए थे - कागज की चादरों से बनी चंचल पुस्तकें चार पत्तों को बनाने के लिए दो बार मुड़ी। कोई सबूत नहीं बताता है कि शेक्सपियर ने इन संस्करणों को मंजूरी दी थी, जिसे फर्स्ट फोलियो ने 'स्टोलन एंड सरप्रिटेट कॉपी' के रूप में वर्णित किया है। न ही शेक्सपियर ने किसी भी रूप में जीवित रहने के लिए अपने कार्यों की योजना बनाई या उम्मीद की, उन कार्यों की संभावना विस्मरण में फीकी पड़ गई होगी, लेकिन उनके दोस्तों के सहज विचार के लिए, उनकी मृत्यु के बाद, फर्स्ट फोलियो को बनाने और प्रकाशित करने के लिए।

अल्फ्रेड पोलार्ड ने पूर्व -1623 संस्करणों में से कुछ को अपने रूपांतरों, पैराफ्रास्ड या गारबेल्ड ग्रंथों के कारण ' खराब क्वार्ट्स ' के रूप में कहा, जो कि स्मृति से फिर से संगठित हो सकते हैं। 1733, 1735, जहां एक नाटक के कई संस्करण बचे हैं, प्रत्येक दूसरे से अलग है। अंतर नकल या मुद्रण त्रुटियों, अभिनेताओं या दर्शकों के सदस्यों द्वारा नोट्स से, या शेक्सपियर के स्वयं के कागजात से स्टेम हो सकते हैं। कुछ मामलों में, उदाहरण के लिए, हेमलेट, ट्रॉयलस और क्रेसिडा और ओथेलो, शेक्सपियर क्वार्टो और फोलियो संस्करणों के बीच ग्रंथों को संशोधित कर सकते थे। हालांकि, किंग लियर के मामले में, जबकि अधिकांश आधुनिक संस्करण उन्हें भ्रमित करते हैं, 1623 फोलियो संस्करण 1608 क्वार्टो से इतना अलग है कि ऑक्सफोर्ड शेक्सपियर उन दोनों

को प्रिंट करता है, यह तर्क देते हुए कि उन्हें भ्रम के बिना सामना नहीं किया जा सकता है।

कविता

1593 और 1594 में, जब प्लेग के कारण सिनेमाघर बंद हो गए, तो शेक्सपियर ने यौन विषयों, वीनस और एडोनिस और द रेप ऑफ ल्यूसर्स पर दो कथात्मक कविताएं प्रकाशित कीं। उन्होंने उन्हें हेनरी व्रियोथस्ले, अर्ल ऑफ साउथेम्प्टन को समर्पित किया। वीनस में और अदोनिस एक मासूम अदोनिस के यौन अग्रिमों को खारिज वीनस, जबकि द रेप ऑफ ल्यूक्रेस में, पुण्य पत्नी ल्यूक्रस का वासनापूर्ण टरबाइन द्वारा बलात्कार किया जाता है। ओविड के मेटामोर्फोसॉज द्वारा प्रभावित, कविताएं अपराध और नैतिक भ्रम दिखाती हैं, जो अनियंत्रित वासना के परिणामस्वरूप होती हैं। ख्र दोनों लोकप्रिय साबित हुए और अक्सर शेक्सपियर के जीवनकाल में पुनर्मुद्रित हुए। एक तीसरी कथा कविता, एक प्रेमी की शिकायत है, जिसमें एक जवान औरत एक ठोस आवेदक द्वारा अपने प्रलोभन को रोकर, के पहले संस्करण में छपा था सोंनेट्स 1609। अधिकांश विद्वान अब स्वीकार करते हैं कि शेक्सपियर ने लिखा है एक प्रेमी की शिकायत। आलोचकों का मानना है कि इसके ठीक गुणों का नेतृत्व प्रभाव द्वारा किया जाता है। फीनिक्स एंड द टर्टल, जो रॉबर्ट चेस्टर के 1601 लव के मार्टियर में छपा है, ने महान फीनिक्स की मृत्यु पर शोक व्यक्त किया और उसका प्रेमी, वफादार कछुआ कबूतर। 1599 में, सोननेट्स 138 के दो शुरुआती ड्राफ्ट शेक्सपियर के नाम से प्रकाशित, द पैसिनेट पिलग्रिम में दिखाई दिए, लेकिन उनकी अनुमति के बिना।

सोंनेट्स

1609 में प्रकाशित, शेक्सपियर के गैर-नाटकीय कामों को मुद्रित करने के लिए सोननेट्स अंतिम थे। जब 154 सोननेट में से प्रत्येक की रचना की गई थी, तो विद्वान निश्चित नहीं हैं, लेकिन सबूत बताते हैं कि शेक्सपियर ने एक निजी पाठक के लिए अपने पूरे कैरियर में सोननेट लिखा था। 1599 में द पैशनेट पिलग्रिम में दो अनधिकृत सोननेट्स दिखाई देने से पहले ही, फ्रांसिस मर्स ने शेक्सपियर के 'अपने निजी मित्रों के बीच सोननेट्स' का उल्लेख किया था।

कुछ विश्लेषकों का मानना है कि प्रकाशित संग्रह शेक्सपियर के इच्छित का अनुसरण करता है। उन्होंने दो विषमश्रृंखलाओं की योजना बनाई है– एक अंधेरे परिसर की एक विवाहित महिला ('डार्क लेडी') के बारे में बेकाबू वासना के बारे में और एक निष्पक्ष युवक ('निष्पक्ष युवा') के लिए परस्पर विरोधी प्रेम के बारे में। यह स्पष्ट नहीं है कि अगर ये आंकड़े वास्तविक व्यक्तियों का प्रतिनिधित्व करते हैं, या यदि आधिकारिक 'मैं' जो उन्हें संबोधित करता है तो वे खुद शेक्सपियर का प्रतिनिधित्व करते हैं, हालांकि वर्ड्सवर्थ का मानना था कि सोंनेट्स के साथ 'शेक्सपियर ने अपने दिल को अनलॉक किया'।

'मैं तुम्हें एक गर्मी के दिनों की तुलना दूँ?
तू कला अधिक प्यारे और अधिक शांत ...'
शेक्सपियर के गाथा 18 से –स्पदमे।

1609 संस्करण एक 'मिस्टर डब्लूएच' को समर्पित था, जिसे कविताओं के 'एकमात्र' के रूप में श्रेय दिया जाता है। यह ज्ञात नहीं है कि यह शेक्सपियर ने स्वयं या प्रकाशक थॉमस थोरपे द्वारा लिखा था, जिनके शुरुआती समर्पण पृष्ठ पर दिखाई देते हैं, न ही यह ज्ञात है कि कई सिद्धांतों के बावजूद श्री डब्ल्यूएच कौन थे, या क्या शेक्सपियर ने भी प्रकाशन को अधिकृत किया था। आलोचक प्रेम, यौन जुनून, प्रतिशोध, मृत्यु और समय की प्रकृति पर गहन ध्यान के रूप में सोननेट की प्रशंसा करते हैं।

अंदाज

शेक्सपियर के पहले नाटक दिन की पारंपरिक शैली में लिखे गए थे। उन्होंने उन्हें एक शैली में लिखा था जो हमेशा पात्रों या नाटक की जरूरतों से स्वाभाविक रूप से वसंत नहीं करता है। कविता विस्तारित पर निर्भर करती है, कभी-कभी रूपकों और कयासों का विस्तार करती है और अक्सर अभिनेताओं के लिए भाषा बोलने के बजाय बयानबाजी के लिए लिखी जाती है। टाइटस एंड्रॉनिकस में भव्य भाषण, कुछ आलोचकों के विचार में, अक्सर कार्रवाई करते हैं, उदाहरण के लिएय और द टू जेंटलमैन ऑफ वेरोना में कविता को स्टिल्टेड के रूप में वर्णित किया गया है।

विलियम ब्लेक, 1795, टेट ब्रिटेन द्वारा दया, मैकबेथ में दो उपमाओं का एक चित्रण है–

'और अफसोस की बात है, एक नग्न
नवोदित बेब की तरह, ब्लास्ट, या स्वर्ग के करूबों
पर मंडराते हुए, हवा के दृष्टिहीन कोरियर पर सहवास करते हैं।'

हालांकि, शेक्सपियर ने जल्द ही पारंपरिक शैलियों को अपने उद्देश्यों के लिए अनुकूलित करना शुरू कर दिया। उद्घाटन आत्मभाषण के रिचर्ड तृतीय की स्व-घोषणा की जड़ें वाइस मध्ययुगीन नाटक में। उसी समय, रिचर्ड की ज्वलंत आत्म-जागरूकता शेक्सपियर के परिपक्व नाटकों के एकांत के लिए तत्पर है। कोई भी एकल नाटक पारंपरिक से मुक्त शैली में बदलाव का प्रतीक नहीं है। शेक्सपियर ने अपने करियर के दौरान दोनों को संयुक्त किया, रोमियो और जूलियट के साथ शायद शैलियों के मिश्रण का सबसे अच्छा उदाहरण। रोमियो और जूलियट के समय तक, रिचर्ड द्वितीय और ए मिडसमर नाइट्स ड्रीम1590 के दशक के मध्य में, शेक्सपियर ने एक और प्राकृतिक कविता लिखना शुरू कर दिया था। उन्होंने अपने रूपकों और चित्रों को तेजी से नाटक की जरूरतों के अनुरूप बढ़ाया।

शेक्सपियर का मानक काव्य रूप कोरी कविता था, जो कि आयम्बिक पंचांग में रचा गया था। व्यवहार में, इसका मतलब यह था कि उनका वचन आमतौर पर अप्रमाणित था और इसमें एक पंक्ति में दस शब्दांश शामिल थे, जो हर दूसरे शब्दांश पर एक तनाव के साथ बोला जाता था। उनके शुरुआती नाटकों का कोरा छंद उनके बाद के गीतों से काफी अलग है। यह अक्सर सुंदर होता है, लेकिन इसके वाक्य एकरसता के जोखिम के साथ लाइनों के अंत में शुरू, रोकते और समाप्त करते हैं। एक बार जब शेक्सपियर ने पारंपरिक रिक्त कविता में महारत हासिल कर ली, तो उन्होंने अपने प्रवाह को बाधित करना और बदलना शुरू कर दिया। यह तकनीक जूलियस सीजर और हेमलेट जैसे नाटकों में कविता की नई शक्ति और लचीलापन जारी करती है। शेक्सपियर इसका इस्तेमाल करते हैं, उदाहरण के लिए, हेमलेट के दिमाग में उथल-पुथल को व्यक्त करने के लिए–

सर, मेरे दिल में एक तरह की लड़ाई थी
जो मुझे सोने नहीं देती थी। मैंने
सोचा था कि बिल्बो में उत्परिवर्ती की तुलना में बदतर है। जल्दबाजी -
और इसके लिए प्रशंसा करना - हमें बताना होगा कि

हमारा अविश्वास कभी-कभी हमें अच्छी तरह से कार्य करता है ...

हेमलेट के बाद, शेक्सपियर ने अपनी काव्य शैली को और अलग किया, विशेष रूप से स्वर्गीय त्रासदियों के अधिक भावनात्मक अंशों में। साहित्यिक आलोचक एसी ब्रैडले ने इस शैली को 'अधिक केंद्रित, तीव्र, विविध और, निर्माण में, कम नियमित, शायद ही कभी मुड़ या अण्डाकार' के रूप में वर्णित किया। अपने करियर के अंतिम चरण में, शेक्सपियर ने इन प्रभावों को प्राप्त करने के लिए कई तकनीकों को अपनाया। इनमें रन-ऑन लाइनें, अनियमित ठहराव और स्टॉप शामिल हैं और वाक्य संरचना और लंबाई में अत्यधिक भिन्नता है। मैकबेथ में उदाहरण के लिए, भाषा एक असंबंधित रूपक या उपमा से दूसरे में डार्ट्स-'आशा नशे में थी जिसमें आपने खुद को तैयार किया था?' '... दया, एक नग्न नए जन्मे बच्चे की तरह ध विस्फोट, या स्वर्ग के करूबों पर सवार, हवा के दृष्टिहीन कोरियर पर हॉर्सडोल ऑन ...'। सुनने वाले को समझदारी पूरी करने की चुनौती दी जाती है। देर से रोमांस, समय के साथ बदलाव और कथानक के आश्चर्यजनक मोड़ के साथ, एक अंतिम काव्यात्मक शैली को प्रेरित किया जिसमें लंबे और छोटे वाक्य एक-दूसरे के खिलाफ निर्धारित होते हैं, खंडों को ढेर कर दिया जाता है, विषय और वस्तु को उलट दिया जाता है और शब्दों को छोड़ दिया जाता है सहजता का प्रभाव पैदा करना।

शेक्सपियर ने काव्य प्रतिभा को थिएटर के व्यावहारिक अर्थ के साथ जोड़ा। उस समय के सभी नाटककारों की तरह, उन्होंने प्लूटार्क और होलिन्शेड जैसे स्रोतों से कहानियों का नाटक किया। उन्होंने रुचि के कई केंद्र बनाने और दर्शकों को एक कथा के कई पक्षों को दिखाने के लिए प्रत्येक भूखंड को फिर से आकार दिया। डिजाइन की यह ताकत सुनिश्चित करती है कि एक शेक्सपियर नाटक अपने मूल नाटक को नुकसान के बिना अनुवाद, काटने और व्यापक व्याख्या से बच सकता है। जैसे-जैसे शेक्सपियर की महारत बढ़ती गई, उसने अपने पात्रों को स्पष्ट और अधिक विविध प्रेरणाएं और भाषण के विशिष्ट पैटर्न दिए। उन्होंने हालांकि बाद के नाटकों में अपनी पिछली शैली के पहलुओं को संरक्षित किया। शेक्सपियर के बाद के रोमांस, वह जानबूझकर एक अधिक कृत्रिम शैली में लौट आया, जिसने थिएटर के भ्रम पर जोर दिया। ,

प्रभाव

मैकबेथ ने सशस्त्र प्रमुख के दृष्टिकोण से परामर्श किया। हेनरी फुसेली द्वारा, 1793–1794। फोल्गर शेक्सपियर लाइब्रेरी, वाशिंगटन।

शेक्सपियर के काम ने बाद के थिएटर और साहित्य पर एक स्थायी छाप छोड़ी है। विशेष रूप से, उन्होंने चरित्र चित्रण, कथानक, भाषा और शैली की नाटकीय क्षमता का विस्तार किया। रोमियो और जूलियट तक, उदाहरण के लिए, रोमांस को त्रासदी के योग्य विषय के रूप में नहीं देखा गया था। सोलिलॉक्वीज का उपयोग मुख्य रूप से पात्रों या घटनाओं के बारे में जानकारी देने के लिए किया गया था, लेकिन शेक्सपियर ने उनका उपयोग पात्रों के दिमाग का पता लगाने के लिए किया था। उनके काम ने बाद की कविता को भारी प्रभावित किया। रोमांटिक कवियों, शेक्सपियर पद्य नाटक पुनर्जीवित करने का प्रयास हालांकि छोटी सफलता के साथ। आलोचक जॉर्ज स्टेनरकॉलरिज से टेनीसन तक के सभी अंग्रेजी पद्य नाटकों का वर्णन 'शेक्सपियर के विषयों पर आकर्षक बदलाव' के रूप में किया गया है।

शेक्सपियर ने थॉमस हार्डी, विलियम फॉल्कनर और चार्ल्स डिकेंस जैसे उपन्यासकारों को प्रभावित किया। अमेरिकी उपन्यासकार हरमन मेलविले ने शेक्सपियर को बहुत कुछ दिया, मोबी-डिक में उनका कैप्टने अहाब एक क्लासिक दुखद नायक है, जो किंग लीयर से प्रेरित है। विद्वानों ने शेक्सपियर की रचनाओं से जुड़े 20, 000 टुकड़ों की पहचान की है। इनमें Giuseppe Verdi, Macbeth, Otello और Falstaff के तीन ओपेरा शामिल हैं, जिनके महत्त्वपूर्ण स्रोत के नाटकों के साथ तुलनात्मक खड़े हैं। शेक्सपियर ने कई चित्रकारों को भी प्रेरित किया है, जिनमें रोमैंटिक्स और प्री-राफेलाइट्स शामिल हैं। स्विस रोमांटिक कलाकार हेनरी फुसेली, विलियम ब्लेक के मित्र, ने मैकबेथ का जर्मन में अनुवाद भी किया। मनोविश्लेषक सिगमंड फ्रायड, विशेष रूप से, हेमलेट की है कि शेक्सपियर के मनोविज्ञान पर आकर्षित किया है, मानव प्रकृति के अपने सिद्धांतों के लिए।

शेक्सपियर के दिन में, अंग्रेजी व्याकरण, वर्तनी और उच्चारण अब की तुलना में कम मानकीकृत थे और उनकी भाषा के उपयोग ने आधुनिक अंग्रेजी को आकार देने में मदद की। सैमुअल जॉनसन ने अपने ए डिक्शनरी ऑफ द इंग्लिश लैंग्वेज में किसी भी अन्य लेखक की तुलना में अधिक बार उद्धृत

किया, जो अपने प्रकार का पहला गंभीर काम था। अभिव्यक्तियाँ जैसे 'बीटेड सांस के साथ' (मर्चेंट ऑफ वेनिस) और 'फोरगॉन निष्कर्ष' (ओथेलो) ने रोजमर्रा के अंग्रेजी भाषण में अपना रास्ता खोज लिया है।

शेक्सपियर का प्रभाव उनके मूल इंग्लैंड और अंग्रेजी भाषा से कहीं अधिक है। जर्मनी में उनका स्वागत विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण था, 18 वीं शताब्दी के शुरू में शेक्सपियर को जर्मनी में व्यापक रूप से अनुवादित और लोकप्रिय बनाया गया था और धीरे-धीरे ' जर्मन विमिम युग का क्लासिक' बन गया, किसी भी भाषा में शेक्सपियर के नाटकों के पूर्ण अनुवाद का निर्माण करने वाले पहले क्रिस्टोफ मार्टिन वेलैंड थे। अभिनेता और थिएटर निर्देशक साइमन कॉलो लिखते हैं, 'यह मास्टर, यह शीर्षक, यह प्रतिभा, इतनी गहराई से ब्रिटिश और इतनी सहज सार्वभौमिक, प्रत्येक अलग संस्कृति - जर्मन, इतालवी, रूसी - शेक्सपियर उदाहरण के लिए प्रतिक्रिया करने के लिए बाध्य थी, अधिकांश भाग के लिए, उन्होंने इसे गले लगाया और उसे, हर्षित परित्याग के साथ, भाषा और कार्रवाई में संभावनाओं के रूप में कि उन्होंने पूरे महाद्वीप में मुक्त लेखकों को मनाया। शेक्सपियर के कुछ सबसे गहरे प्रभावित होने वाले गैर-अंग्रेजी और गैर-यूरोपीय रहे हैं। वह अद्वितीय लेखक हैं। सभी के लिए कुछ है। "

गंभीर प्रतिष्ठा

शेक्सपियर अपने जीवनकाल में सम्मानित नहीं थे, लेकिन उन्हें बड़ी मात्रा में प्रशंसा मिली। 1592 में, मौलवी और लेखक फ्रांसिस मर्स ने कॉमेडी और त्रासदी दोनों में अंग्रेजी नाटककारों के एक समूह से उन्हें 'सबसे उत्कृष्ट' कहा के लेखकों Parnassus नाटकों में सेंट जॉन्स कॉलेज, कैम्ब्रिज, उसके साथ गिने चौसर, गोवर और स्पेंसर। में फर्स्ट फोलियो, बेन जोंसन शेक्सपियर को 'उम्र की आत्मा, तालियां, खुशी, हमारे मंच का आश्चर्य' कहा जाता है, हालांकि उन्होंने कहीं और टिप्पणी की थी कि 'शेक्सपियर कला चाहते थे' (कौशल की कमी थी)।

बीच बहाली 1660 में राजशाही की और 17 वीं सदी के अंत में, शास्त्रीय विचार प्रचलन में थे। नतीजतन, उस समय के आलोचकों ने जॉन फ्लेचर और बेन जोंसन के नीचे ज्यादातर शेक्सपियर का मूल्यांकन किया। थॉमस राइमर ने उदाहरण के लिए, दुखद के साथ कॉमिक को मिलाने के लिए शेक्सपियर की

निंदा की। फिर भी, कवि और आलोचक जॉन ड्राइडन ने शेक्सपियर को बहुत अधिक मूल्यांकित किया, जोंसन के बारे में कहा, 'मैं उनकी प्रशंसा करता हूं, लेकिन मैं शेक्सपियर से प्यार करता हूं'। कई दशकों तक, राइमर का विचार बोलबाला रहा, लेकिन 18 वीं शताब्दी के दौरान, आलोचकों ने शेक्सपियर को अपनी शर्तों पर जवाब देना शुरू कर दिया और प्रशंसा की कि वे उनकी स्वाभाविक प्रतिभा को क्या कहते हैं। उनके काम के विद्वानों के संस्करणों की एकश्रृंखला, विशेष रूप से सैमुअल जॉनसन की 1765 में और एडमंड मेलोन 1790 में, अपनी बढ़ती प्रतिष्ठा में जुड़ गए। वह राष्ट्रीय कवि के रूप में दृढ़ थे। 1 जीम वीं और 19वीं शताब्दी में, उनकी प्रतिष्ठा विदेशों में भी फैल गई। उन्हें चैंपियन बनाने वालों में वोल्तेयर, गोएथे, स्टेंडल और विक्टर ह्यूगो जैसे लेखक थे।

रोमांटिक युग के दौरान, शेक्सपियर को कवि और साहित्यिक दार्शनिक सैमुअल टेलर कॉलरिज द्वारा सराहा गया था और आलोचक अगस्त विल्हेम श्लेगल ने जर्मन रोमांटिकतावाद की भावना में उनके नाटकों का अनुवाद किया। 19वीं शताब्दी में, शेक्सपियर की प्रतिभा के लिए आलोचनात्मक प्रशंसा अक्सर अनुकरण पर आधारित थी। 'यह राजा शेक्सपियर, ' निबंधकार थॉमस कार्लाइल ने लिखा था, 'वह चमकता नहीं है, ताज की संप्रभुता में, हम सब पर, कुलीनों, सज्जनों के रूप में, अभी तक रैली के संकेत के सबसे मजबूत, अविनाशी'। विक्टोरिया एक भव्य पैमाने पर भव्य दिखावे के रूप में अपने नाटकों का उत्पादन किया। नाटककार और आलोचक जॉर्ज बर्नार्ड शॉ 'के रूप में शेक्सपियर की पूजा के पंथ मजाक उड़ाया bardolatry' का दावा है कि नए प्रकृतिवाद की इब्सन के नाटकों ने शेक्सपियर को अप्रचलित बना दिया था।

20 वीं शताब्दी की शुरुआत में कला में आधुनिकतावादी क्रांति, शेक्सपियर को छोड़ने से बहुत दूर, उत्सुकता से अपने काम को एवांट-गार्डे की सेवा में शामिल कर लिया। जर्मनी में Expressionists और भविष्यवादियों मास्को में अपने नाटकों का निर्माण रखा होगा। मार्क्सवादी नाटककार और निर्देशक बर्टोल्ट ब्रेख्त ने शेक्सपियर के प्रभाव में एक महाकाव्य थियेटर तैयार किया। कवि और आलोचक टीएस एलियट ने शॉ के खिलाफ तर्क दिया कि शेक्सपियर की 'प्रधानता' उन्हें वास्तव में आधुनिक बनाती थी। एलियट, जी. विल्सन नाइट और नई आलोचना के स्कूल के साथ, शेक्सपियर की कल्पना के एक करीबी पढ़ने की दिशा में एक

आंदोलन का नेतृत्व किया। 1950 के दशक में, नए आलोचनात्मक दृष्टिकोण की एक लहर ने आधुनिकता की जगह ले ली और शेक्सपियर के 'उत्तर-आधुनिक' अध्ययनों का मार्ग प्रशस्त किया। शेक्सपियर अध्ययन संरचनात्मकवाद, नारीवाद, न्यू हिस्टोरिसिज्म, अफ्रीकी-अमेरिकी अध्ययन और कतारबद्ध अध्ययन जैसे आंदोलनों के लिए खुले थे। दर्शन और धर्मशास्त्र में अग्रणी आंकड़ों के उन लोगों के लिए शेक्सपियर की उपलब्धियों की तुलना करना, हेरोल्ड ब्लूम ने लिखा, 'शेक्सपियर से बड़ा था प्लेटो और की तुलना में सेंट अगस्टीन। वह enclosesgesa क्योंकि हम उनकी मौलिक धारणाओं को देखते हैं। '

शेक्सपियर की कृतियों में 1623 के फर्स्ट फोलियो में छपे 36 नाटक शामिल हैं, जिन्हें कॉमेडी, हिस्टरी और ट्रेजेडी के रूप में उनके फोलियो वर्गीकरण के अनुसार सूचीबद्ध किया गया है। फर्स्ट फोलियो में दो नाटकों को शामिल नहीं किया गया, द टू नोबल किंसमैन और पर्किंस, प्रिंस ऑफ टायर को अब कैनन के हिस्से के रूप में स्वीकार किया जाता है, आज के विद्वानों ने माना कि शेक्सपियर ने दोनों के लेखन में प्रमुख योगदान दिया। शेक्सपियर की कोई भी कविता पहले फोलियो में शामिल नहीं हुई थी।

19 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, एडवर्ड डाउडेन ने चार देर से होने वाले कॉमेडीज को रोमांस के रूप में वर्गीकृत किया और हालांकि कई विद्वान उन्हें ट्रैजिकोमायड्स कहना पसंद करते हैं, डॉवेन के शब्द का अक्सर उपयोग किया जाता है। 1896 में, फ्रेडरिक एस बोअस शब्द गढ़ा ' समस्या नाटकों ' चार नाटकों को वर्णित करने के लिए–सभी के ठीक यही कारण है कि समाप्त होता है ठीक है, उपाय के लिए उपाय, त्रोइलुस और क्रेसिडा और हेमलेट। 'नाटक विषय और स्वभाव में एकवचन के रूप में कड़ाई से हास्य या त्रासदी नहीं कहा जा सकता है'। उन्होंने लिखा। इसलिए, हम आज के रंगमंच से एक सुविधाजनक वाक्यांश उधार ले सकते हैं और उन्हें शेक्सपियर की समस्या के रूप में एक साथ वर्गीकृत कर सकते हैं। ' शब्द, बहुत बहस और कभी-कभी अन्य नाटकों पर लागू होता है, उपयोग में रहता है, हालांकि हेमलेट निश्चित रूप से एक त्रासदी के रूप में वर्गीकृत किया गया है। ,

शेक्सपियर के लेखकीय प्रश्न

शेक्सपियर की मृत्यु के लगभग 230 साल बाद, उनके द्वारा किए गए कार्यों के लेखन के बारे में संदेह व्यक्त किया जाने लगा। प्रस्तावित वैकल्पिक

उम्मीदवारों में फ्रांसिस बेकन, क्रिस्टोफर मार्लो और एडवर्ड डी वेरे, ऑक्सफोर्ड के वे अर्ल शामिल हैं। कई 'समूह सिद्धांत' भी प्रस्तावित किए गए हैं। शिक्षाविदों का केवल एक छोटा अल्पसंख्यक मानना है कि पारंपरिक कारण पर सवाल उठाने का कारण है, लेकिन इस विषय में रुचि, विशेष रूप से शेक्सपियर के लेखक के ऑक्सफोर्डियन सिद्धांत, 21 वीं सदी में जारी है।

विलियम शेक्सपियर के धार्मिक विचार

शेक्सपियर आधिकारिक राज्य धर्म के अनुरूप था, लेकिन धर्म पर उनके निजी विचार बहस का विषय रहे हैं। शेक्सपियर की इच्छा एक प्रोटेस्टेंट सूत्र का उपयोग करेगी और वह इंग्लैंड के चर्च के एक पुष्टि सदस्य थे, जहां उनकी शादी हुई थी, उनके बच्चों को बपतिस्मा दिया गया था और जहां उन्हें दफन किया गया था। कुछ विद्वानों का दावा है कि शेक्सपियर के परिवार के सदस्य कैथोलिक थे, एक समय था जब इंग्लैंड में कैथोलिक धर्म का पालन करना कानून के खिलाफ था। शेक्सपियर की माँ, मैरी आर्डेन, निश्चित रूप से एक पवित्र कैथोलिक परिवार से आई थी। सबसे मजबूत सबूत उनके पिता जॉन शेक्सपियर द्वारा हस्ताक्षरित विश्वास का कैथोलिक बयान हो सकता है, 1757 में हेनले स्ट्रीट में अपने पूर्व घर के राफ्टरों में पाया गया। हालाँकि, दस्तावेज अब खो गया है और विद्वान इसकी प्रामाणिकता के अनुसार भिन्न हैं। 1591 में, अधिकारियों ने बताया कि जॉन शेक्सपियर चर्च से 'ऋण के लिए प्रक्रिया के डर से'। एक सामान्य कैथोलिक बहाना था। 1606 में, विलियम की बेटी सुजाना का नाम उन लोगों की सूची में दिखाई देता है, जो स्ट्रैटफोर्ड में ईस्टर की कम्यूनिकेशन में भाग लेने में असफल रहे। अन्य लेखकों का तर्क है कि शेक्सपियर की धार्मिक मान्यताओं के बारे में सबूतों की कमी है। विद्वानों ने शेक्सपियर के कैथोलिकवाद, प्रोटेस्टेंटवाद, या उनके नाटकों में विश्वास की कमी के खिलाफ सबूतों को ढूंढा, लेकिन सच साबित करना असंभव हो सकता है।

विलियम शेक्सपियर की कामुकता

शेक्सपियर की कामुकता के कुछ विवरण ज्ञात हैं। 18 साल की उम्र में, उन्होंने 26 वर्षीय ऐनी हैथवे से शादी की, जो गर्भवती थी। उनके तीन बच्चों

में से पहला, सुजाना, छह महीने बाद 26 मई 1583 को पैदा हुआ था। सदियों से, कुछ पाठकों ने माना है कि शेक्सपियर के सोननेट आत्मकथात्मक हैं, और उन्हें एक युवा व्यक्ति के लिए अपने प्यार के सबूत के रूप में इंगित करते हैं। दूसरों ने रोमांटिक प्यार के बजाय गहन दोस्ती की अभिव्यक्ति के रूप में एक ही अंश पढ़ा। 26 तथाकथित 'डार्क लेडी' सोननेट्स, जो एक विवाहित महिला को संबोधित किया जाता है, को विषमलैंगिक संपर्क के प्रमाण के रूप में लिया जाता है।

चित्रांकन

शेक्सपियर की भौतिक उपस्थिति का कोई लिखित समकालीन विवरण नहीं बचता है और कोई सबूत नहीं बताता है कि उन्होंने कभी एक चित्र कमीशन किया था, इसलिए ड्रॉशआउट उत्कीर्णन, जिसे बेन जोंसन ने एक अच्छी समानता के रूप में मंजूरी दे दी, और उनके स्ट्रैफोर्डफोर्ड स्मारक शायद उनके सर्वश्रेष्ठ साक्ष्य प्रदान करते हैं उपस्थिति। 18 वीं शताब्दी से, प्रामाणिक शेक्सपियर की इच्छा ने दावा किया कि विभिन्न जीवित चित्रों में शेक्सपियर को दर्शाया गया है। उस मांग के कारण कई नकली पोर्ट्रेट के उत्पादन के साथ-साथ अन्य लोगों के चित्रण, पुनर्मूल्यांकन और पोर्टबेल्ट्स की रीलेबिलिंग भी हुई।

मैकबेथ

द ट्रेजडी ऑफ मैकबेथ (जिसे आम तौर पर मैकबेथ कहा जाता है) एक राज-हत्या और उसके बाद की घटनाओं पर विलियम शेक्सपियर द्वारा लिखा गया एक नाटक है, या संक्षेप में कहें तो मैकबेथ शेक्सपियर की एक कृति है। यह शेक्सपियर का सबसे छोटा शोकान्त नाटक है और माना जाता है कि इसे 1603 और 1603 के बीच किसी समय लिखा गया था। शेक्सपियर के नाटक पर किसी अभिनय का सबसे पहला संदर्भ संभवत: अप्रैल 1611 का है जब साइमन फोरमैन ने ऐसे ही एक नाटक को ग्लोब थियेटर में रिकॉर्ड किया था। यह पहली बार 1623 के फोलियो में प्रकाशित हुआ था जो संभवत: एक विशिष्ट अभिनय के लिए एक संवाद बताने वाली पुस्तक (प्रॉम्प्ट बुक) थी।

इस शोकान्त नाटक के लिए शेक्सपियर के स्रोत होलिंशेड्स क्रॉनिकल्स (1587) में स्कॉटलैंड, मैकडफ और डंकन के किंग मैकबेथ के संदर्भ हैं, यह

रचना शेक्सपियर और उनके समकालीनों के लिए परिचित इंग्लैंड, स्कॉटलैंड और आयरलैंड का इतिहास है। हालांकि, शेक्सपियर द्वारा बतायी गयी मैकबेथ की कहानी का स्कॉटिश इतिहास की वास्तविक घटनाओं से कोई संबंध नहीं है, क्योंकि मैकबेथ एक प्रशंसित और सक्षम सम्राट थे।

रंगमंच के नेपथ्य की दुनिया में कुछ लोगों का मानना है कि यह नाटक अभिशप्त है और इसके शीर्षक का उल्लेख जोर देकर नहीं किया जाएगा, इसकी बजाय इसे 'द स्कॉटिश प्ले' जैसे नामों से संदर्भित किया जाता है। सदियों से इस नाटक ने मैकबेथ और लेडी मैकबेथ की भूमिकाओं में कई महानतम अभिनेताओं को आकर्षित किया है। इसे फिल्म, टेलीविजन, ओपेरा, उपन्यास, हास्य पुस्तकें और अन्य मीडिया के लिए रूपांतरित किया गया है।

नाटक की पहली भूमिका गर्जन और बिजली के बीच शुरू होती है जहां तीन चुड़ैलें यह फैसला करती हैं कि उनकी अगली मुलाकात मैकबेथ के साथ होगी। अगले दृश्य में एक घायल सार्जेंट स्कॉटलैंड के राजा डंकन को यह सूचना देता है कि उनके सेनापति –मैकबेथ (जो ग्लैमिस का थेन एक सरदार है) और बैंको–ने अभी-अभी नॉर्वे और आयरलैंड की संयुक्त सेनाओं को हरा दिया है जिनका नेतृत्व गद्दार मैकडोनवाल्ड द्वारा किया जा रहा था। राजा के रिश्तेदार मैकबेथ की बहादुरी और युद्ध कौशल की प्रशंसा की जाती है।

दृश्य बदलता है। मौसम और अपनी जीत पर चर्चा करते हुए मैकबेथ और बैंको प्रवेश करते हैं ('इस कदर बुरा और साफ दिन मैंने नहीं देखा है'). जब वे एक झाड़ीदार मैदान में टहल रहे होते हैं, तीन चुड़ैलों का प्रवेश होता है, जो उन्हें भविष्यवाणियों के साथ बधाई देने का इंतजार कर रही थीं। इसके बावजूद कि बैंको पहले उन्हें चुनौती देता है, वे मैकबेथ से मुखातिब होती हैं। पहली चुड़ैल मैकबेथ को 'थेन ऑफ ग्लेमिस' बुलाती है, दूसरी उसे 'थेन ऑफ कॉडोर' कहती है और तीसरी यह दावा करती है कि वह इसके बाद एक राजा बनेगा। मैकबेथ स्तब्ध हो कर मौन हो जाता है, इसलिए बैंको उन्हें फिर से चुनौती देता है। चुडैलें बैंको को बताती हैं कि वह कई राजाओं को जन्म देगा। (अर्थात उसकी संतानें राजा बनेंगी), हालांकि वह स्वयं राजा नहीं बनेगा। जबकि दोनों व्यक्ति इन घोषणाओं पर आश्चर्य डूबे होते हैं, चुडैलें गायब हो जाती हैं और एक अन्य थेन (सरदार), राजा का एक दूत रॉस वहां आता है और मैकबेथ

को प्रदान की गयी नयी उपाधि थेन ऑफ कॉडोर के बारे में उसे सूचित करता है। इस प्रकार पहली भविष्यवाणी पूरी हो जाती है। इसके तत्काल बाद मैकबेथ अपने मन में राजा बनने की महत्त्वाकांक्षाएं विकसित करना शुरू कर देता है।

मैकबेथ चुड़ैलों की भविष्यवाणी के बारे में अपनी पत्नी को लिखता है। डंकन इन्वरनेस में मैकबेथ के महल में रात्रि भोज के लिए आता है और रात को वहीं ठहरता है। लेडी मैकबेथ उनकी हत्या करने के लिए अपने पति को उकसाती है और राजा की हत्या की एक योजना बनाती है। हालांकि मैकबेथ इस राज-हत्या पर अपनी चिंता जाहिर करता है, लेडी मैकबेथ उसकी मर्दानगी को चुनौती देकर अंततः उसे अपनी योजना का पालन करने के लिए मना लेती है।

राजा के आने की रात को मैकबेथ डंकन को मार देता है। यह कृत्य किसी की नजर में नहीं आता है, लेकिन यह मैकबेथ को इस कदर झकझोर देता है कि लेडी मैकबेथ को प्रभार लेने के लिए आगे आना पड़ता है। अपनी योजना के अनुसार वह खूनी खंजरों को डंकन के सोये हुए सेवकों के पास रखकर हत्या का आरोप उनके ऊपर मढ़ देती है। अगली सुबह सबेरे स्कॉटलैंड के एक रईस, लेनोक्स और फाइफ का वफादार सरदार मैकडफ वहां पहुँचते हैं। एक दरबान द्वार खोलता है और मैकबेथ उन्हें राजा के कक्ष की ओर ले जाता है जहां मैकडफ को डंकन की लाश का पता चलता है। इससे पहले कि रक्षक अपनी बेगुनाही के लिए प्रतिरोध कर सकें एक बनावटी गुस्से का भाव बनाकर मैकबेथ उनकी हत्या कर देता है। मैकडफ को तुरंत मैकबेथ पर संदेह हो जाता है, लेकिन वह अपनी आशंका को सार्वजनिक रूप से प्रकट नहीं करता है। अपने जीवन के भय से डंकन के बेटों में से मैल्कम, इंग्लैंड और डोनलबैन आयरलैंड भाग जाते हैं। असली वारिस का पलायन उन्हें संदिग्ध बना देता है और मैकबेथ मृत राजा के एक संबंधी के रूप में स्कॉटलैंड का नया राजा बनकर राजगद्दी पर बैठ जाता है।

अपनी सफलता के बावजूद मैकबेथ बैंको की भविष्यवाणी को लेकर असहज बना रहता है। इसलिए मैकबेथ उन्हें एक शाही भोज के लिए आमंत्रित करता है और उसे पता चलता है कि बैंको और उनका जवान बेटा फ्लींस उसी रात को बाहर चले जाएंगे। वह दो व्यक्तियों को उन्हें मारने का काम देता है जबकि एक तीसरा कातिल भी हत्या से पहले पार्क में प्रकट होता है। जबकि हत्यारे बैंको

को मार देते हैं, फ्लींस भाग जाता है। बैंको का भूत भोज में प्रवेश करता है और मैकबेथ की जगह बैठ जाता है। केवल मैकबेथ ही इस काली छाया को देख सकता है, एक खाली कुर्सी पर भड़कते हुए मैकबेथ की दृष्टि में आतंक छा जाता है जब हताश लेडी मैकबेथ उसे वहां से चले जाने का आदेश देती है।

परेशान मैकबेथ एक बार फिर तीनों चुड़ैलों से मिलता है। वे तीन अतिरिक्त चेतावनियों और भविष्यवाणियों के साथ अपने जादू से तीन आत्माओं को प्रकट करती हैं, जो उसे 'मैकडफ से सावधान' रहने के लिए कहती हैं, लेकिन साथ ही यह भी कहती हैं कि 'किसी भी महिला से पैदा हुआ व्यक्ति मैकबेथ को कोई नुकसान नहीं पहुँचाएगा' और वह 'कभी पराजित नहीं होगा जब तक कि ऊंची डनसिनेन हिल का ग्रेट बिर्नम वुड उसके खिलाफ नहीं आ जाएगा। चूंकि मैकडफ इंग्लैंड में निर्वासन में है, मैकबेथ मानता है कि वह सुरक्षित है, इसलिए वह मैकडफ की पत्नी और उनके छोटे बच्चों सहित मैकडफ के महल में मौजूद प्रत्येक व्यक्ति को मार देता है।

लेडी मैकबेथ अपने और अपने पति द्वारा किये गए अपराधों के बोझ से विक्षिप्त सी हो जाती है। वह हर समय उन भयानक बातों को दोहराती रहती है, नींद में चलने लगती है और अपने हाथों से काल्पनिक खून के धब्बों को धोने की कोशिश करती है।

इंग्लैंड में मैकडफ को रॉस द्वारा सूचित किया जाता है कि 'आपका महल आश्चर्यचकित है, आपकी पत्नी और बच्चों की क्रूरतापूर्वक हत्या कर दी गयी है।' मैकबेथ अब एक तानाशाह के रूप में देखा जाता है और उसके कई सरदार उसे छोड़कर चले जाते हैं। मैल्कम मैकडफ और अंग्रेज सिवार्ड (द एल्डर), नॉर्थम्बरलैंड के अर्ल के साथ डनसिनेन कैसल के खिलाफ एक सेना का नेतृत्व करता है। जबकि बर्नम वुड में डेरा डालकर बैठे सैनिकों को पेड़ों की टहनियों को काटकर और उन्हें साथ लेकर अपनी संख्या को छिपाने का आदेश दिया जाता है, इस प्रकार चुड़ैलों की तीसरी भविष्यवाणी पूरी होती है। इस बीच मैकबेथ लेडी मैकबेथ की मौत की अपनी सीख पर एक आत्मचिंतन ('कल, कल और कल') करता है (कारण नहीं बताया जाता है और कुछ लोगों को लगता है कि उन्होंने आत्महत्या कर ली थी, क्योंकि उनके बारे में माल्कॉम के आखिरी संदर्भ से पता चलता है 'यह विचार, अपने और हिंसक हाथों ने उनकी जान ली थी')।

लड़ाई युवा सिवार्ड की हत्या और मैकबेथ के साथ मैकडफ के टकराव के रूप में खत्म होती है। मैकबेथ अहंकार के साथ दावा करता है कि उसे डरने की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि वह किसी भी औरत से पैदा हुए व्यक्ति से मारा नहीं जा सकता है। मैकडफ यह घोषणा करता है कि वह 'अपनी माँ की कोख से समय से पहले चीरा लगाकर पैदा हुआ था' (यानी, सीजेरियन सेक्शन से पैदा हुआ) और इस तरह 'किसी महिला से पैदा नहीं हुआ था' (यह साहित्यिक घमंड का एक उदाहरण है)। बहुत देर बाद मैकबेथ को एहसास होता है कि उसने चुड़ैलों की बातों का गलत अर्थ निकाल लिया है। मैकडफ नेपथ्य से मैकबेथ का सिर काट देता है और इस तरह अंतिम भविष्यवाणी को पूरा करता है।

हालांकि फ्लींस नहीं बल्कि माल्कॉम सिंहासन पर बैठता है, बैंको के संदर्भ में चुड़ैलों की भविष्यवाणी, 'तुम राजाओं को बनाने में मदद करोगे' के बारे में शेक्सपियर के समय के दर्शकों को सच मालूम होता है, क्योंकि स्कॉटलैंड के जेम्स VI (बाद में इंग्लैंड के जेम्स I भी) को भी बैंको का एक वंशज माना गया था।

स्रोत

मैकबेथ की तुलना शेक्सपियर के एंटनी और क्लियोपेट्रा से की गयी है। पात्रों के रूप में एंटनी और मैकबेथ दोनों, यहां तक कि एक पुरानी दुनिया की कीमत पर भी एक नई दुनिया चाहते हैं। दोनों एक सिंहासन के लिए लड़ते हैं और उस सिंहासन को प्राप्त करने में एक 'अभिशाप' का सामना करते हैं। एंटनी के लिए अभिशाप है ओक्टावियस और मैकबेथ के लिए बैंको। एक स्थान पर मैकबेथ स्वयं अपनी तुलना एंटनी से करते हुए कहता है 'बैंको के तहत मेरी प्रतिभा की कोई कीमत है, जैसा कि कहा जाता है मार्क एंटनी की सीजर से अधिक थी।' अंततः दोनों नाटकों में शक्तिशाली और चालाक महिला चरित्र शामिल हैं– क्लियोपेट्रा और लेडी मैकबेथ।

शेक्सपियर ने यह कहानी होलिंशेड्स क्रॉनिकल्स की कई कथाओं से प्राप्त की जो शेक्सपियर और उनके समकालीनों को ज्ञात ब्रिटिश द्वीपों का एक लोकप्रिय इतिहास है। क्रॉनिकल्स में डोनवाल्ड नामक एक व्यक्ति अपने राजा किंग डफ द्वारा चुड़ैलों के संपर्क में आकर मौत के घाट उतारे गए अपने परिवार

के कई लोगों की खोज करता है। अपनी पत्नी द्वारा दबाव डाले जाने के बाद वह और उसके चार सेवक राजा को उसके घर में ही मार डालते हैं। क्रॉनिकल्स में मैकबेथ को राजा डंकन की अयोग्यता की स्थिति में साम्राज्य को सहयोग देने वाले एक संघर्षरत व्यक्ति के रूप में दिखाया गया है। वह और बैंको तीन चुड़ैलों से मिलते हैं, जो शेक्सपियर के संस्करण की ही तरह बिल्कुल वही भविष्यवाणियां करती हैं। उसके बाद लेडी मैकबेथ की बातों पर मैकबेथ और बैंको एक साथ डंकन की हत्या की योजना बनाते हैं।

मैकडफ और मॉल्कम द्वारा अंतत: तख्तापलट किये जाने से पहले मैकबेथ का एक लंबा दस साल का शासन रहा है। दोनों संस्करणों के बीच समानताएं स्पष्ट हैं। हालांकि कुछ विद्वानों का मानना है कि जॉर्ज बुकानन की रेरम स्कॉटिकेरम हिस्टोरिया शेक्सपियर के संस्करण से और अधिक मेल खाती है। बुकानन के कार्य शेक्सपियर के दिनों में लैटिन भाषा में उपलब्ध थे।

कहानी के किसी भी अन्य संस्करण में मैकबेथ ने अपने स्वयं के महल में राजा की हत्या नहीं की है। विद्वानों ने शेक्सपियर के इस बदलाव को मैकबेथ के अपराध के अंधेरे पक्ष को आतिथ्य के सबसे बुरे अपराध के रूप में जोड़े जाते हुए देखा है। उस समय आम तौर पर मौजूद कहानी के संस्करणों में डंकन महल में नहीं बल्कि इन्वरनेस में घात लगाकर मारा जाता है। शेक्सपियर ने डोनवाल्ड और किंग डफ की कहानी को इस प्रकार गूंथ कर मिला दिया जो कहानी के लिए एक महत्त्वपूर्ण बदलाव साबित हुआ।

शेक्सपियर ने एक और खुलासा करने वाला बदलाव किया है। क्रॉनिकल्स में बैंको मैकबेथ द्वारा किंग डंकन की हत्या में उसका एक साथी है। वह इस तथ्य को सुनिश्चित करने में भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि मॉल्कम नहीं बल्कि मैकबेथ बाद में हुए अप्रत्याशित तख्तापलट में सिंहासन को हासिल करता है। शेक्सपियर के समय में बैंको को स्टुअर्ट किंग जेम्स का प्रत्यक्ष पूर्वज माना जाता था। ऐतिहासिक स्रोतों में चित्रित बैंको शेक्सपियर द्वारा रचित बैंको से काफी अलग है। आलोचकों ने इस बदलाव के लिए कई कारण बताये हैं। सबसे पहले राजा के पूर्वज को एक खूनी के रूप में चित्रित करना जोखिम भरा हो सकता था। बैंको के बारे में लिखने वाले उस समय के अन्य लेखकों जैसे कि जीन डे शेलांद्रे ने भी संभवत: इसी कारण से अेपनी रचना स्टुअर्टाइड में बैंको को एक खूनी नहीं बल्कि एक कुलीन व्यक्ति के रूप में चित्रित कर

इतिहास को बदला है। दूसरा यह कि शेक्सपियर ने सिर्फ इसलिए बैंको के पात्र में बदलाव किया हो सकता है कि हत्या के लिए अन्य साथी के रूप में किसी नाटकीय पात्र की कोई जरूरत नहीं थी, हालांकि मैकबेथ को एक नाटकीय बदलाव दिए जाने की जरूरत थी - एक ऐसी भूमिका जिसके बारे में कई विद्वानों का तर्क है कि बैंको द्वारा पूरी की गयी है।

तिथि और पाठ्य सामग्री

मैकबेथ को बाद के संशोधनों के महत्त्वपूर्ण प्रमाण के कारण निश्चित रूप से दिनांकित नहीं किया जा सकता है। कई विद्वानों का अनुमान है कि इसकी रचना की संभावित तिथि 1603 और 1606 के बीच है। जिस तरह यह नाटक 1603 में किंग जेम्स के पूर्वजों और स्टुअर्ट के सिंहासन पर बैठने का जश्न मानता हुआ प्रतीत होता है (जेम्स स्वयं मानते थे कि उन्हें बैंकों का उत्तराधिकार प्राप्त हुआ था), वे यह तर्क देते हैं कि इस नाटक की रचना 1603 से पहले होने की संभावना नहीं है और यह सुझाव देते हैं कि आठ राजाओं की परेड - जिसे चुड़ैलें मैकबेथ को भूमिका IV के एक दृश्य में दिखाती है -- यह किंग जेम्स को संपूरित है। अन्य संपादकों ने एक अधिक विशिष्ट तिथि 1605-6 का अनुमान लगाया है, जिसका प्रमुख कारण बारूद की कथावस्तु का संभावित संकेत और इसके फलस्वरूप बनी निशानियां है। विशेष रूप से दरबान की बातों में (भूमिका II, दृश्य III, लाइन 1-21) 1606 की बसंत में जेसुइट हेनरी गार्नेट की मुसीबतों के संकेत शामिल हो सकते हैं, 'गोल-मोल कर कही गयी बात' (लाइन 8) का संदर्भ गार्नेट की 'गोल-मोल बातों' मानसिक अवरोध का सिद्धांत और गार्नेट के उपनामों में से एक 'फार्मर (किसान)' (4) के बचाव में हो सकता है। हालांकि 'फार्मर (किसान)' एक आम शब्द है और 'गोल-मोल बात' भी क्वीन एलिजाबेथ के मुख्य सलाहकार लॉर्ड बर्घले के द्वारा 1583 की एक पुस्तक और स्पेनिश प्रधान पादरी मार्टिन एज्पिलकुएटा द्वारा रचित 1584 की डॉक्टराइन ऑफ एक्विवोकेशन का विषय था जिसे 1590 के दशक में पूरे यूरोप और इंग्लैंड में प्रचारित किया गया था।

विद्वान 1605 की गर्मी में ऑक्सफोर्ड में किंग जेम्स द्वारा एक मनोरंजक दृश्य को भी उद्धृत करते हैं, जिसमें जादूगरनी बहनों की तरह तीन 'चुडैलों' को दिखाया गया था, करमोडे का अनुमान है कि शेक्सपियर ने इसके बारे में सुना

होगा और जादूगरनी बहनों के साथ प्रसंगवश इसका उल्लेख किया होगा। हालांकि न्यू कैम्ब्रिज संस्करण में ए.आर. ब्राउनमुलर 1605-6 तर्क को अनिर्णायक पाते हैं और सिर्फ 1603 की एक सबसे प्रारंभिक तिथि की बात करते हैं। इस नाटक को 1607 के बाद लिखा गया नहीं माना जाता है, क्योंकि जैसा कि करमोड उल्लेख करते हैं '1607 में इस नाटक के काफी स्पष्ट संकेत मौजूद हैं।' इस नाटक के प्रदर्शन का सबसे पहला संदर्भ अप्रैल 1611 का है जब साइमन फोरमैन ने इसे ग्लोब थियेटर में देखकर दर्ज किया था।

मैकबेथ को सबसे पहले 1623 के फर्स्ट फोलियो में मुद्रित किया गया था और यह फोलियो इस पाठ्य सामग्री का एकमात्र स्रोत है। जो पाठ्य सामग्री अस्तित्त्व में है उसे बाद के लोगों द्वारा सीधे तौर पर बदल दिया गया था। सबसे उल्लेखनीय थॉमस मिडलटन के नाटक द विच (1615) में दो गानों को शामिल किया जाना है, अनुमान लगाया जाता है कि मिडलटन ने चुड़ैलों और हेकेटी को शामिल कर एक अतिरिक्त दृश्य जोड़ा था, क्योंकि ये दृश्य दर्शकों के बीच काफी लोकप्रिय हुए थे। इन संशोधनों को जिन्हें 1869 के क्लेयरडन के संस्करण के बाद से भूमिका III, दृश्य v की संपूर्ण हिस्से और भूमिका IV, दृश्य I के एक हिस्से को शामिल किया गया माना जाता है, इन्हें अक्सर आधुनिक पाठ्य सामग्रियों में दर्शाया जाता है। इस आधार पर कई विद्वान देवी हेकेटी के साथ सभी तीन तमाशों को अप्रामाणिक मानकर अस्वीकार करते हैं। यहाँ तक की हेकेटी की सामग्री के साथ भी नाटक सुस्पष्ट रूप से छोटा है और इसलिए फोलियो का पाठ एक संवाद पुस्तक से लिया गया है, जिसमें अभिनय के लिए काफी काट-छांट की गयी है या यह पाठ स्वयं एक अनुकूलित कर काटा गया अंश है।

विषय-वस्तु और रूपांकन

मैकबेथ शेक्सपियर के शोकान्त नाटकों में कुछ आलोचनात्मक रूप से एक विसंगति है। संक्षेप में—यह ओथेलो और किंग लीयर से एक हजार से अधिक लाइन कम और हेमलेट से केवल आधे से थोड़ा अधिक लंबा है। यह संक्षिप्तता कई आलोचकों को यह बताती है कि प्राप्त संस्करण एक भारी काट-छांट वाले संस्करण पर आधारित है, जो संभवत: किसी विशेष प्रदर्शन के लिए एक संवाद-पुस्तक के रूप में होगा। इस संक्षिप्तता को अन्य असामान्य

विशेषताओं से भी जोड़ा गया है– पहली भूमिका का पहला अंश, जो ऐसा लगता है कि 'एक्शन के लिए उजागर किया गया' है, मैकबेथ के अलावा अन्य पात्रों की तुलनात्मक सरलता, शेक्सपियर के अन्य दुखांत नायकों की तुलना में स्वयं मैकबेथ की विचित्रता।

पात्र के एक शोकान्त रूप में

कम से कम अलेक्जेंडर पोप और शैमुअल जॉनसन के दिनों से इस नाटक का विश्लेषण मैकबेथ की महत्त्वाकांक्षा के सवाल पर केंद्रित रहा है, जिसे आम तौर पर कहानी पर इस कदर हावी देखा जाता है कि यह पात्र को पारिभाषित कर देता है। जॉनसन ने कहा था कि हालांकि मैकबेथ को उसकी सैन्य बहादुरी के लिए सम्मानित किया जाता है, लेकिन पूरी तरह से धिक्कारा जाता है। यह विचार आलोचनात्मक साहित्य में बार-बार आता है और कैरोलीन स्पर्जन के अनुसार यह स्वयं शेक्सपियर द्वारा समर्थित है, जो जाहिर तौर पर अपने नायक को नीचा दिखाना चाहते थे जिसके लिए उन्होंने उसके लिए अनुपयुक्त पहनावे में रखते हैं और उनके द्वारा प्रयोग किये गए कई निमिज्म में मैकबेथ को हास्यास्पद दिखाना चाहते हैं, उसके कपड़े या तो उसके लिए बहुत बड़े या बहुत छोटे हैं - जिस तरह राजा के रूप में उसकी नयी और सही भूमिका के लिए उसकी महत्त्वाकांक्षा बहुत बड़ी है और उसका चरित्र बहुत छोटा है। जब चुड़ैलों की भविष्यवाणी के अनुसार कॉडोर के थेन की अपनी नयी उपाधि के बाद वह अपने आप को 'उधार के कपड़े पहने' महसूस करता है, जिसकी पुष्टि रॉस द्वारा की गयी है, बैंको कहता है– 'संयोगवश उसे मिलने वाले नए सम्मान हमारे अजीब वस्त्रों की ही तरह, उसके नाप के नहीं हैं, इसलिए उन्हें कुछ चीजों की सहायता से पहना जाता है' और अंत में, जब तानाशाह डनसिनेन में पलट कर मुकाबला करने को बाध्य होता है, कैथनेस उसे एक बड़े वस्त्र को एक बहुत ही छोटी बेल्ट से बांधने की व्यर्थ कोशिश करने वाले आदमी के समान देखता है– 'वह अपने विकृत कारण को नियंत्रित (बकल) नहीं कर सकता है शासन समान बेल्ट के द्वारा' जबकि एंगस इसी तरह के एक उदाहरण में इस प्रकार का सार प्रस्तुत करते हैं, जो मैकबेथ के सतारूढ़ होने के बाद हर होई सोचता है– क्या अब उसे अपनी उपाधि अपने लिए काफी बड़ी दिखाई दे रही है, ठीक उसी तरह जैसे एक विशालकाय व्यक्ति का लबादे एक ठिगने चोर के ऊपर'।

रिचर्ड III की तरह लेकिन उस चरित्र के विकृत रूप से आकर्षक आधिक्य के बिना मैकबेथ अपने अपरिहार्य पतन तक खून से लथपथ रहता है। जैसा कि केनेथ मुइर लिखते हैं, 'मैकबेथ की प्रवृत्ति हत्या करने की नहीं होती है, उसकी सिर्फ एक अत्यधिक महत्त्वाकांक्षा है, जो अपने आप में ऐसा लगता है कि हत्या को राजगद्दी पाने में विफलता की तुलना में एक छोटा पाप है। कुछ आलोचक जैसे कि ई.ई. स्टॉल इस चरित्र चित्रण को सेनेकन या मध्ययुगीन परंपरा के एक अवशेष के रूप में वर्णन करते हैं। शेक्सपियर के दर्शक इस नजरिये से खलनायकों से पूरी तरह दुष्ट होने की अपेक्षा रखते हैं और सेनेकन शैली एक खलनायक जैसे नायक से बचने से काफी दूर है, लेकिन सबने इसकी मांग की थी।

अभी तक अन्य आलोचकों के लिए मैकबेथ की प्रेरणा के सवाल को हल करना इतना आसान नहीं रहा है। उदाहरण के लिए रॉबर्ट ब्रिजेज ने एक विरोधाभास को महसूस किया था–डंकन की हत्या से पहले इस तरह के यथार्थपूर्ण आतंक को व्यक्त करने में सक्षम एक पात्र संभवतः इस तरह के अपराध को अंजाम देने में असमर्थ होगा। कई आलोचकों के लिए पहली भूमिका में मैकबेथ की प्रेरणाएं अस्पष्ट और अपर्याप्त दिखाई देती हैं। जॉन डोवर विल्सन की परिकल्पना यह थी कि शेक्सपियर के मूल पाठ में एक या अनेक अतिरिक्त दृश्य थे जहां पति और पत्नी ने अपनी योजनाओं पर बहस किया था। इस व्याख्या पूरी तरह से साध्य नहीं है, हालांकि मैकबेथ की महत्त्वाकांक्षा की भूमिका की प्रेरक भूमिका को सार्वभौमिक मान्यता प्राप्त है। उसकी महत्त्वाकांक्षा से प्रेरित दुष्टता के कार्य उसे एक बढ़ती दुष्टता के चक्र में उलझाते हुए प्रतीत होते हैं, जैसा कि मैकबेथ स्वयं अपनी पहचान करता है– 'मैं खून में हूँ। इतनी दूर बढ़ गया कि मुझे और अधिक आगे नहीं बढ़ना चाहिए। वापस लौटना उतना ही कठिन था जितना कि आगे बढ़ना।'

नैतिक व्यवस्था के एक दुखांत नाटक के रूप में

मैकबेथ की महत्त्वाकांक्षा के विनाशकारी परिणाम उसी तक सीमित नहीं हैं। नाटक में लगभग हत्या के समय से ही स्कॉटलैंड को स्वाभाविक व्यवस्था के विपरीत घटनाओं से विचलित देश के रूप में दर्शाया गया है। शेक्सपियर का इरादा जीवन की एक महानशृंखला का संदर्भ देने का रहा हो

सकता है हालांकि नाटक की अव्यवस्था की छवियां ज्यादातर उतने विशिष्ट नहीं हैं कि ये विस्तृत बौद्धिक पाठ्य सामग्री का समर्थन कर सकें. उनका इरादा राजाओं के दिव्य अधिकारों में जेम्स के विश्वास का सविस्तार प्रशंसा करने का भी रहा होगा, हालांकि यह परिकल्पना जो हेनरी. एन पॉल द्वारा सबसे अधिक लंबाई में उल्लिखित है, सार्वभौमिक रूप से स्वीकार्य नहीं है। हालांकि जिस तरह जूलियस सीजर में राजनीतिक क्षेत्र में अव्यवस्थाएं प्रतिध्वनित होती हैं और यहाँ तक कि भौतिक जगत की घटनाओं द्वारा परिलक्षित होती है। स्वाभाविक व्यवस्था के व्युत्क्रम का सबसे अधिक बार किया गया चित्रण है नींद. मैकबेथ की यह घोषणा कि उसने 'नींद को मार दिया' है, जिसका लाक्षणिक प्रतिबिंब लेडी मैकबेथ द्वारा नींद में चलने में नजर आता है।

मध्ययुगीन दुखांत नाटक के लिए मैकबेथ के आम तौर पर स्वीकार्य आभार को अक्सर नाटक में नैतिक व्यवस्था के वर्णन में महत्त्वपूर्ण रूप में देखा जाता है। ग्लेन विकहम इस नाटक को दरबान के माध्यम से नरक के खौफनाक कथानक पर एक रहस्मय नाटक से जोड़ते हैं। हावर्ड फेल्परीन का तर्क है कि नाटक की अक्सर स्वीकार्य स्थिति की तुलना में 'रूढ़िवादी ईसाई दुखांत नाटक' की ओर एक कहीं अधिक जटिल प्रवृत्ति है, वे नाटक और मध्ययुगीन पूजन संबंधी ड्रामा के भीतर तानाशाह भूमिकाओं के बीच एक संबंध देखते हैं।

उभयलिंगी विषय-वस्तु को अक्सर विकार के विषय के एक विशेष पहलू के रूप में देखा जाता है। मानक लिंगी भूमिकाओं के उलट भूमिकाएं सबसे अधिक मशहूर रूप से चुड़ैलों और लेडी मैकबेथ साथ जुडी हुई हैं, जिस तरह वह पहली भूमिका में दिखाई देती है। ऐसे व्युत्क्रमों के साथ शेक्सपियर की सहानुभूति चाहे जिस श्रेणी की रही हो, नाटक मानक लिंगी मूल्यों की ओर पूरी तरह से वापसी के साथ समाप्त होता है। कुछ नारीवादी मनोविश्लेषणात्मक आलोचक जैसे की जेनेट एडेलमन ने लिंगी भूमिकाओं के साथ नाटक के आचरण को विपरीत स्वाभाविक व्यवस्था की इसकी बड़ी विषय-वस्तु से जोड़ा है। इस आलोक में मैकबेथ को उसके द्वारा नैतिक व्यवस्था के अतिक्रमण के लिए प्रकृति के चक्र से हटाकर दण्डित किया जाता है (जिसे महिला के रूप में दर्शाया गया है), प्रकृति स्वयं (जैसा की बिर्नम वुड की गतिविधि में सन्निहित है) नैतिक व्यवस्था की बहाली का हिस्सा है।

एक काव्यात्मक दुखांत नाटक के रूप में

बीसवीं सदी के शुरू में आलोचकों ने स्थिति के खिलाफ प्रतिक्रिया व्यक्त की थी जिसे उन्होंने नाटक की आलोचना में चरित्र के अध्ययन पर एक अत्यधिक निर्भरता के रूप में देखा था। हालांकि यह निर्भरता सबसे अधिक करीबी तौर पर एंड्रयू सेसिल ब्रैडली से संबद्ध है, जो कम से कम मैरी काउडन क्लार्क के समय तक स्पष्ट हो जाती है जिन्होंने शेक्सपियर की प्रमुख महिला भूमिकाओं के नाटक-पूर्व जीवन के संदर्भ में सटीक, अगर काल्पनिक विवरण प्रस्तुत किया। उदाहरण के लिए उन्होंने सुझाव दिया कि बालिका लेडी मैकबेथ पहली भूमिका में एक मूर्खतापूर्ण सैन्य कार्रवाई के दौरान मृत्यु को संदर्भित करती है।

जादू-टोना और दुष्टता

नाटक में तीन चुड़ैलें अंधेरा, अराजकता और संघर्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं जबकि उनकी भूमिका एजेंटों और गवाहों के रूप में है। उनकी उपस्थिति राजद्रोह और आसन्न कयामत सा संदेश देती है। शेक्सपियर के समय के दौरान चुड़ैलों को विद्रोहियों से भी बदतर रूप में देखा जाता था, 'जो सबसे अधिक कुख्यात विश्वासघाती और राजद्रोही हो सकती हैं।' वे न केवल राजनीतिक गद्दार थीं बल्कि आध्यात्मिक रूप में भी धोखेबाज थीं। उनकी ओर से उत्पन्न होने वाली ज्यादातर भ्रम की स्थिति वास्तविकता और अलौकिक के बीच नाटक की सीमाओं के दोनों ओर पैर फैलाकर बैठने की उनकी क्षमता से आती है। वे दोनों दुनिया में इतनी गहराई से सुरक्षित हैं कि यह स्पष्ट नहीं होता है कि वे भाग्य को नियंत्रित करती हैं या क्या वे सिर्फ इसके एजेंट हैं। वे वास्तविक दुनिया के नियमों के अधीन नहीं होने के कारण तर्क की अवहेलना करती हैं। पहली भूमिका में चुड़ैलों की पंक्तियां–'सचाई बेईमानी है और बेईमानी उचित है– कोहरे और दूषित हवा के आसपास से होकर जाओ' इसे अक्सर एक भ्रम की भावना के रूप में व्यवस्थित करते हुए नाटक के बाकी हिस्से के लिए एक निर्धारित टोन कहा जाता है। दरअसल नाटक ऐसी परिस्थितियों से भरपूर है जहां दुष्टता को अच्छाई के रूप में चित्रित किया गया है जबकि अच्छाई को दुष्टता का रूप दिया गया है। पंक्ति 'दोहरा, दोहरा परिश्रम और मुसीबत, ' (इसे अक्सर इस कदर उत्तेजक बना दिया जाता है कि यह अपना अर्थ खो देता है) चुड़ैलों

की मंशा का स्पष्ट रूप से संदेश देती है– वे अपने आसपास के मनुष्यों के लिए केवल मुसीबत चाहती हैं।

जबकि चुड़ैलें मैकबेथ को प्रत्यक्ष रूप से राजा डंकन को मारने के लिए नहीं कहती हैं, वे एक प्रलोभन के सूक्ष्म रूप का प्रयोग करती हैं जब वे मैकबेथ को यह कहती हैं कि उसकी किस्मत में राजा बनना लिखा है। उसके मन में इस विचार को स्थापित कर वे उसके अपने विनाश के मार्ग के पर प्रभावी रूप से निर्देशित करती हैं। यह एक ऐसे प्रलोभन की पद्धति का अनुसरण करता है, जिसे कई लोग शेक्सपियर के समय में प्रयोग किए गए शैतान के रूप में मानते हैं। उन्होंने तर्क दिया कि सबसे पहले किसी व्यक्ति के मन में एक विचार भर दिया जाता है, फिर वह व्यक्ति या तो इस विचार में लिप्त हो जाता है या इसे अस्वीकार कर देता है। मैकबेथ इसमें लिप्त हो जाता है जबकि बैंको इसे खारिज कर देता है।

रूपक के रूप में

जे.ए. ब्रायंट जूनियर के अनुसार मैकबेथ को एक रूपक भी समझा जा सकता है–विशेषकर बाइबिल के पुराने और नए विधान के अंशों के लिए रूपक के रूप में।

ब्रायंट राजा डंकन की हत्या और ईसा मसीह की हत्या के बीच कुछ गहरी समानताओं की खोज में चले जाते हैं जबकि लेकिन एक आकस्मिक प्रेक्षक के लिए नाटक में बाइबिल संबंधी अन्य रूपकों का उल्लेख करना कहीं आसान होता है। मैकबेथ का पतन काफी हद तक जेनेसिस 3 में आदमी के पतन के समान है और सलाह के लिए चुड़ैलों के पास उसकी वापसी 1 शैमुअल 28 में राजा शाऊल की कहानी के प्रत्यक्ष रूप से समानांतर है। शेक्सपियर के दर्शकों ने इन्हें तुरंत उठा लिया होगा और नाटक एवं बाइबिल के बीच आगे के समानांतरों की जांच इस लेखन के लिए शेक्सपियर के इरादों में अतिरिक्त अंतर्दृष्टि प्रस्तुत करता है।

अंधविश्वास और 'स्कॉटिश नाटक'

हालांकि बहुत से लोग आज सीधे तौर पर संयोग के एक निर्माण के आसपास किसी दुर्भाग्य की बात करेंगे, अभिनेता और रंगमंच के अन्य लोग

अक्सर रंगमंच के भीतर मैकबेथ के नाम का उल्लेख करना एक बदकिस्मती मानते हैं और कभी-कभी इसे अप्रत्यक्ष रूप से संदर्भित करते हैं। उदाहरण के लिए 'द स्कॉटिश प्ले'। या 'मैकबी'। या जब पात्र का संदर्भ देना हो ना कि नाटक का, 'मिस्टर एंड मिसेज एम' या 'द स्कॉटिश किंग' का प्रयोग.

ऐसा इसलिए है, क्योंकि कहा जाता है कि शेक्सपियर ने अपनी रचना में असली चुड़ैलों की उक्तियों का इस्तेमाल किया था जिसने कथित रूप से चुड़ैलों को नाराज कर दिया था और इसी कारण से यह नाटक अभिशप्त हो गया था। इस प्रकार किसी थिएटर के अंदर नाटक के नाम का प्रयोग निर्माण की विफलता की स्थिति तक विनाशकारी माना जाता है और संभवत: अभिनय वर्ग के सदस्यों को शारीरिक चोट लगाने या मृत्यु का कारण बन सकता है। मैकबेथ के संचालन के दौरान (या इस नाम का उच्चारण करने वाले अभिनेताओं) दुर्घटनाओं, दुर्भाग्यों और यहाँ तक कि मौत की घटनाओं की कहानियां मौजूद हैं।

स्वयं को इस अंधविश्वास से जोड़ने वाली एक विशेष घटना थी एस्टर प्लेस का दंगा। क्योंकि इन दंगों का कारण मैकबेथ के दो अभिनय प्रदर्शनों के एक संघर्ष पर आधारित था, इसे अक्सर अभिशाप के कारण हुआ माना जाता है।

अभिनेता के आधार पर इस अभिशाप को मिटाने के लिए कई तरीके मौजूद हैं। माइकल यॉर्क से संबंधित एक तरीका है, जिस व्यक्ति ने इस नाम का उच्चारण किया है उसके साथ उस भवन को तुरंत छोड़ देना जहां वह स्टेज बना है, तीन बार उसके चारों ओर घूमना, उसके बाएं कंधे पर थूकना, एक अश्लीलता की बात कहना और उसके बाद भवन में वापस आमंत्रित किये जाने के लिए प्रतीक्षा करना है। एक संबंधित अभ्यास जितनी तेजी से संभव हो उस स्थान पर तीन बार चारों ओर घूमना, जिसके साथ कभी-कभी उनके कंधों पर थूकना और एक अश्लील बात कहना है। एक अन्य लोकप्रिय 'रिवाज' है कमरे को छोड़ देना, तीन बार दस्तक देना, आमंत्रित किया जाना और उसके बाद हेमलेट की एक पंक्ति बोलना। इसके अलावा एक और रिवाज है द मर्चेंट ऑफ वेनिस की पंक्तियों को सुनाना, जिसे एक सौभाग्यशाली नाटक माना जाता है।

शेक्सपियर के दिन

फोरमैन के दस्तावेज में वर्णित के अलावा शेक्सपियर के युग के अभिनय प्रदर्शनों का कोई भी उदाहरण निश्चित रूप से ज्ञात नहीं है। इसके स्कॉटिश

विषय की वजह से इस नाटक को कभी-कभी किंग जेम्स के लिए लिखा गया और संभवत: उनके लिए शुरू किया गया कहा जाता है, हालांकि कोई भी बाहरी प्रमाण इस परिकल्पना का समर्थन नहीं करता है। नाटक की संक्षिप्तता और इसके मंचन के कुछ पहलुओं (उदाहरण के लिए, रात के समय का अधिकांश हिस्सा और असामान्य रूप से बड़ी संख्या में नेपथ्य की आवाजें) के बारे में बताया जाता है कि वर्तमान पाठ को संभवत: उस ब्लैकफ्रायर्स थियेटर में इनडोर निर्माण के लिए संशोधित किया गया था जिसे राजा के लोगों ने 1608 में प्राप्त किया था।

रेस्टोरेशन और 18वीं सदी

रेस्टोरेशन में सर विलियम डेवनेंट ने एक मैकबेथ के एक शानदार 'ओपेरा संबंधी' रूपांतरण का निर्माण किया था जिसमें 'सभी गानों और नृत्यों' और 'चुड़ैलों के लिए उड़ने' जैसे स्पेशल इफेक्ट्स का प्रयोग किया गया था (जॉन डॉनेस, रोसियस एन्ग्लिकेनस, 1708)। डेवनैंट के संशोधन ने लेडी मैकडफ की भूमिका को भी बढ़ाया था जिसने उसे लेडी मैकबेथ के लिए विषयगत रुकावट बना दिया था। 19 अप्रैल 1667 को अपनी डायरी में एक प्रविष्टि में सैमुअल पेपीज ने डेवनैंट के मैकबेथ को 'रंगमंच के लिए सर्वश्रेष्ठ नाटकों में से एक और नृत्य एवं संगीत की विविधता से भरपूर, जिसे मैंने कभी देखा है' कहा. डेवनैंट के संस्करण ने अगली सदी के मध्य तक मंच पर अपना वर्चस्व बनाए रखा। 18वीं सदी की शुरुआत के प्रसिद्ध मैकबैथ जैसे कि जेम्स क्वीन ने इस संस्करण का प्रयोग किया था।

चार्ल्स मैकलिन जिन्हें अन्यथा एक महान मैकबेथ के रूप में याद नहीं किया जाता है, उन्हें 1773 में कोवेंट गार्डन में अभिनय के लिए याद किया जाता है, जो गैरिक और विलियम स्मिथ के साथ मैकलिन की प्रतिद्वंद्विता से संबंधित है। मैकलिन ने स्कॉटिश पोशाक में अभिनय किया था जो मैकबेथ को अंग्रेजी ब्रिगेडियर के रूप में वेशभूषा पहनाने के पहले के प्रचलन के विपरीत है, उन्होंने गैरिक के मौत के संवादों को भी हटा दिया था और आगे लेडी मैकडफ के भूमिका को काट दिया था। इस अभिनय को आम तौर पर सम्मानजनक समीक्षाएं प्राप्त हुईं, हालांकि जॉर्ज स्टीवेंस ने भूमिका के लिए मैकलिन (जो अपने अस्सी के दशक में थे) की अनुपयुक्तता पर टिप्पणी की थी।

गैरिक के बाद 18वीं सदी का सबसे अधिक सराहनीय मैकबेथ थे जॉन फिलिप केम्बले, उन्होंने इस भूमिका को सबसे अधिक लोकप्रिय रूप से अपनी बहन, सारा सिडंस के साथ निभाया जिनकी लेडी मैकबेथ को सर्वोत्कृष्ट माना जाता है। केम्बले ने यथार्थवादी पोशाक और शेक्सपियर की भाषा जिसने मैकलिन के निर्माण को चिह्नित किया था, उसकी ओर रुझान को निरंतर जारी रखा, वाल्टर स्कॉट बताते हैं कि उन्होंने नाटक की स्कॉटिश वेशभूषा के साथ निरंतर प्रयोग किया था। केम्बले की व्याख्या पर प्रतिक्रिया विभाजित थी, हालांकि सिडंस की सर्वसम्मति से प्रशंसा की गयी थी। पांचवें अंश में 'नींद में चलने' के दृश्य में उनकी भूमिका का विशेष रूप से उल्लेख किया गया था, लेह हंट ने इसे 'उत्कृष्ट' कहा। केम्बले-सिडंस की भूमिकाएं पहली व्यापक रूप से प्रभावशाली प्रस्तुतियां थीं जिसमें लेडी मैकबेथ की खलनायकी को मैकबेथ की तुलना में अधिक गहरी और शक्तिशाली बनाकर प्रस्तुत किया गया था। साथ ही ऐसा पहली बार हुआ था की बैंको का भूत मंच पर प्रकट नहीं हुआ।

केम्बले का मैकबेथ कुछ आलोचकों को शेक्सपियर के पाठ के लिए बहुत अधिक सभ्य और विनम्र लगा। लंदन के अग्रणी अभिनेता के रूप में उनके उत्तराधिकारी, एडमंड कीन की अत्यधिक भावुकता के लिए, विशेष रूप से पांचवीं भूमिका में अक्सर आलोचना की जाती है। कीन के मैकबेथ की सार्वभौमिक रूप से प्रशंसा नहीं की गयी थी, उदाहरण के लिए, विलियम हैजलिट ने यह शिकायत की थी कि कीन का मिकबेथ उनके रिचर्ड III के काफी समान था। जैसा कि उन्होंने अन्य भूमिकाओं में किया था, कीन ने ने उसके हट्टे-कटते होने का फायदा मैकबेथ के मानसिक पतन के मुख्य घटक के रूप में प्रयोग कर उठाया था। उन्होंने कैम्बले द्वारा मैकबेथ के एक सभ्य रूप पर जोर दिए जाने के विपरीत इसकी जगह उसे एक क्रूर राजनेता के रूप में प्रस्तुत किया जिसका अपराध और भय के भार से पतन हो जाता है। हालांकि कीन ने दृश्य और वेशभूषा में अपव्यय की ओर बढ़ती प्रवृत्ति को रोकने के लिए कुछ नहीं किया।

उन्नीसवीं सदी

अगले प्रभावशाली लंदन के अभिनेता, विलियम चार्ल्स मैकरेडी के मैकबेथ ने कम से कम कीन द्वारा दी गयी मिश्रित प्रतिक्रियाओं को उकसाया।

मैकरेडी ने 1820 में कोवेंट गार्डन में अपनी भूमिका की शुरुआत की थी। जैसा कि हैजलिट ने उल्लेख किया था, इस पात्र के बारे में मैकरेडी की पाठ्य सामग्री विशुद्ध रूप से मनोवैज्ञानिक थी, चुड़ैलों ने अपनी-अपनी समस्त अलौकिक शक्तियां खो दी थीं और मैकबेथ के पतन की शुरुआत शुद्ध रूप से मैकबेथ के चरित्र में हो रहे संघर्ष से हुई थी। मैकरेडी की सबसे प्रसिद्ध लेडी मैकबेथ थी हेलेना फॉसिट जिन्होंने इस भूमिका में अपनी शुरुआत उस समय निराशाजनक ढंग से की थी जब वह अपने 20वें दशक में थी, लेकिन बाद में उन्होंने एक ऐसी व्याख्या के लिए प्रशंसा प्राप्त की जो सिडंस के विपरीत, महिला की मर्यादा के समकालीन भावों के अनुरूप थी। मैकरेडी के 'सेवानिवृत' होकर अमेरिका चले जाने के बाद उन्होंने इस भूमिका में अभिनय करना जारी रखा, 1849 में वे अमेरिकी अभिनेता एडविन फॉरेस्ट के साथ एक प्रतिद्वंद्विता में शामिल हो गए, जिनके पक्षपातों ने मैकरेडी को एस्टर प्लेस में धकेल दिया जिसके कारण वह घटना घटित हुई जिसे सामान्यत: एस्टर प्लेस राईट कहा जाता है।

मध्य-सदी के दो सबसे महत्त्वपूर्ण मैकबेथ, सैमुअल फेल्प्स और चार्ल्स कीन, दोनों ने महत्त्वपूर्ण उभय भाविता और लोकप्रिय सफलता प्राप्त की थी। दोनों मंचन के कुछ पहलुओं की तुलना में इस पात्र की अपनी-अपनी व्याख्याओं के लिए प्रसिद्ध हैं। सैडलर्स वेल्स थियेटर में फेल्प्स शेक्सपियर के लगभग सभी पाठों को वापस लेकर आये। उन्होंने दरबान के दृश्य के प्रथमार्द्ध को वापस ला दिया जिसे डेवनैंट के बाद के निर्देशकों ने नजरअंदाज कर दिया था, दूसरे को उसके फूहड़ व्यवहार के कारण कटा हुआ छोड़ दिया गया था। उन्होंने जोड़े गए संगीत को छोड़ दिया और फोलियो में चुड़ैलों की भूमिकाओं को कम कर दिया था। ठीक इसी तरह महत्त्वपूर्ण रूप से वे मैकबेथ की मौत के फोलियो संबंधी प्रयोग में वापस आये थे। इनमें से सभी फैसलों को विक्टोरियाई संदर्भ में आगे नहीं बढ़ाया गया और फेल्प्स ने 1844 और 1861 के बीच अपने एक दर्जन से अधिक निर्माणों में शेक्सपियर और डेवनैंट के विभिन्न संयोजनों के साथ प्रयोग किया। उनकी सबसे सफल लेडी मैकबेथ इसाबेला ग्लीन थीं जिनकी प्रभावशाली उपस्थिति ने कुछ आलोचकों को सिडंस की याद ताजा कर दी थी।

1850 के बाद प्रिन्सेसेज थियेटर में कीन की प्रस्तुतियों की शानदार विशेषता वेशभूषा की उनकी सटीकता थी। कीन ने अपनी सबसे बड़ी सफलता

आधुनिक मेलोड्रामा में प्राप्त की और उन्हें महानतम एलिजाबेथ संबंधी भूमिकाओं को व्यापक रूप से बहुत अधिक पूर्वव्याप्त नहीं करने के रूप में देखा गया। हालांकि दर्शकों ने इसका बुरा नहीं माना, 1853 का एक निर्माण बीस सप्ताह तक चलता रहा। मुमकिन है कि आकर्षण का हिस्सा कीन द्वारा ऐतिहासिक सटीकता के लिए अपनी प्रस्तुतियों में ध्यान दिए जाने के लिए मशहूर होना था, जैसा कि एलार्डिस निकोल की टिप्पणी हैं 'यहां तक कि वनस्पति भी ऐतिहासिक रूप से सही थी। "

1875 में लंदन के लिसेयुम थियेटर में भूमिका पर हेनरी इरविंग का पहला प्रयास विफल रहा था। सिडनी फ्रांसिस बेटमैन के निर्माण के तहत और केट जोसेफिन बेटमैन के साथ अभिनय में इरविंग संभवत: अपने प्रबंधक हेजेकिया लिंथिकम बेटमैन की हाल ही में हुई मौत से प्रभावित थे। हालांकि यह निर्माण अस्सी प्रस्तुतियों तक चला, उनके मैकबेथ को उनके हेलमेट से निम्न कोटि का बताया गया। 1888 में लिसेयुम में एलेन टेरी के विपरीत उनका अगला निबंध कहीं अधिक बेहतर था जो 150 भूमिकाओं के लिए प्रस्तुत किया गया। हरमन क्लेन की बहस में इरविंग ने आर्थर सुलीवान को इस नाटक के लिए आकस्मिक संगीत का एक सूट लिखने के लिए शामिल किया था। ब्रैम स्टोकर जैसे मित्रों ने इस अनुमान के आधार पर उनकी 'मनोवैज्ञानिक' पाठ्य सामग्री का बचाव किया कि मैकबेथ ने नाटक की शुरुआत से पहले ही डंकन को मारने का सपना देखा था। उनमें से हेनरी जेम्स जैसे उनके विरोधियों ने उनके मनमाने शब्द परिवर्तन (लेडी मैकबेथ की मौत के संवाद में 'होना चाहिए' के लिए 'हुआ होता') और पात्र के प्रति 'नौरास्थेनिक' और 'तुनकमिजाज' नजरिये पर अफसोस प्रकट किया।

बीसवीं सदी से वर्तमान तक

बैरी विन्सेन्ट जैक्सन ने 1928 में बर्मिंघम रेपर्टरी के साथ एक प्रभावशाली आधुनिक-पोशाक प्रस्तुति का मंचन किया, यह प्रस्तुति रॉयल कोर्ट थियेटर में मंचन के रूप में लंदन पहुँची। इसे मिश्रित समीक्षाएं प्राप्त हुईं, एरिक मैचुरीन को एक अपर्याप्त मैकबेथ आंका गया, हालांकि लेडी खलनायिका मैरी मेर्राल को अनुकूल समीक्षा मिली। हालांकि द टाइम्स ने इसे एक 'निंदनीय असफलता' बताया, निर्माण ने दृश्यात्मक और पुरातात्त्विक आधिक्य की प्रवृत्ति को उलटने के लिए काफी काम किया था जो चार्ल्स कीं के समय में चरम पर पहुँची थी।

फेडरल थियेटर प्रोजेक्ट नीग्रो यूनिट द्वारा निर्मित मैकबैथ, 1935

20वीं सदी के सबसे अधिक प्रचारित निर्माणों में 14 अप्रैल से 20 जून 1936 तक हार्लेम में लाफायेट थियेटर में फेडरल थियेटर प्रोजेक्ट द्वारा रचित निर्माण शामिल था। ओर्सन वेलेस ने अपने पहले मंचीय निर्माण में सभी अफ्रीकी अमेरिकी निर्माणों में जैक कार्टर और एडना थॉमस को निर्देशित किया था जिसमें कनाडा ली ने बैंको की भूमिका निभाई थी। यह वूडू मैकबेथ के रूप में जाना गया, क्योंकि वेलेस ने इस नाटक को उपनिवेश-उपरांत हैती में सेट किया था। उनके निर्देशन ने तमाशा और रहस्य पर जोर दिया–उनके दर्जनों 'अफ्रीकी' ड्रमों ने डेवनैंट के चुड़ैलों के कोरस की याद ताजा कर दी थी। वेलेस ने बाद में नाटक के 1948 के फिल्म रूपांतरण में कलाकार की भूमिका निभाई और निर्देशित की।

लॉरेंस ओलिवियर ने 1929 के निर्माण में मैल्कम की और 1937 में ओल्ड विक थियेटर में एक ऐसे निर्माण में मैकबेथ की भूमिका निभाई थी जिसमें इसकी शुरुआत से पूर्व की रात को विक के कलात्मक निर्देशक लिलियन बेलिस की मौत हो गयी थी। ओलिवियर का मेकअप उस प्रस्तुति के लिए इतना अधिक मोटा और स्टाइलिश था कि विवियन लेह ने इस प्रकार कहते हुए उद्धृत किया 'आप मैकबेथ की पहली लाइन को सुनते हैं, उसके बाद लैरी का मेकअप सामने आता है और तब बैंको आता है, फिर लैरी आता है।' ओलिवियर बाद में उस भूमिका में आये जो 20वीं सदी के निर्माणों में सबसे मशहूर है, जिसका मंचन 1955 में ग्लेन ब्याम शॉ द्वारा स्ट्रैटफोर्ड-अपॉन-एवन में किया गया था। विवियन लेह ने लेडी मैकबेथ की भूमिका निभाई थी। सहायक कलाकार जिसकी हेरोल्ड हॉबसन ने निंदा की थी, इसमें कई अभिनेता शामिल थे जिनका शेक्सपियर से संबंधित सफल कैरियर रहा था–इयान होल्म ने डोनालबेन की भूमिका निभाई थी, कीथ मिशेल मैकडफ बने थे और पैट्रिक वाइमार्क पोर्टर की भूमिका में थे। ओलिवियर सफलता की कुंजी था। विशेष रूप से हत्यारों के साथ संवाद और बैंको के भूत से भिड़ने में उनके अभिनय की तीव्रता कई समीक्षकों को एडमंड कीन की याद ताजा करने वाली लगती है। ओलिवियर के रिचर्ड III की बॉक्स ऑफिस में विफलता के बाद एक फिल्म संस्करण की योजना कमजोर पड़ गयी। केनेथ टाइनन ने इस अभिनय के बारे में सीधे तौर पर कहा कि 'मैकबैथ की तरह कोई भी कभी सफल नहीं हुआ हैष्कृओलिवियर तक।

ओलिवियर के 1937 के ओल्ड विक थियेटर के निर्माण में उनके साथी-कलाकार जूडिथ एंडरसन का नाटक के साथ एक बराबर का सफल जुड़ाव था। उन्होंने लेडी मैकबेथ की भूमिका ब्रॉडवे पर मॉरिस इवांस के विपरीत मार्गरेट वेबस्टर द्वारा निर्देशित एक निर्माण में निभाई थी जो 1941 में 131 प्रदर्शनों तक चली थी। एंडरसन और इवांस ने इस नाटक में दो बार 1962 और 1954 में टेलीविजन पर अभिनय किया, जिसमें मॉरिस इवांस ने 1962 के निर्माण के लिए एमी पुरस्कार जीता और एंडरसन ने दोनों प्रस्तुतियों के लिए पुरस्कार प्राप्त किया। 1971 में द ट्रेजडी ऑफ मैकबेथ शीर्षक एक रूपांतरण का निर्देशन रोमन पोलंस्की द्वारा निर्देशित किया गया था और कार्यकारी-निर्माता थे ह्यू हेफनर।

एक जापानी फिल्म अनुकूलन थ्रोन ऑफ ब्लड (कुमोनोसू जो, 1957) में तोशिरो मिफुने को मुख्य भूमिका में दिखाया गया है और इसका फिल्मांकन सामंती जापान में हुआ है। इसे अच्छी प्रतिक्रिया प्राप्त हुई और नाटक की कोई भी पटकथा नहीं होने के बावजूद आलोचक हेरोल्ड ब्लूम ने इसे 'मैकबेथ का सबसे सफल फिल्म रूपांतरण' कहा।

20वीं सदी के सबसे उल्लेखनीय प्रस्तुतियों में से एक 1976 में रॉयल शेक्सपीयर कंपनी के लिए ट्रेवर नन का संस्करण था। नन ने दो साल पहले इस नाटक में निकोल विलियमसन और हेलेन मिरेन को निर्देशित किया था लेकिन वह प्रस्तुति प्रभावित करने में काफी हद तक असफल रही थी। 1976 में नन ने इस नाटक को द अदर प्लेस में एक न्यूनतम सेट के साथ प्रस्तुत किया था, इस छोटे, लगभग गोल मंच पर पात्रों की मनोवैज्ञानिक गतिशीलता पर ध्यान केंद्रित किया गया था। शीर्षक भूमिका में इयान मैककेलन और लेडी मैकबेथ के रूप में जूडी डेंच दोनों ने असाधारण अनुकूल समीक्षाएं प्राप्त की थीं। डेंच ने 2004 में अपने अभिनय के लिए 1977 एसडब्ल्यूईटी सर्वश्रेष्ठ अभिनेत्री का पुरस्कार जीता, आरएससी के सदस्यों ने उनकी भूमिका को कंपनी के इतिहास में किसी अभिनेत्री द्वारा सबसे उत्कृष्ट अभिनय चुना।

नन के निर्माण को 1977 में लंदन में स्थानांतरित किया गया और बाद में इसे टेलीविजन के लिए फिल्माया गया। इसने मैकबेथ के रूप में अल्बर्ट फिन्नी और लेडी मैकबेथ के रूप में डोरोथी तूतिन के साथ पीटर हॉल के 1978 के निर्माण को पीछे छोड़ दिया। लेकिन सबसे कुख्यात हाल ही के

मैकबेथ का मंचन 1980 में ओल्ड विक में किया गया था। पीटर ओश्टूल और फ्रांसिस टोमेल्टी ने एक ऐसे निर्माण (ब्रायन फोर्ब्स द्वारा) में अग्रणी भूमिकाएं ली थीं जिसे थियेटर के कलात्मक निर्देशक टिमोथी वेस्ट द्वारा शुरुआत की रात से पहले ही सार्वजनिक रूप से परित्याग कर दिया गया था, बावजूद इसके कि अपनी कुख्याति के कारण यह पूरी तरह बिक गया था। जैसी कि आलोचक जैक टिंकर ने डेली मेल में टिप्पणी की थी' 'यह अभिनय उतना अधिक पूरी तरह से बुरा नहीं था जितना कि साहसपूर्वक हास्यास्पद था।

मंच पर लेडी मैकबेथ को शेक्सपियर की रचनाओं में अधिक 'प्रभावशाली और चुनौतीपूर्ण' भूमिकाओं में से एक माना जाता है। इस भूमिका को निभाने वाली अन्य अभिनेत्रियों में वेन फ्रैंकॉन-डेविस, जेनेट सुजमन, ग्लेंडा जैक्सन और जेन लेपोटेयर शामिल हैं।

सन् 2001 में फिल्म स्कॉटलैंड, पीए रिलीज हुई थी। गतिविधि 1970 के दशक के पेनसिल्वेनिया में स्थानांतरित किया गया है और यह जो मैकबेथ के चारों ओर घूमती है और उनकी पत्नी पैट नॉर्म डंकन से एक हैमबर्गर कैफे का नियंत्रण प्राप्त करती है। फिल्म का निर्देशन बिली मॉरीसेटे द्वारा किया गया था और सितारों में जेम्स लेग्रोस, मॉरा टायरनी और क्रिस्टोफर वालकेन शामिल थे।

एक प्रस्तुति का मंचन असली मैकबेथ के मोरे के घर में किया गया था जिसका निर्माण नेशनल थियेटर ऑफ स्कॉटलैंड द्वारा एल्गिन कैथेड्रल में मंचन के लिए किया गया था। पेशेवर कलाकारों, नर्तकियों, संगीतकारों, स्कूली बच्चों और मोरे के क्षेत्र के समुदाय के कलाकारों, सभी ने हाईलैंड ईयर ऑफ कल्चर (2007) के एक महत्त्वपूर्ण आयोजन में हिस्सा लिया था।

उसी वर्ष आलोचकों के बीच एक आम सहमति थी कि चिचेस्टर फेस्टिवल 2007 के लिए पैट्रिक स्टीवर्ट और केट फ्लीटवुड अभिनीत रूपर्ट गूल्ड के निर्माण ने ट्रेवर नन के बहुप्रशंसित 1976 के आरएससी प्रस्तुति के साथ प्रतिस्पर्धा की थी और जब इसे लंदन में गिल्गाड थिएटर में स्थानांतरित किया गया, डेली टेलीग्राफ के लिए समीक्षा करने वाले चार्ल्स स्पेन्सर ने इसे अपने द्वारा अभी तक देखा गया सर्वश्रेठ मैकबेथ बताया। ईवनिंग स्टैंडर्ड थिएटर अवार्ड्स 2007 में इस निर्माण ने स्टीवर्ट के लिए सर्वश्रेष्ठ अभिनेता और गूल्ड के लिए सर्वश्रेष्ठ निर्देशक दोनों का पुरस्कार जीता। यही निर्माण एक पूरी तरह

से बिक गए संचालन के बाद ब्रॉडवे (लाइसियम थियेटर) में स्थानांतरित होकर 2008 में अमेरिका में ब्रुकलीन एकेडमी ऑफ म्यूजिक में शुरू हुआ। 2009 में गूल्ड ने एक बार फिर से स्टीवर्ट और फ्लीटवुड को उनके निर्माण के एक एक प्रशंसित फिल्म संस्करण में निर्देशित किया जिसे पीबीएस की महान प्रस्तुतियों कीशृंखला के एक हिस्से के रूप में 6 अक्टूबर 2010 को प्रसारित किया गया।

2003 में ब्रिटिश थिएटर कंपनी पंचड्रंक ने लंदन में ब्युफॉय भवन का इस्तेमाल किया जो एक पुराना विक्टोरियाई स्कूल है जहां 'स्लीप नो मोर ' का मंचन किया गया था, यह हिचकॉक थ्रिलर की शैली में मैकबेथ की कहानी है, जिसमें उत्कृष्ट हिचकॉक की फिल्मों के साउंडट्रैक से पुनर्निर्मित संगीत का इस्तेमाल किया गया था। पंचड्रंक ने अमेरिकी रिपर्टरी थियेटर के सहयोग से इस निर्माण को अक्टूबर 2009 में ब्रुकलिन, मैसाचुसेट्स में एक परित्यक्त स्कूल में एक नए विस्तारित संस्करण में पुनर्व्यवस्थित किया।

2004 में भारतीय निर्देशक विशाल भारद्वाज ने मकबूल शीर्षक से मैकबेथ के अपने अवायाम के रूपांतरण को निर्देशित किया। समकालीन मुंबई के अंडरवर्ल्ड में फिल्मांकित इस फिल्म में इरफान खान, तब्बू, पंकज कपूर, ओम पुरी, नसीरुद्दीन शाह और पीयूष मिश्र की प्रमुख भूमिकाएं थीं। यह फिल्म अत्यधिक प्रशंसित थी और यह निर्देशक भारद्वाज और इरफान खान के लिए प्रसिद्धि लेकर आयी।

अन्य लेखकों द्वारा सीक्वल

2006 में हार्पर कोलिन्स ने ऑस्ट्रेलियाई लेखक जैकी फ्रेंच द्वारा रचित पुस्तक मैकबेथ एंड सन को प्रकाशित किया। 2008 में पिगैसस बुक्स ने द ट्रेजडी ऑफ मैकबेथ पार्ट II: द सीड ऑफ बैंको का प्रकाशन किया जो अमेरिकी लेखक एवं नाटककार नूह ल्यूकमैन द्वारा रचित एक नाटक है, जिसे वहां से उठाने का प्रयास किया गया था जहां वास्तविक मैकबेथ को छोड़ दिया जाता है और इसके कई ढीले अंशों का समाधान किया गया था।

डेविड ग्रेग के 2010 के नाटक डनसिनेन ने डनसिनेन में मैकबेथ के पतन को इसके प्रारंभिक बिंदु के रूप में लिया था जिसमें मैकबैथ के तत्काल समाप्त हुए साम्राज्य को मैल्कम के विपरीत लंबा और स्थिर रूप में चित्रित किया गया था।

9

आर के नारायण की पुस्तकें

आर. के. नारायण का पूरा नाम रासीपुरम कृष्णस्वामी अय्यर नारायणस्वामी था। नारायण अंग्रेजी साहित्य के भारतीय लेखकों में तीन सबसे महान् उपन्यासकारों में गिने जाते हैं। मुल्कराज आनंद तथा राजा राव के साथ उनका नाम भारतीय अंग्रेजी लेखन के आरंभिक समय में 'बृहत्तरयी' के रूप में प्रसिद्ध है। मुख्यत: उपन्यास तथा कहानी विधा को अपनाते हुए उन्होंने विभिन्न स्तरों तथा रूपों में मानवीय उत्थान-पतन की गाथा को अभिव्यक्त करते हुए अपने गंभीर यथार्थवाद के माध्यम से रचनात्मक कीर्तिमान स्थापित किया है।

जीवन-परिचय

आर. के. नारायण का पूरा नाम राशीपुरम कृष्ण स्वामीनारायण था। इसमें पारंपरिक पारिवारिक उपाधि 'अय्यर' जोड़कर भी उनका नाम लिया जाता है। नारायण के पिता एक तमिल अध्यापक थे, जिन्होंने अपना अधिकांश समय मैसूर के शांत शहर में बिताया था। नारायण ने भी बहुत थोड़े समय के लिए एक अध्यापक तथा पत्रकार के रूप में कार्य करने के सिवा अपना सारा जीवन लेखन में ही लगाया।

आर. के. नारायण मैसूर के यादवगिरि में करीब दो दशक तक रहे। 1990 में बीमारी की वजह से वे चेन्नई शिफ्ट कर गये थे।

इनके द्वारा रचित एक उपन्यास गाइड के लिये उन्हें सन् 1960 में साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

रचनात्मक परिचय

उन्होंने एक काल्पनिक शहर मालगुडी को आधार बनाकर अपनी अनेक रचनाएँ की हैं। मालगुडी को प्रायः दक्षिण भारत का एक काल्पनिक कस्बा माना जाता है, परंतु स्वयं लेखक के कथनानुसार 'अगर मैं कहूँ कि मालगुडी दक्षिण भारत में एक कस्बा है तो यह भी अधूरी सच्चाई होगी, क्योंकि मालगुडी के लक्षण दुनिया में हर जगह मिल जाएँगे।'

उनका पहला उपन्यास स्वामी और उसके दोस्त (स्वामी एंड फ्रेंड्स) 1935 ई. में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में एक स्कूली लड़के स्वामीनाथन का बेहद मनोरंजक वर्णन है तथा उपन्यास के शीर्षक का स्वामी उसी के नाम का संक्षिप्तीकरण है। इस उपन्यास के शीर्षक में ही व्यंग्य सन्निहित है। शीर्षक से कहानी के बारे में पाठक जैसी उम्मीद करने लगता है, उसे लेखक पूरी तरह ध्वस्त कर देता है। यह स्वामी ऐसा लड़का है, जो स्कूल में वर्ग में अनुपस्थित रहकर हेड मास्टर के दफ्तर की खिड़कियों के शीशे तोड़ता है और अगले दिन सवाल किए जाने पर कोई जवाब नहीं दे पाता है तो बेवकूफों की तरह ताकते रहता है और सरासर पीठ पर बेंत पड़ने पर तथा डेस्क पर खड़े किए जाने पर अचानक कूदकर किताबें उठा कर यह कहते हुए भाग निकलता है कि 'मैं तुम्हारे गंदे स्कूल की परवाह नहीं करता'। इसी तरह स्वामी की कहानी में एक लड़के की सामान्य शरारतों और उसके एवज में मिलने वाली सजाओं का ही वर्णन है। किंतु लेखक उसे बड़े मजाकिया लहजे में किसी लड़के के मन को पूरी तरह समझते हुए कहते हैं। आरंभिक उपन्यास होने से इसमें नारायण बढ़ती उम्र के साथ अनुभव की जाने वाली तकलीफ तथा समय के बीतने की अनुभूति का अहसास आदि के रूप में रचनात्मक प्रौढ़ता का पूरा परिचय तो नहीं दे पाते, परंतु बचपन की पूरी ताजगी को कथा में उतार देने में बिल्कुल सफल होते हैं।

'स्नातक' (द बैचलर ऑफ आर्ट्स) 1935 ई. में प्रकाशित हुआ। यह एक संवेदनशील युवक चंदन की कहानी है, जो उसके शिक्षा द्वारा प्राप्त प्रेम एवं विवाह संबंधी पश्चिमी विचारों तथा जिस सामाजिक ढांचे में वह रहता है के बीच के द्वंद्व को प्रस्तुत करता है।

द डार्क रूम (1938) भी दैनंदिन जीवन की छोटी-छोटी बातों और घटनाओं के विवरण से बुनी कहानी है। इसमें सावित्री नामक एक ऐसी परंपरागत नारी की कथा है, जो समस्त कष्टों को मौन रहकर सहन करती है। उसका पति दूसरी कामकाजी महिला की ओर आकर्षित होता है और इस बात से आहत होने के बावजूद अंततः सावित्री सामंजस्य स्थापित करके ही रहती है। हालाँकि ऐसा नहीं है कि कहानी सपाट रूप में कह दी गयी है। भावनाओं का बिंब उकेरने में लेखक ने कुशलता का परिचय दिया है। पति के दूसरी औरत को न छोड़ने से उत्पन्न निराशा में सावित्री लड़ती भी है और घर छोड़कर चली भी जाती है। निराशा की इस स्थिति में उसे महसूस होता है कि स्वावलंबन के योग्य बनने पर ही जीवन वास्तव में जीवन होता है। अन्यथा 'वेश्या और शादीशुदा औरतों में फर्क ही क्या है? -- सिर्फ यह कि वेश्या आदमी बदलती रहती है और बीवी एक से ही चिपकी रहती है। दोनों अपनी रोटी और सहारे के लिए आदमी पर ही निर्भर है।' निराशा के इसी आलम में वह आत्महत्या की भी कोशिश करती है। बचा लिए जाने पर घर न लौटकर स्वाभिमान से अपनी कमाई से गुजारा चलाने का निश्चय करके एक मंदिर में नौकरी भी कर लेती है। परंतु, अंततः इस सब की व्यर्थता, हताशा और स्वयं अपनी दुर्बलता महसूस करके हार मान लेती है और फिर घर लौटने का निश्चय कर लेती है। छोटी-छोटी बातों का विवरण देते हुए लेखक भावनाओं की पूर्णता का चित्र अंकित करता है।

स्वतंत्रता से पहले लेखक का अंतिम उपन्यास द इंग्लिश टीचर 1946 में प्रकाशित हुआ। यह उपन्यास अमेरिका में 'ग्रेटफुल टु लाइफ एंड डेथ' शीर्षक से प्रकाशित हुआ था। इसमें लेखक ने एक ऐसी कहानी चुनी है, जिस के बाद का अंश अविश्वसनीय हो गया है। कहानी के आरंभ में घर और घर की लक्ष्मी अर्थात् पत्नी के प्रति प्रेम पूर्ण व्यवहार का उत्तम निदर्शन है, लेकिन कहानी के उत्तरांश में उस पत्नी के निधन हो जाने के बाद उसकी आत्मा से संपर्क स्थापित कर लेने की बातें आयी हैं, जो कि रचनात्मक स्तर पर अविश्वसनीय सी लगती है।

प्रकाशित पुस्तकें

उपन्यास

स्वामी और उसके दोस्त (1935),
द बेचलर ऑफ आर्टस (1937),
द डार्क रूम (1938),
द इंग्लिश टीचर (1945),

मिस्टर संपथ (1948),
द फाइनेंशीयल एक्सपर्ट (1952),
महात्मा का इंतजार (1955),
द गाइड (1958),
मालगुडी का आदमखोर (1961),
द वेंडर ऑफ स्वीट्स (1967),
द पेंटर ऑफ साइन्ज (1977),
ए टाइगर फॉर मालगुडी (1983),
टाल्केटिव मेन (1986),
द वर्ल्ड ऑफ नागराज (1990),
ग्रेन्डमदर्स टेल (1992)।

संकलन

मालगुडी की कहानियाँ (मालगुडी डेज) (1942),
एन एस्ट्रोलॉजर्स डे एंड अदर स्टोरीज (1947),
लॉली रोड एंड अदर स्टोरीज (1956),
ए हॉर्स एंड टू गोट्स (1970),
अंडर द बेनियन ट्री ऑड अदर स्टोरीज (1985),
ग्रेन्डमदर्स टेल ऑड अदर स्टोरीज (1994)।

निबंध

नेक्स्ट सन्डे,
रिलक्टेंट गुरु,
ए राइटर्स नाइटमेयर,
द वर्ल्ड ऑफ स्टोरी-टेलर।

अन्य कृतियां

माइ डेज,
माइ डेटलेस डायरी,
द एमेरल्ड रूट,
गॉड्स, डेमन्स एंड अदर्स,
द रामायण,
द महाभारत।

10

आचार्य रामचंद्र शुक्ल की पुस्तकें

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी आलोचक, निबन्धकार, साहित्येतिहासकार, कोशकार, अनुवादक, कथाकार और कवि थे। उनके द्वारा लिखी गई सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पुस्तक है हिन्दी साहित्य का इतिहास, जिसके द्वारा आज भी काल निर्धारण एवं पाठ्यक्रम निर्माण में सहायता ली जाती है। हिन्दी में पाठ आधारित वैज्ञानिक आलोचना का सूत्रपात उन्हीं के द्वारा हुआ। हिन्दी निबन्ध के क्षेत्र में भी शुक्ल जी का महत्त्वपूर्ण योगदान है। भाव, मनोविकार सम्बंधित मनोविश्लेषणात्मक निबन्ध उनके प्रमुख हस्ताक्षर हैं। शुक्ल जी ने इतिहास लेखन में रचनाकार के जीवन और पाठ को समान महत्त्व दिया। उन्होंने प्रासंगिकता के दृष्टिकोण से साहित्यिक प्रत्ययों एवं रस आदि की पुनर्व्याख्या की।

जीवन परिचय

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का जन्म सं. 1884 में बस्ती जिले के अगोना नामक गांव में हुआ था। पिता पं. चंद्रबली शुक्ल की नियुक्ति सदर कानूनगो के पद पर मिर्जापुर में हुई तो समस्त परिवार वहीं आकर रहने लगा। जिस समय शुक्ल जी की अवस्था नौ वर्ष की थी, उनकी माता का देहान्त हो गया। मातृ

सुख के अभाव के साथ-साथ विमाता से मिलने वाले दु:ख ने उनके व्यक्तित्त्व को अल्पायु में ही परिपक्व बना दिया।

अध्ययन के प्रति लग्नशीलता शुक्ल जी में बाल्यकाल से ही थी। किंतु इसके लिए उन्हें अनुकूल वातावरण न मिल सका। मिर्जापुर के लंदन मिशन स्कूल से 1901 में स्कूल फाइनल परीक्षा (F।) उत्तीर्ण की। उनके पिता की इच्छा थी कि शुक्ल जी कचहरी में जाकर दफ्तर का काम सीखें, किंतु शुक्ल जी उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते थे। पिता जी ने उन्हें वकालत पढ़ने के लिए इलाहाबाद भेजा पर उनकी रुचि वकालत में न होकर साहित्य में थी। अत: परिणाम यह हुआ कि वे उसमें अनुत्तीर्ण रहे। शुक्ल जी के पिताजी ने उन्हें नायब तहसीलदारी की जगह दिलाने का प्रयास किया, किंतु उनकी स्वाभिमानी प्रकृति के कारण यह संभव न हो सका।

1903 से 1908 तक 'आनन्द कादम्बिनी' के सहायक संपादक का कार्य किया। 1904 से 1908 तक लंदन मिशन स्कूल में ड्राइंग के अध्यापक रहे। इसी समय से उनके लेख पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगे और धीरे-धीरे उनकी विद्वता का यश चारों ओर फैल गया। उनकी योग्यता से प्रभावित होकर 1908 में काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने उन्हें हिन्दी शब्दसागर के सहायक संपादक का कार्य-भार सौंपा जिसे उन्होंने सफलतापूर्वक पूरा किया। श्यामसुन्दरदास के शब्दों में 'शब्दसागर की उपयोगिता और सर्वांगपूर्णता का अधिकांश श्रेय पं. रामचंद्र शुक्ल को प्राप्त है। वे नागरी प्रचारिणी पत्रिका के भी संपादक रहे। 1919 में काशी हिंदू विश्वविद्यालय में हिंदी के प्राध्यापक नियुक्त हुए जहाँ बाबू श्याम सुंदर दास की मृत्यु के बाद 1937 से जीवन के अंतिम काल (1941) तक विभागाध्यक्ष का पद सुशोभित किया।

2 फरवरी, सन् 1941 को हृदय की गति रुक जाने से शुक्ल जी का देहांत हो गया।

कृतियाँ

शुक्ल जी की कृतियाँ तीन प्रकार की हैं।

मौलिक कृतियाँ,

तीन प्रकार की हैं-

आलोचनात्मक ग्रंथ—सूर, तुलसी, जायसी पर की गई आलोचनाएं, काव्य

में रहस्यवाद, काव्य में अभिव्यंजनावाद, रसमीमांसा आदि शुक्ल जी की आलोचनात्मक रचनाएं हैं।

निबन्धात्मक ग्रन्थ–उनके निबन्ध चिंतामणि नामक ग्रंथ के दो भागों में संग्रहीत हैं। चिंतामणि के निबन्धों के अतिरिक्त शुक्लजी ने कुछ अन्य निबन्ध भी लिखे हैं, जिनमें मित्रता, अध्ययन आदि निबन्ध सामान्य विषयों पर लिखे गये निबन्ध हैं। मित्रता निबन्ध जीवनोपयोगी विषय पर लिखा गया उच्चकोटि का निबन्ध है, जिसमें शुक्लजी की लेखन शैली गत विशेषतायें झलकती हैं। क्रोध निबन्ध में उन्होंने सामाजिक जीवन में क्रोध का क्या महत्त्व है, क्रोधी की मानसिकता–जैसे समबन्धित पहलुओ का विश्लेषण किया है।

ऐतिहासिक ग्रन्थ–हिंदी साहित्य का इतिहास उनका अनूठा ऐतिहासिक ग्रंथ है।

अनूदित कृतियाँ

शुक्ल जी की अनूदित कृतियां कई हैं। 'शशांक' उनका बंगला से अनुवादित उपन्यास है। इसके अतिरिक्त उन्होंने अंग्रेजी से विश्वप्रपंच, आदर्श जीवन, मेगस्थनीज का भारतवर्षीय वर्णन, कल्पना का आनन्द आदि रचनाओं का अनुवाद किया। आनन्द कुमार शुक्ल द्वारा 'आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का अनुवाद कर्म' नाम से रचित एक ग्रन्थ में उनके अनुवाद कार्यों का विस्तृत विवरण दिया गया है।

सम्पादित कृतियाँ

सम्पादित ग्रन्थों में हिंदी शब्दसागर, नागरी प्रचारिणी पत्रिका, भ्रमरगीत सार, सूर, तुलसी जायसी ग्रंथावली उल्लेखनीय है।

वर्ण्य विषय

शुक्ल जी ने प्रायः साहित्यिक और मनोवैज्ञानिक निबंध लिखे हैं। साहित्यिक निबंधों के 3 भाग किए जा सकते हैं –

सैद्धान्तिक आलोचनात्मक निबंध– 'कविता क्या है', 'काव्य में लोक मंगल की साधनावस्था', 'साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद', आदि निबंध सैद्धांतिक आलोचना के अंतर्गत आते हैं। आलोचना के साथ-साथ अन्वेषण और

गवेषणा करने की प्रवृत्ति भी शुक्ल जी में पर्याप्त मात्रा में है। 'हिंदी साहित्य का इतिहास' उनकी इसी प्रवृत्ति का परिणाम है।

व्यावहारिक आलोचनात्मक निबंध- भारतेंदु हरिश्चंद्र, तुलसी का भक्ति मार्ग, मानस की धर्म भूमि आदि निबंध व्यावहारिक आलोचना के अंतर्गत आते हैं।

मनोवैज्ञानिक निबंध- मनोवैज्ञानिक निबंधों में करुणा, श्रद्धा, भक्ति, लज्जा, ग्लानि, क्रोध, लोभ और प्रीति आदि भावों तथा मनोविकारों पर लिखे गए निबंध आते हैं। शुक्ल जी के ये मनोवैज्ञानिक निबंध सर्वथा मौलिक हैं। उनकी भांति किसी भी अन्य लेखक ने उपर्युक्त विषयों पर इतनी प्रौढ़ता के साथ नहीं लिखा। शुक्ल जी के निबंधों में उनकी अभिरुचि, विचारधारा अध्ययन आदि का पूरा-पूरा समावेश है। वे लोकादर्श के पक्के समर्थक थे। इस समर्थन की छाप उनकी रचनाओं में सर्वत्र मिलती है।

भाषा

शुक्ल जी के गद्य-साहित्य की भाषा खड़ी बोली है और उसके प्रायः दो रूप मिलते हैं -

क्लिष्ट और जटिल

गंभीर विषयों के वर्णन तथा आलोचनात्मक निबंधों के भाषा का क्लिष्ट रूप मिलता है। विषय की गंभीरता के कारण ऐसा होना स्वाभाविक भी है। गंभीर विषयों को व्यक्त करने के लिए जिस संयम और शक्ति की आवश्यकता होती है, वह पूर्णतः विद्यमान है। अतः इस प्रकार को भाषा क्लिष्ट और जटिल होते हुए भी स्पष्ट है। उसमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है।

सरल और व्यावहारिक

भाषा का सरल और व्यावहारिक रूप शुक्ल जी के मनोवैज्ञानिक निबंधों में मिलता है। इसमें हिंदी के प्रचलित शब्दों को ही अधिक ग्रहण किया गया है यथा स्थान उर्दू और अंग्रेजी के अतिप्रचलित शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। भाषा को अधिक सरल और व्यावहारिक बनाने के लिए शुक्ल जी ने तड़क-भड़क अटकल-पच्चू आदि ग्रामीण बोलचाल के शब्दों को भी अपनाया है। तथा नौ दिन

चले अढ़ाई कोस, जिसकी लाठी उसकी भैंस, पेट फूलना, काटों पर चलना आदि कहावतों व मुहावरों का भी प्रयोग निस्संकोच होकर किया है।

शुक्ल जी का दोनों प्रकार की भाषा पर पूर्ण अधिकार था। वह अत्यंत संभत, परिमार्जित, प्रौढ़ और व्याकरण की दृष्टि से पूर्ण निर्दोष है। उसमें रंचमात्र भी शिथिलता नहीं। शब्द मोतियों की भांति वाक्यों के सूत्र में गुंथे हुए हैं। एक भी शब्द निरर्थक नहीं, प्रत्येक शब्द का अपना पूर्ण महत्त्व है।

शैली

शुक्ल जी की शैली पर उनके व्यक्तित्त्व की पूरी-पूरी छाप है। यही कारण है कि प्रत्येक वाक्य पुकार कर कह देता है कि वह उनका है। सामान्य रूप से शुक्ल जी की शैली अत्यंत प्रौढ़ और मौलिक है। उसमें गागर में सागर पूर्ण रूप से विद्यमान है। शुक्ल जी की शैली के मुख्यत: तीन रूप हैं -

आलोचनात्मक शैली

शुक्ल जी ने अपने आलोचनात्मक निबंध इसी शैली में लिखे हैं। इस शैली की भाषा गंभीर है। उनमें संस्कृत के तत्सम शब्दों की अधिकता है। वाक्य छोटे-छोटे, संयत और मार्मिक हैं। भावों की अभिव्यक्ति इस प्रकार हुई है कि उनको समझने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती।

गवेषणात्मक शैली

इस शैली में शुक्ल जी ने नवीन खोजपूर्ण निबंधों की रचना की है। आलोचनात्मक शैली की अपेक्षा यह शैली अधिक गंभीर और दुरूह है। इसमें भाषा क्लिष्ट है। वाक्य बड़े-बड़े हैं और मुहावरों का नितान्त अभाव है।

भावात्मक शैली

शुक्ल जी के मनोवैज्ञानिक निबंध भावात्मक शैली में लिखे गए हैं। यह शैली गद्य-काव्य का-सा आनंद देती है। इस शैली की भाषा व्यवहारिक है। भावों की आवश्यकतानुसार छोटे और बड़े दोनों ही प्रकार के वाक्यों को अपनाया गया है। बहुत से वाक्य तो सूक्ति रूप में प्रयुक्त हुए हैं। जैसे - बैर क्रोध का अचार या मुरब्बा है।

इनके अतिरिक्त शुक्ल जी के निबंधों में निगमन पद्धति, अलंकार योजना, तुकदार शब्द, हास्य-व्यंग्य, मूर्तिमत्ता आदि अन्य शैलीगत विशेषताएं भी मिलती हैं।

साहित्य में स्थान

शुक्ल जी शायद हिन्दी के पहले समीक्षक हैं जिन्होंने वैविध्यपूर्ण जीवन के ताने-बाने में गुंफित काव्य के गहरे और व्यापक लक्ष्यों का साक्षात्कार करने का वास्तविक प्रयत्न किया। उन्होंने 'भाव या रस' को काव्य की आत्मा माना है। पर उनके विचार से काव्य का अंतिम लक्ष्य आनन्द नहीं बल्कि विभिन्न भावों के परिष्कार, प्रसार और सामंजस्य द्वारा लोकमंगल की प्रतिष्ठा है। उनकी दृष्टि से महान् काव्य वह है, जिससे जीवन की क्रियाशीलता उजागर हुई हो। इसे उन्होंने काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था कहा है। शुक्ल जी की समस्त मौलिक विचारणा लोकजीवन के मूर्त आदर्शों से प्रतिबद्ध है। 'हमारे हृदय का सीधा लगाव प्रकृति के गोचर रूपों से है' इसलिए कवि का सबसे पहला और आवश्यक काम 'बिंबग्रहण' या 'चित्रानुभव' कराना है। पूर्ण विंबग्रहण के लिए वर्ण्य वस्तु की 'परिस्थिति' का चित्रण भी अपेक्षित होता है। इस प्रकार शुक्ल जी काव्य द्वारा जीवन के समग्र बोध पर बल देते हैं। जीवन में और काव्य में किसी तरह की एकांगिता उन्हें अभीष्ट नहीं।

शुक्ल जी की स्थापनाएँ शास्त्रबद्ध उतनी नहीं हैं जितनी मौलिक। उन्होंने अपनी लोकभावना और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से काव्यशास्त्र का संस्कार किया। इस दृष्टि से वे आचार्य कोटि में आते हैं। काव्य में लोकमंगल की भावना शुक्ल जी की समीक्षा की शक्ति भी है और सीमा भी। उसकी शक्ति काव्यनिबद्ध जीवन के व्यावहारिक और व्यापक अर्थों के मार्मिक अनुसंधान में निहित है। पर उनकी आलोचना का पूर्वनिश्चित नैतिक केंद्र उनकी साहित्यिक मूल्यचेतना को कई अवसरों पर सीमित भी कर देता है उनकी मनोवैज्ञानिक दृष्टि आलोच्य कवि की मनोगति की पहचान में अद्वितीय है।

जायसी, सूर और तुलसी की समीक्षाओं द्वारा शुक्ल जी ने व्यावहारिक आलोचना का उच्च प्रतिमान प्रस्तुत किया। इनमें शुक्ल जी की काव्यमर्मज्ञता, जीवनविवेक, विद्वत्ता और विश्लेषणक्षमता का असाधारण प्रमाण मिलता है। काव्यगत संवेदनाओं की पहचान, उनके पारदर्शी विश्लेषण और यथा तथ्य भाषा

के द्वारा उन्हें पाठक तक संप्रेषित कर देने की उनमें अपूर्व सामर्थ्य है। इनके हिंदी साहित्य के इतिहास की समीक्षाओं में भी ये विशेषताएँ स्पष्ट हैं।

शुक्ल जी के मनोविकार सम्बंधी निबन्ध परिणत प्रज्ञा की उपज हैं। इनमें भावों का मनोवैज्ञानिक रूप स्पष्ट किया गया है तथा मानव जीवन में उनकी आवश्यकता, मूल्य और महत्त्व का निर्धारण हुआ है। भावों के अनुरूप ही मनुष्य का आचरण ढलता है- इस दृष्टि से शुक्ल जी ने उनकी सामाजिक अर्थवत्ता का मनोयोगपूर्वक अनुसंधान किया। उन्होंने मनोविकारों के निषेध का उपदेश देने वालों पर जबर्दस्त आक्रमण किया और मनोवेगों के परिष्कार पर जोर दिया। ये निबंध व्यावहारिक दृष्टि से पाठकों को अपने आपको और दूसरों को सही ढंग से समझने में मदद देते हैं तथा उन्हें सामाजिक दायित्व और मर्यादा का बोध कराते हैं। समाज का संगठन और उन्नयन करने वाले आदर्शों में आस्था इन रचनाओं का मूल स्वर है। भावों को जीवन की परिचित स्थितियों से संबद्ध करके काव्य की दृष्टि से भी उनका प्रामाणिक निरूपण हुआ है।

अपने सर्वोत्तम रूप में शुक्ल जी का विवेचनात्मक गद्य पारदर्शी है। गहन विचारों को सुसंगत ढंग से स्पष्ट कर देने की उनमें असामान्य क्षमता है। उनके गद्य में आत्मविश्वासजन्य दृढ़ता की दीप्ति है। उसमें यथा तथ्यता और संक्षिप्तता का विशिष्ट गुण पाया जाता है। शुक्ल जी की सूक्तियाँ अत्यंत अर्थगर्भ होती हैं। उनके विवेचनात्मक गद्य ने हिंदी गद्य पर व्यापक प्रभाव डाला है।

शुक्ल जी का 'हिंदी साहित्य का इतिहास' हिंदी का गौरवग्रंथ है। साहित्यिक प्रवृत्तियों के आधार पर किया गया कालविभाग, साहित्यिक धाराओं का सार्थक निरूपण तथा कवियों की विशेषताबोधक समीक्षा इसकी प्रमुख विशेषताएँ हैं। शुक्ल जी की कविताओं में उनके प्रकृति प्रेम और सावधान सामाजिक भावों द्वारा उनका देशानुराग व्यंजित है। इनके अनुवादग्रंथ भाषा पर इनके सहज आधिपत्य के साक्षी हैं।

आचार्य शुक्ल बहुमुखी प्रतिभा के साहित्यकार थे। जिस क्षेत्र में भी कार्य किया उसपर उन्होंने अपनी अमिट छाप छोड़ी। आलोचना और निबंध के क्षेत्र में उनकी प्रतिष्ठा युगप्रवर्तक की है। 'काव्य में रहस्यवाद' निबंध पर इन्हें हिन्दुस्तानी अकादमी से 500 रुपये का तथा चिंतामणि पर हिन्दी साहित्य सम्मलेन, प्रयाग द्वारा 1200 रुपये का मंगला प्रसाद पारितोषिक प्राप्त हुआ था।

हिंदी साहित्य का इतिहास (पुस्तक)

हिन्दी साहित्य के अब तक लिखे गए इतिहासों में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल द्वारा लिखे गए हिन्दी साहित्य का इतिहास को सबसे प्रामाणिक तथा व्यवस्थित इतिहास माना जाता है। आचार्य शुक्ल जी ने इसे हिन्दी शब्दसागर की भूमिका के रूप में लिखा था जिसे बाद में स्वतंत्र पुस्तक के रूप में 1929 ई. में प्रकाशित आंतरित कराया गया। आचार्य शुक्ल ने गहन शोध और चिन्तन के बाद हिन्दी साहित्य के पूरे इतिहास पर विहंगम दृष्टि डाली है।

इतिहास-लेखन में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल एक ऐसी क्रमिक पद्धति का अनुसरण करते हैं, जो अपना मार्ग स्वयं प्रशस्त करती चलती है। विवेचन में तर्क का क्रमबद्ध विकास ऐसे है कि तर्क का एक-एक चरण एक-दूसरे से जुड़ा हुआ, एक-दूसरे में से निकलता दिखता है। लेखक को अपने तर्क पर इतना गहन विश्वास है कि आवेश की उसे अपेक्षा नहीं रह जाती।

आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक आचार्य शुक्ल का इतिहास इसी प्रकार तथ्याश्रित और तर्कसम्मत रूप में चलता है। अपनी आरम्भिक उपपत्ति में आचार्य शुक्ल ने बताया है कि साहित्य जनता की चित्तवृत्ति का संचित प्रतिबिम्बित होता है। इन्हीं चित्तवृत्तियों की परम्परा को परखते हुए साहित्य-परम्परा के साथ उनका सामंजस्य दिखाने में आचार्य शुक्ल का इतिहास और आलोचना-कर्म निहित है।

इस इतिहास की एक बड़ी विशेषता है कि आधुनिक काल के सन्दर्भ में पहुँचकर शुक्ल जी ने यूरोपीय साहित्य का एक विस्तृत, यद्यपि कि सांकेतिक ही, परिदृश्य खड़ा किया है। इससे उनके ऐतिहासिक विवेचन में स्रोत, सम्पर्क और प्रभावों की समझ स्पष्टतर होती है।

परिचय

शुक्ल जी ने इतिहास लेखन का यह कार्य कई चरणों में पूरा किया था। सबसे पहले उन्होंने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में छात्रों को पढ़ाने हेतु साहित्य के इतिहास पर संक्षिप्त नोट तैयार किया था। इस संक्षिप्त नोट के बारे में शुक्लजी ने खुद लिखा है, 'जिनमें (नोट में) परिस्थिति के अनुसार शिक्षित जनसमूह की बदलती हुई प्रवृत्तियों को लक्ष्य करके हिन्दी साहित्य के इतिहास के कालविभाग और रचना की भिन्न-भिन्न शाखाओं के निरुपण का एक कच्चा ढाँचा खड़ा किया

गया था।'इसी समय के आसपास हिन्दी शब्दसागर का कार्य पूर्ण हुआ और यह निश्चय किया गया कि भूमिका के रूप में 'हिन्दी भाषा का विकास' और 'हिन्दी साहित्य का विकास' दिया जाएगा। आचार्य शुक्ल ने एक नियत समय के भीतर हिन्दी साहित्य का विकास लिखा। कहना न होगा कि इस कार्य में उन्होंने संक्षिप्त नोट से भरपूर मदद ली। इस तरह हिन्दी साहित्य के इतिहास का एक कच्चा ढाँचा तैयार तो हो गया परन्तु शुक्ल जी इससे पूरी तरह सन्तुष्ट न थे।

आचार्य शुक्ल द्वारा लिखी गई शब्दसागर की भूमिका से पूर्व साहित्येहितासनुमा कुछ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी थीं। गार्सा द तासी, शिवसिंह सेंगर, ग्रियर्सन आदि इस क्षेत्र में कुछ प्रयास कर चुके थे। नागरी प्रचारिणी सभा ने 1900 से 1913 ई. तक पुस्तकों की खोज का कार्य व्यापक पैमाने पर किया था। इस कार्य से अनेक ज्ञात-अज्ञात रचनाओं और रचनाकारों का पता चला था। इस सामग्री का उपयोग कर मिश्रबन्धुओं ने 'मिश्रबंधु-विनोद' तैयार किया था। रीतिकालीन कवियों के परिचयात्मक विवरण देने में शुक्ल जी ने मिश्र बन्धुविनोद का भरपूर उपयोग किया था। एक तरह से देखा जाये तो आचार्य शुक्ल के साहित्येतिहास लेखन से पूर्व दो प्रकार के साहित्यिक स्रोत मौजूद थे। एक तो खुद शुक्लजी द्वारा तैयार की गई नोट और भूमिका तथा दूसरे, अन्य विद्वानों द्वारा लिखी गई पुस्तकें। इन सबकी मदद से आचार्य शुक्ल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' लिखा जो 'शब्द सागर' की भूमिका के छह महीने बाद 1929 ई. में प्रकाशित हुआ। आगे चलकर हिंदी साहित्य का इतिहास पुस्तक का ऑनलाइन संपादन प्रमुख लेखक तथा भाषा शिक्षक डॉ. सुरेश कुमार मिश्रा, रंगारेड्डी आंध्र प्रदेश के नेतृत्व दल में संपन्न हुआ।

'हिन्दी साहित्य का इतिहास' का संशोधित और प्रवर्धित संस्करण सन् 1940 में निकला। यह संस्करण प्रथम संस्करण से भिन्न था। इस संस्करण में अन्य चीजों के अलावा 1940 ई. तक के साहित्य का आलोचनात्मक विवरण भी दे दिया गया था। अब यह साहित्येतिहास की पुस्तक एक मुकम्मल पुस्तक का रूप ले चुकी थी।

संरचना

इस ग्रन्थ में आदिकाल यानी वीरगाथा काल का अपभ्रंश काव्य एवं देश की भाषा काव्य के विवरण के बाद भक्तिकाल की ज्ञानमार्गी, प्रेममार्गी, रामभक्ति शाखा,

कृष्णभक्ति शाखा तथा इस काल की अन्य रचनाओं को अपने अध्ययन का केन्द्र बनाया है। इसके बाद के रीतिकाल के सभी लेखक-कवियों के साहित्य को इसमें समाहित किया है। अध्ययन को आगे बढ़ाते हुए आधुनिक काल के गद्य साहित्य, उसकी परंपरा तथा उत्थान के साथ काव्य को अपने विवेचन केन्द्र में रखा है।

प्रथम संस्करण का वक्तव्य

संशोधित और परिवर्धित संस्करण के सम्बन्ध में दो बातें
काल विभाग
आदिकाल (वीरगाथा, काल संवत् 1050-1375)
1. सामान्य परिचय,
2. अपभ्रंश काव्य,
3. देशभाषा काव्य,
4. फुटकर रचनाएँ।

पूर्व-मध्यकाल (भक्तिकाल, संवत् 1375-1700)

1. सामान्य परिचय,
2. ज्ञानाश्रयी शाखा,
3. प्रेममार्गी (सूफी) शाखा,
4. रामभक्ति शाखा,
5. कृष्णभक्ति शाखा,
6. भक्तिकाल की फुटकर रचनाएँ।

उत्तर मध्यकाल (रीतिकाल, संवत् 1700-1900)

1. सामान्य परिचय,
2. रीति ग्रन्थकार कवि,
3. रीतिकाल के अन्य कवि।

आधुनिक काल (गद्यकाल, संवत् 1900-1980)

1. सामान्य परिचयः गद्य का विकास,
2. गद्य साहित्य का आविर्भाव,

3. आधुनिक गद्यसाहित्य परम्परा का प्रवर्तन प्रथम उत्थान (संवत् 1925-1950),

4. गद्य साहित्य परम्परा का प्रवर्तनः प्रथम उत्थान,

5. गद्य साहित्य का प्रसार द्वितीय उत्थान (संवत् 1950-1975),

6. गद्य साहित्य का प्रसार,

7. गद्य साहित्य की वर्तमान गति तृतीय उत्थान (संवत् 1975 से)

काव्यखण्ड (संवत् 1900-1925),

काव्यखण्ड (संवत् 1925-1950),

काव्यखण्ड (संवत् 1950-1975),

काव्यखण्ड (संवत् 1975)।

11

अनीता देसाई की पुस्तकें

अनीता देसाई (जन्म: 24 जून 1937) एक प्रख्यात लेखिका हैं। अनिता देसाई विश्व में अंग्रेजी साहित्य का एक जाना पहचाना नाम है। उपन्यासकार किरण देसाई इनकी पुत्री हैं।

भारत सरकार ने भी इन्हें पद्मश्री और 2014 में पद्म भूषण अलंकरण से सम्मानित किया।

प्रारंभिक जीवन एवं शिक्षा

अनीता देसाई का जन्म 24 जून 1937 हुआ। उस समय उसका नाम अनीता मजूमदार था। मां जर्मनी की राजधानी बर्लिन शहर की रहने वाली थीं और पिता ढाका, बांग्लादेश के। । उन्होंने दिल्ली में 'क्वीन मैरी हायर सेकेंडरी स्कूल' में पढ़ाई किया और फिर सन 1957 में दिल्ली विश्वविद्यालय के मिरांडा कालेज से अंग्रेजी साहित्य में स्नातक हैं।

साहित्यिक जीवन

अनीता का पहला उपन्यास 'क्राई द पीकॉक' 1963 में प्रकाशित हुआ। वे पारिवारिक संबंध या मध्यम वर्गीय स्त्री के बारे में लिखती हैं। 1977 में उसका उपन्यास 'फायर ऑन द माउंटेन' के लिए उसने 'Winifred Holtby

Memorial' का पुरस्कार मिला। उसके बाद उन्होंने कई कहानियां लिखीं और उनसे बहुत पुरस्कारों के लिए नामित हो गया।

'फायर ऑन द माउंटेन' नामक उपन्यास को लिखकर उन्होंने विश्व में अपनी पहचान बनाई। गौरतलब है कि इन्हें तीन बार बुकर पुरस्कार की अंतिम सूची में चयनित किया गया।

अपने साहित्यक योगदान की बदौलत इन्हें पूरी दुनिया में लोकप्रियता मिली और दुनिया भर में इन्हें कई पुरस्कार मिले। भारत सरकार ने भी इन्हें पद्मश्री अलंकरण से सम्मानित किया। सन 1993 में इस्माइल मर्चेंट ने इनके उपन्यास 'इन कस्टडी' पर एक फिल्म भी बनाई है।

अब अनीता देसाई साहित्य का राजकीय समाज का एक सदस्य है। अमेरिका में रहती हैं और Massachusetts Institute of Technology में पढ़ाती है।

प्रमुख कृतियाँ

अनिता देसाई ने निम्नलिखित में से कौन-सी किताब लिखी है?
वेअर शैल वी गो दिस समर,
ए जनरल एंड हिज आर्मी,
एन आई टु चाइना,
बिटवीन होप एंड हिस्टरी,
कुली।

पुरस्कार व सम्मान

1978—Winifred Holtby Memorial Prize- Fire on the Mountain

1978—SahityaA kademiA ward (NationalA cademy of LettersA ward)- Fire on the Mountain

1980—Shortlisted, Booker Prize for Fiction–Clear Light of Day

1983—Guardian Children's Fiction Prize–The Village by the Sea: an Indian family story

1984—Shortlisted, Booker Prize for Fiction–In Custody (novel)

1993—Neil Gunn Prize

1999–Shortlisted, Booker Prize for Fiction: Fasting, Feasting
2000–A lberto Moravia Prize for Literature (Italy)
2003–Benson Medal of Royal Society of Literature
2007 – Sahitya A kademi Fellowship
2014 – पद्म भूषण।

डे का

क्लियर लाइट ऑफ डे 1980 में एक उपन्यास है, जो भारतीय उपन्यासकार और तीन बार बुकर पुरस्कार फाइनलिस्ट अनीता देसाई द्वारा प्रकाशित किया गया है। मुख्य रूप से पुरानी दिल्ली में सेट, कहानी एक विभाजन के बाद के भारतीय परिवार में तनाव का वर्णन करती है, पात्रों के साथ वयस्कों के रूप में शुरू होती है और उपन्यास के दौरान अपने जीवन में वापस चली जाती है। जबकि प्राथमिक विषय परिवार का महत्त्व है, अन्य प्रमुख विषयों में क्षमा का महत्त्व, बचपन की शक्ति और महिलाओं की स्थिति, विशेष रूप से आधुनिक भारत में माताओं और देखभालकर्ताओं के रूप में उनकी भूमिका शामिल है।

अंतर्वस्तु

कहानी की समीक्षा

उपन्यास इस क्रम में बच्चों के दृष्टिकोण से दास परिवार को कवर करने वाले चार खंडों में विभाजित है– वयस्कता, किशोरावस्था और प्रारंभिक वयस्कता, बचपन और अंतिम अध्याय में एक वयस्क परिप्रेक्ष्य में अंतिम वापसी।

कहानी दास परिवार पर है, जो वयस्कता के साथ अलग हो गए हैं। इसकी शुरुआत तारा से होती है, जिसका पति बकुल अमेरिका में भारत का राजदूत है, जो अपनी बहन बिमला (बिम) को बधाई देता है, जो परिवार के पुरानी दिल्ली के घर में रहती है, इतिहास पढ़ाती है और अपने ऑर्टिस्टिक भाई बाबा की देखभाल करती है। उनकी बातचीत अंततः राजा के पास आती है, उनके भाई जो हैदराबाद में रहते हैं। बिम, राजा की बेटी की शादी में नहीं जाना चाहती, तारा को एक पुराना पत्र दिखाती है जब राजा उसका मकान

मालिक बन गया था, जिसमें उसने अपने ससुर, पिछले जमींदार की मृत्यु के बाद उसका अनादर किया था। दोनों बहनों के पड़ोसी, मिश्रा के साथ यह खंड बंद हो गया।

उपन्यास के भाग दो में, सेटिंग भारत में विभाजन-युग में बदल जाती है, जब पात्रों को घर में किशोरावस्था होती है। राजा क्षय रोग से गंभीर रूप से बीमार हैं और उन्हें बिम के मंत्रालयों में छोड़ दिया गया है। चाची मीरा ('मीरा- मासी'), बच्चों की अक्सर अनुपस्थित माता-पिता की मृत्यु के बाद उनकी कथित देखभाल करने वाली, शराब की वजह से मर जाती है। इससे पहले, राजा का उर्दू के प्रति आकर्षण परिवार के मुस्लिम जमींदार हैदर अली का ध्यान आकर्षित करता है, जिसे राजा मूर्ति मानते हैं। टीबी से उबरने के बाद, राजा हैदर अली का हैदराबाद तक पीछा करता है। तारा बकुल से शादी के माध्यम से स्थिति से बच जाती है, बिम को अकेले बाबा के लिए प्रदान करने के लिए छोड़ देती है, विभाजन और गांधी की मौत के बीच में।

भाग तीन में बिम, राजा और तारा को पूर्व-विभाजन भारत में अपने भाई बाबा के जन्म की प्रतीक्षा में चित्रित किया गया है। आंटी मीरा, जो अपने पति की विधवा है और अपने ससुराल वालों द्वारा गलत व्यवहार करती है, को बाबा के साथ मदद करने के लिए लाया जाता है, जो आत्मकेंद्रित है और बच्चों की परवरिश करता है। राजा कविता से रोमांचित हैं। वह स्कूल में मुख्य लड़की बिम के साथ घनिष्ठ संबंध रखता है, हालांकि वे अक्सर तारा को बाहर कर देते हैं। तारा एक माँ बनना चाहती है, हालाँकि यह तथ्य राजा और बिम से उपहास लाता है, जो नायक बनना चाहते हैं।

अंतिम खंड आधुनिक भारत में लौटता है और तारा को राजा की बेटी की शादी पर बिम का सामना करने और राजा के साथ बिम के टूटे रिश्ते को दिखाता है। यह चरमोत्कर्ष जब बिम बाबा में विस्फोट होता है। उसके गुस्से को शांत करने के बाद, वह फैसला करती है कि पारिवारिक प्रेम अपूरणीय है और सभी गलतियों को कवर कर सकता है। तारा के जाने के बाद, वह अपने पड़ोसियों के लिए मिश्रा के पास एक कॉन्सर्ट के लिए जाती है, जहाँ उसे लगता है कि अटूट रिश्ते से वह छुआ है। वह तारा को राजा के साथ शादी से वापस आने के लिए कहती है और उसे माफ कर देती है।

पृष्ठभूमि

देसाई क्लीयर लाइट ऑफ डे को अपना सबसे आत्मकथात्मक कार्य मानती हैं, क्योंकि यह उनकी खुद की उम्र के आने के दौरान और उसी पड़ोस में स्थापित किया जाता है, जिसमें वह बड़ी हुई थी। वह खुद को अन्य भारतीय लेखकों के विपरीत 'सेटिंग पर एक प्रीमियम' रखने के रूप में वर्णित करती है।

ऐतिहासिक सेटिंग

विभाजन

पुस्तक पुरानी दिल्ली में विभाजन के आसपास कई बार सेट की गई है। राजा के मुस्लिम विश्वविद्यालय में जाने और उर्दू साहित्य का अध्ययन करने की अनुमति देने से पिता के इनकार के कारण मुसलमानों और हिंदुओं के बीच तनाव स्पष्ट रूप से दिखाया गया है, क्योंकि उन्होंने अपनी सुरक्षा के लिए डर पैदा किया है। पुस्तक में विभाजन के दंगों के साथ-साथ शरणार्थी शिविरों का भी उल्लेख है। इसमें अलिस की उड़ान, दास के मुस्लिम जमींदारों और पड़ोसियों को भी दर्शाया गया है।

ये तनाव अक्सर दंगों में बढ़ जाते हैं, लेकिन पुरानी दिल्ली में नहीं। भारत में हिंदुओं का दावा उपेक्षा, दुर्व्यवहार और अक्सर भारत में मुसलमानों या पाकिस्तान में हिंदुओं के प्रति हिंसा का कारण बना। भारत के राष्ट्र को एक हिंसक तरीके से तोड़ दिया गया, जिससे सीमा के दोनों ओर शरणार्थियों और पारस्परिक क्रोध और शत्रुता हो गई। विभाजन की संदेहास्पद प्रकृति भी सादी पुलिस की साक्ष्य है, जो महसूस करती थी कि राजा पाकिस्तानी जासूस हो सकता है।

दिल्ली

पुस्तक में, पुरानी दिल्ली को अक्सर पुराने, स्थिर या क्षय के रूप में जाना जाता है। पुरानी दिल्ली भीड़भाड़ वाली है और आमतौर पर नई दिल्ली के पक्ष में अनदेखी की जाती है। नई दिल्ली को जीवंत, आधुनिक और जीवंत माना जाता है। पुस्तक में नई दिल्ली वह जगह है जहाँ पात्र, विशेष रूप से बकुल, पुरानी दिल्ली के मनोरम प्रभावों से बचने या यहाँ तक कि बाहरी दुनिया से जुड़े

रहने के लिए जाते हैं। बिम नई दिल्ली में है जब वह गांधी की मृत्यु के बारे में सुनती है और राजा नई दिल्ली में एक किशोरी के रूप में मोड़ और मनोरंजन पाता है।

धार्मिक

पुस्तक में धार्मिक अनुभूतियां दो तरीकों से खुद को प्रकट करती हैं– विभाजन और राजा का एलिस के साथ संबंध। एक युवा वयस्क के रूप में उन्हें हैदर अली की रात की सभाओं में स्वीकृति मिली। हालांकि, मुस्लिम संस्कृति के साथ उनका आकर्षण, पहली बार तब प्रकट होता है जब वह हिंदी के बजाय उर्दू लेते हैं, एक ऐसी भाषा जिसे वे स्कूल में मानते हैं। आखिरकार वह खुद को मुस्लिम संस्कृति में एकीकृत करता है और हैदर अली की बेटी, बेनजीर से शादी करता है। हालाँकि यह रिश्ता विभाजन के दौरान और अली की हैदराबाद के लिए उड़ान के दौरान तनावपूर्ण है।

प्रतीकवाद और रूपांकन

शिक्षा

पुस्तक के दौरान शिक्षा का बहुत उल्लेख किया गया है। सिर्फ स्कूल ही नहीं, बल्कि अली की रात की सभाओं में भी। राजा और बिम दोनों कॉलेज जाते हैं, हालाँकि राजा की शिक्षा कहीं अधिक प्रमुख है। यहां तक कि हैदराबाद, जहां वह एलिस के पीछे चला गया, भारत में एक सीखने की जगह माना जाता है, यह उस्मानिया विश्वविद्यालय जैसे विश्वविद्यालयों का घर है, जो भारत में सबसे पुराना है। राजा संस्कृति शोधन और ज्ञान का प्रतीक है, जैसा कि कविता करती है।

संगीत

पुस्तक में संगीत की प्राथमिक अभिव्यक्तियाँ बाबा के ग्रामोफोन, डॉ. बिस्वास के संगीत संबंधी झुकाव और पुस्तक के अंत में मुल्क का गायन है। जीवन के अनुभवों से संबंधित संगीत का विचार मौजूद है। बाबा लगातार एक ही रिकॉर्ड के साथ एक ही मात्रा में अपना ग्रामोफोन बजाते हुए अपने विकास को रोकते हैं। संगीत के स्वाद में डॉ. विश्वास ने यूरोप में उनके द्वारा सीखे गए

व्यक्तिगत शोधन को दर्शाया है। मुल्क और गुरु बताते हैं कि जबकि जीवन हमारे अनुभवों को बदल देता है, हम अभी भी वही लोग हैं, जैसा कि उन्होंने एक ही शैली का उपयोग किया था लेकिन उनके प्रदर्शन को आकार देने वाले विभिन्न अनुभवों के साथ।

इसकी पुष्टि मुल्क ने अपनी बहनों को भारत के विभाजन की तरह अपने संगीतकारों को भेजने की शिकायत करते हुए की है। लेकिन संगीतकारों ने किताब के अंत में मुल्क का साथ देने के लिए वापसी की।

तारा ने अपनी बेटियों के संगीत का भी उल्लेख किया है, लेकिन उनका कहना है कि यह उनकी वृद्धि के साथ विकसित होता है।

खास दिलचस्पी यह है कि देसाई ने बाबा का संगीत कौन सा है, सभी रिकॉर्ड एक ही समय अवधि के हैं और उन्हें कभी कोई नया नहीं मिला। लेकिन इन गानों में से सबसे ज्यादा ' बिंग फ्रोज मी इन ', बिंग क्रॉसबी द्वारा प्रस्तुत किया गया लगता है। बिम के अपवाद के साथ पुस्तक में हर प्राथमिक चरित्र को बचने का कोई रास्ता मिल जाता है। हालांकि, स्वतंत्र होने के बारे में एक गीत, वह एक चरित्र है, जो सतह पर है, ऐसा करने की कोई इच्छा नहीं थी।

पृथक्करण

उपन्यास न केवल एक परिवार के अलगाव की कहानी कहता है, बल्कि एक राष्ट्र की भी है। भारत का विभाजन एक ठोस वास्तविकता है, जो राजा को छोड़ने, तारा से शादी करने, दास माता-पिता की मृत्यु के साथ-साथ चाची मीरा और दास परिवार के अलग होने के समांतर है। ये पारिवारिक अलगाव विभाजन के कारण होने वाली सामाजिक घटनाओं और भारत के लिए पाकिस्तान के अलगाव के बाद जारी सामाजिक उथल-पुथल के समानांतर हैं।

1947 की गर्मियों को उमस के रूप में वर्णित किया गया है– यह गर्मी है जब बिम अपनी बीमारी में राजा की देखभाल करता है, हैदर अली परिवार जातीय हिंसा की धमकी के तहत हैदराबाद के लिए दिल्ली छोड़ देता है और दास परिवार के पिता की मृत्यु हो जाती है। 1946 की पिछली गर्मियों के दौरान, उसी गर्मी में जिन्ना ने एक मुस्लिम मातृभूमि के लिए सार्वजनिक मांग की, दास परिवार की माँ की भी मृत्यु हो गई। 1946 में शुरू होने वाले परिवार में विघटन, बढ़ते विभाजन आंदोलन और हिंसा में वृद्धि को समानता देता है, जैसे कि अगस्त

1946 में कलकत्ता में हुए हमले, इस विभाजन के जवाब में दो राष्ट्र। 1947 की गर्मियों में, तारा ने बकुल से शादी कर ली और वे सीलोन (श्रीलंका) के लिए रवाना हो गए, शेष परिवार के सदस्यों की देखभाल के लिए बिम को अकेला छोड़ दिया–यह उसी वर्ष अगस्त में पाकिस्तान से भारत के आधिकारिक विभाजन के साथ मेल खाता है। निम्नलिखित गर्मियों में, जनवरी 1948 में गांधी की मृत्यु से पहले और भारतीय सीमाओं के पार शरणार्थियों की निरंतर उड़ान के बाद, चाची मीरा की मृत्यु हो गई और राजा ने हैदराबाद के लिए प्रस्थान किया, इस प्रकार बिम को और अलग कर दिया और उन लोगों की देखभाल करने के लिए छोड़ दिया, जो बाबा और खुद पीछे हैं। विशेष रूप से, भाग गए तीन लोगों में से प्रत्येक (तारा, राजा और चाची मीरा) ने विभाजन के समय आम भागने के तरीके का इस्तेमाल किया–तारा कहीं और के लिए देश छोड़कर भाग गया, राजा एक मुस्लिम केंद्र में भाग गया और चाची मीरा ने पृथ्वी छोड़ दी पूरी तरह से। राजा और चाची मीरा) ने विभाजन के समय आम भागने का एक तरीका इस्तेमाल किया–तारा कहीं और के लिए देश छोड़कर भाग गया, राजा एक मुस्लिम केंद्र में भाग गया और चाची मीरा पूरी तरह से पृथ्वी से चली गई। राजा और चाची मीरा) ने विभाजन काल के दौरान आम बचने का एक तरीका इस्तेमाल किया–तारा कहीं और के लिए देश छोड़कर भाग गया, राजा एक मुस्लिम केंद्र में भाग गया और चाची मीरा पूरी तरह से पृथ्वी छोड़ गई।

भाषा–हिन्दी

क्लियर लाइट ऑफ डे में प्रत्येक भाषा अलग-अलग चीजों का प्रतिनिधित्व करती है। उर्दू संस्कृति, परिष्कार और ज्ञान की भाषा है। हिंदी को हर दिन, सांसारिक और भोज माना जाता है। इसके अतिरिक्त कविता के बार-बार उदाहरणों में एक भाषा की सुंदरता पर जोर दिया गया है, जबकि यह उर्दू में नहीं है। राजा ने बताया कि एक उर्दू कवि एक दोहे में कैसे कर सकता है। उर्दू राजा और अली की संस्कृति और परिष्कार का प्रतीक है।

प्रकृति

अनीता देसाई की क्लियर लाइट ऑफ डे में प्रकृति सर्वव्यापी है। बच्चे भरवां इंटीरियर से बचने के लिए लगातार बगीचे में हैं। बाहर इकट्ठा होता है,

जैसे हैदर अली के घर और मिश्रा के घर में, तारा के अपराध को शारीरिक रूप से मधुमक्खियों द्वारा दर्शाया गया है, प्रकृति कपड़ों पर भी मौजूद है और कविता में जिसे बिम और राजा सुनाते हैं। यह महत्त्वपूर्ण है कि उपन्यास बगीचे के वर्णन से शुरू होता है ('दिन के उजाले से पहले कोल्स ने कॉल करना शुरू किया') और अनीता देसाई स्पष्ट रूप से सेटिंग पर जोर देती हैं। उपन्यास में प्रकृति मनोरंजन का एक स्रोत है, लेकिन अधिक महत्त्वपूर्ण रूप से, यह अक्सर पात्रों के रिश्तों और कार्यों के अनुरूप होता है।

उपन्यास में प्रकृति का पहला कार्य दास बच्चों के मनोरंजन और सीखने के स्रोत के रूप में है। इसका पहला उदाहरण है जब तारा, कहानी की शुरुआत में, सोचती है कि उसने एक मोती देखा है, इसके बजाय एक घोंघे को ढूंढती है और उसके साथ खेलती है, जैसा कि उसने तब किया जब वे बच्चे थे, प्रदर्शन करते हुए 'जीव पर बचपन के संस्कार'। कुछ पन्नों के बाद, तारा 'देहाती सुख' के बारे में कहती है कि वह बगीचे से निकलती है, अमरूद के पेड़ों को चलाने के लिए तरसती है और उसे काटने के लिए एक पूरी तलाश करती है। उद्यान गर्मी की तपिश में उनके ताजगी का स्रोत है और प्रकृति से भरा वातावरण तारा को उसके शहर के जीवन से व्यापार से छुटकारा दिलाता है। उद्यान 'अतिवृद्धि'। 'उपेक्षित' और 'अनियंत्रित' है, न कि सही और चौकोर, इसलिए उसे लगता है कि वह आराम कर सकती है और अपनी सगाई की किताब को भूल सकती है। यह तारा और बिम के बीच विपरीतता को भी दर्शाता है।

उपन्यास में प्रकृति का दूसरा कार्य पुस्तक में पात्रों के कार्यों या भावनाओं को दर्पण करना या पूरक करना है। कई पैराग्राफ नेचर के एक संदर्भ के साथ समाप्त होते हैं, जैसे 'कुत्ते को अचानक पिस्सू पर उछाल दिया' या 'एक कोयल ने खुद को दोपहर के भारी धार से बाहर निकाला और अस्थायी रूप से बुलाया, जैसे कि शाम के अस्तित्त्व में पूछताछ'। यह कहानी और प्राकृतिक दुनिया में जो कुछ हुआ है, उसके बीच एक समानांतर पेश करता है। बकुल द्वारा बिम को बताए जाने के तुरंत बाद कुत्ता पिस्सू पर थपकी देता है कि वह तारा से शादी करेगा और बिम के अलगाव का प्रतिनिधित्व कर सकता है। बिम के बाद खुद को और अपने परिवार के साथ अपने रिश्ते की समझ में आने के बाद कोएल कॉल को अस्थायी रूप से बुलाता है और आखिरकार शांति पर है। इसे उनके उत्थान पुनर्जन्म के रूप में देखा जा सकता है। एक और समानांतर हम पा सकते

हैं 1947 की गर्मी और राजनीतिक गर्मी। प्रकृति और मानव दुनिया के बीच सबसे महत्त्वपूर्ण सादृश्य उद्यान है। उपन्यास की शुरुआत में, कहा जाता है कि गुलाब छोटे और बीमार हो गए हैं, वे 'बीमारी से घिरे' हैं। उपन्यास के अंत में, धूल भरी आंधी होती है, जो चर्चा को उजागर करती है कि बिम और तारा राजा के बारे में हैं और जो बगीचे को 'धूल में डूबा हुआ' और सब कुछ 'प्राचीन और तुला' दिख रहा है। बचपन में इतना सुंदर और आनंददायक बगीचा अब बरसों पुराना हो गया है और जैसे-जैसे बच्चे आगे बढ़ रहे हैं, दास बच्चे भी बड़े हो गए हैं। उपन्यास में प्रकृति भी एक ही समय में सुंदर और खतरनाक है। उदाहरण के लिए, मच्छरों का उल्लेख शुरुआत में 'गायन और डंक मारने' के रूप में किया जाता है और जब माली बगीचे को पानी देते हैं, 'पानी वाली धरती और ताजे पौधों की हरी खुशबू को बाहर लाते हैं'। मैनाओं झगड़ा और तोते आते हैं, एक 'ल्यूरिड, चिल्लाना हरा'। फूलों को बिट्स को चीरते हुए। यह चेतावनी देता है और इसकी तुलना मानवीय रिश्तों, विशेषकर तारा, बिम और राजा के बीच के संबंधों से की जा सकती है।

अंत में, प्रकृति का उपयोग पात्रों के साथ तुलना के बिंदु के रूप में किया जाता है। एक लंबा रूपक है, जिसमें चाची मीरा और बच्चों की तुलना पौधों और पेड़ों से की जाती है, चाची मीरा 'पेड़ है, जो उनके जीवन के केंद्र में विकसित हुई' 'जल्द ही वे लंबे हो गए, जल्द ही वे मजबूत हो गए। उन्होंने खुद को चारों ओर लपेट लिया। उसे, पत्तियों और फूलों में उसे सूँघते हुए। वह हँसते हुए बोला, इस छोटे से कण्ठ की सुंदरता, जो उसके लिए पूरी दुनिया थी, पूरी दुनिया। जो वे बढ़े। वह पेड़ था, वह मिट्टी थी, वह धरती थी। 'यह रूपक तब भी जारी है जब बाबा की तुलना 'एक भूमिगत पौधे से की गई' से की जाती है, जो उनके और उनके भाई-बहनों के बीच के अंतर को दर्शाता है। यह उस छवि के विपरीत भी है, जो हमें दास माता-पिता द्वारा दी गई है। बगीचे में गुलाब पिता द्वारा लगाए गए थे, लेकिन न तो वह और न ही माली को पता था कि उनकी देखभाल कैसे की जाए, इसलिए हालांकि पहली बार में वे सुंदर थे। यह तथ्य कि तारा को इस बात की जानकारी नहीं है कि उसके पिता ने उनके बच्चों के जीवन में उनकी निरंतर अनुपस्थिति के साथ तुलना की थी। गुलाब की तरह, दास बच्चों की ठीक से देखभाल नहीं की गई थी, जिसके कारण उन्हें एक-दूसरे के लिए समझ में नहीं आया। गाय, गर्म और नरम, दास

माता-पिता को अपने बच्चों को आराम और पोषण की पेशकश करने की कोशिश करते हुए भी देखा जा सकता है, लेकिन दास माता-पिता और चाची मीरा की तरह गाय मर जाती है, बच्चों को अकेला छोड़ देती है, राजा और तारा बचने के लिए तरसते हैं और बिम कड़वा। इसके अतिरिक्त, चाची मीरा और तारा दोनों की तुलना पुस्तक में अलग-अलग क्षणों में पक्षियों से की जाती है। शराबबंदी से कमजोर चाची मीरा, 'लगभग मनुष्य होना बंद हो गया, इसके बजाय पक्षी बन गया और उसके पंखों के साथ बूढ़ा पक्षी फँस गया, उसकी हड्डियों को नीले रंग की त्वचा के नीचे से झटकेदार, बहुत प्राचीन, बहुत कुचल दिया गया। एक बच्चा कबूतर अपने घोंसले से बाहर आया, नीली-चमड़ी और भंगुर, पानी की टंकी के पीछे झूलता हुआ और रोता हुआ। उड़ने के लिए बहुत कमजोर एक पक्षी का विचार, चाची मीरा, विधवा और खारिज और तारा का सटीक प्रतिनिधित्व है, जो है। कोई भव्य महत्त्वाकांक्षाओं के साथ एक अंतर्मुखी। यह इंगित करता है कि तारा बकुल के बिना क्या हो सकता है और दो बहनों के बीच इसके विपरीत को जोड़ता है। एक शिशु कबूतर की तरह अपने घोंसले से बाहर आया, नीली चमड़ी और भंगुर, पानी की टंकी के पीछे रोना और रोना। उड़ने के लिए बहुत कमजोर पक्षी का विचार, चाची मीरा, विधवा और खारिज और तारा का सटीक प्रतिनिधित्व है। कोई भव्य महत्त्वाकांक्षाओं के साथ एक अंतर्मुखी है। यह इंगित करता है कि तारा बकुल के बिना क्या हो सकता है और दो बहनों के बीच इसके विपरीत को जोड़ता है। एक शिशु कबूतर की तरह अपने घोंसले से बाहर आया, नीली चमड़ी और भंगुर, पानी की टंकी के पीछे झूलता हुआ और रोता हुआ। उड़ने के लिए बहुत कमजोर पक्षी का विचार, चाची मीरा, विधवा और खारिज और तारा का सटीक प्रतिनिधित्व है। कोई भव्य महत्त्वाकांक्षाओं के साथ एक अंतर्मुखी है। यह इंगित करता है कि तारा बकुल के बिना क्या हो सकता है और दो बहनों के बीच इसके विपरीत को जोड़ता है।

अन्य रूपांकनों और प्रतीकवाद

पक्षी,
फूल (गुलाब),
द्वैत (लाइट एंड डार्क),
स्थिरता,

भारत में महिलाएं,
समय बीतने के,
विषय-वस्तु,
परिवार।

पुस्तक के अंत में बिम के टूटने के परिणामस्वरूप विचार की उल्लेखनीय स्पष्टता होती है। इस अंतर्दृष्टि में, वह निष्कर्ष निकालती है कि परिवार का बंधन इस दुनिया में किसी भी अन्य चीज से अधिक है, कि वह अपने दर्द को महसूस करती है और यह कि वह उनके बिना नहीं रह सकती।

माफी

राजा को माफ करने में असमर्थता दर्शाती है कि सबसे गहरी चोट निकटतम बंधनों से आती है। हालाँकि वह अपमान के लिए राजा को क्षमा करने और परिवार के महत्त्व को महसूस करने के लिए पुस्तक के अंत में इसे स्वयं ढूंढता है।

किशोरावस्था

पुस्तक का एक प्रमुख हिस्सा दास भाई-बहनों के पहले वर्षों को समर्पित है और उस अवधि ने उनके वर्तमान जीवन को कैसे आकार दिया। जबकि बिम और राजा क्योंकि सबसे बड़े भाई-बहन खुद के बारे में सुनिश्चित थे और प्रभावशाली थे, तारा और बाबा सबसे छोटी राशि के थे और बड़े हो गए थे, जो कि आश्रित थे - भले ही दूसरों पर कई तरह से। युवाओं को उनके घर में शायद ही कभी ध्यान दिया जाता था, फिर वे लगातार एक-दूसरे से स्नेह की खोज करते थे। किशोरावस्था में उनके अनुभव उनके भविष्य के स्वयं के लिए उत्तरदायी थे, जिसमें उनके एक-दूसरे के साथ तनावपूर्ण संबंध शामिल थे। राजा, जो स्वार्थी और गौरवान्वित था, वह एक अपमानजनक, आडम्बरपूर्ण व्यक्ति बन जाता है, जो हीरो बनने की कोशिश में रहता है, हैदर अली। तारा लगातार अपने पति एट अल की ओर झुकी हुई है। उसके लिए निर्णय लेने के लिए। बिम अपने घर में अपनी विधवा चाची के पतन का गवाह है और इसलिए शादी की सीमाएं और वह या वह जीवन भर की स्वतंत्रता को मापने का फैसला करती हैं।

पलायनवाद

दास भाई-बहन अपने आस-पास के परिवेश से लगातार भागने की कोशिश कर रहे हैं। माता-पिता से मिलने वाले ध्यान की कमी से यह जरूरत पूरी होती है। राजा अपने परिवार की इच्छाओं के खिलाफ इस्लामिक संस्कृति की ओर झुकाव करना शुरू कर देता है, तारा पहले मीरा मासी से ध्यान मांगता है और मिश्रा बहनों के साथ अधिक समय बिताना शुरू कर देता है, अंततः बकुल से शादी कर दिल्ली छोड़ देता है। लगातार पाश में एक समतुल्य संगीत बजाते हुए, बाबा एक अधिक अचेतन तरीके से, अपने आस-पास के परिवेश को छोड़कर भागने की कोशिश करता है। इन तीनों पात्रों को अपने बचपन की अप्रिय यादों को दबाने की आवश्यकता से प्रेरित किया जाता है। बिम एकमात्र ऐसा व्यक्ति प्रतीत होता है, जो अपने परिवार से भागना नहीं चाहता है। हालांकि, क्योंकि कहानी आगे बढ़ती है, कोई भी बिम के कवच में झंकार के माध्यम से देखता है। वह अपने भाई-बहनों से लगातार आहत रहती है और बचना चाहती है - इस बार, विडंबना यह है कि, अतीत में।

डे के क्लीयर लाइट में कविता

इस पुस्तक में, देसाई ने 12 अलग-अलग समय की कविताओं को उद्धृत किया है, इसके अलावा पुस्तक के अंत में इकबाल द्वारा एक गीत के एक भाग के रूप में एक पंक्ति का उपयोग किया गया है। उद्धृत कवियों में शामिल टीएस एलियट (वेस्ट लैंड और जले हुए नॉर्टन), अल्फ्रेड, लॉर्ड टेनीसन, (अब क्रिमसन पेटल, अब व्हाइट स्लीप्स) लॉर्ड बायरन (ग्रीस के द्वीप समूह) 27, सर मुहम्मद इकबाल ('तू ने किया ... एक मारक में ...' और 'तेरी दुनिया है दुनिया ... मेरी दुनिया में तेरा आधिपत्य है') अल्गर्नन चार्ल्स स्विबर्न (प्रोसेर्पाइन का बगीचा) और डीएच लॉरेंस (डेथ ऑफ शिप)। कविता प्रत्येक कविता में शामिल न केवल एक विशेष पहलू को व्यक्त करती है, बल्कि शिक्षा का महत्त्व भी बताती है।

पुरस्कार और स्वागत

1980 में मैन बुकर पुरस्कार के लिए क्लियर लाइट ऑफ डे को शॉर्टलिस्ट किया गया था, हालांकि यह जीत नहीं सका।

12

रबीन्द्रनाथ ठाकुर की पुस्तकें

रबीन्द्रनाथ ठाकुर या रबीन्द्रनाथ टैगोर विश्वविख्यात कवि, साहित्यकार, दार्शनिक और भारतीय साहित्य के नोबल पुरस्कार विजेता हैं। उन्हें गुरुदेव के नाम से भी जाना जाता है। बांग्ला साहित्य के माध्यम से भारतीय सांस्कृतिक चेतना में नयी जान फूँकने वाले युगदृष्टा थे। वे एशिया के प्रथम नोबेल पुरस्कार सम्मानित व्यक्ति हैं। वे एकमात्र कवि हैं, जिसकी दो रचनाएँ दो देशों का राष्ट्रगान बनीं - भारत का राष्ट्र-गान 'जन गण मन' और बाँग्लादेश का राष्ट्रीय गान 'आमार सोनार बाँग्ला' गुरुदेव की ही रचनाएँ हैं।

जीवन-परिचय

रबीन्द्रनाथ ठाकुर का जन्म देवेन्द्रनाथ टैगोर और शारदा देवी के सन्तान के रूप में 7 मई 1861 को कोलकाता के जोड़ासाँको ठाकुरबाड़ी में हुआ। उनकी आरम्भिक शिक्षा प्रतिष्ठित सेंट जेवियर स्कूल में हुई। उन्होंने बैरिस्टर बनने की इच्छा में 1878 में इंग्लैंड के ब्रिजटोन में पब्लिक स्कूल में नाम लिखाया फिर लन्दन विश्वविद्यालय में कानून का अध्ययन किया लेकिन 1880 में बिना डिग्री प्राप्त किए ही स्वदेश वापस लौट आए। सन् 1883 में मृणालिनी देवी के साथ उनका विवाह हुआ।

टैगोर की माता का निधन उनके बचपन में हो गया था और उनके पिता व्यापक रूप से यात्रा करने वाले व्यक्ति थे, अतः उनका लालन-पालन अधिकांशतः नौकरों द्वारा ही किया गया था। टैगोर परिवार बंगाल पुनर्जागरण

के समय अग्रणी था उन्होंने साहित्यिक पत्रिकाओं का प्रकाशन किया, बंगाली और पश्चिमी शास्त्रीय संगीत एवं रंगमंच और पटकथाएं वहां नियमित रूप से प्रदर्शित हुईं थीं। टैगोर के पिता ने कई पेशेवर ध्रुपद संगीतकारों को घर में रहने और बच्चों को भारतीय शास्त्रीय संगीत पढ़ाने के लिए आमंत्रित किया था। टैगोर के सबसे बड़े भाई द्विजेंद्रनाथ एक दार्शनिक और कवि थे एवं दूसरे भाई सत्येंद्रनाथ कुलीन और पूर्व में सभी यूरोपीय सिविल सेवा के लिए पहले भारतीय नियुक्त व्यक्ति थे। एक भाई ज्योतिरिंद्रनाथ, संगीतकार और नाटककार थे एवं इनकी बहिन स्वर्णकुमारी उपन्यासकार थीं। ज्योतिरिंद्रनाथ की पत्नी कादंबरी देवी सम्भवत: टैगोर से थोड़ी बड़ी थीं व उनकी प्रिय मित्र और शक्तिशाली प्रभाव वाली स्त्री थीं जिन्होंने 1884 में अचानक आत्महत्या कर ली। इस कारण टैगोर और इनका शेष परिवार कुछ समय तक काफी समस्याओं से घिरा रहा था।

इसके बाद टैगोर ने बड़े पैमाने पर विद्यालयी कक्षा की पढ़ाई से परहेज किया और मैरर या पास के बोलपुर और पनिहती में घूमने को प्राथमिकता दी और फिर परिवार के साथ कई जगहों का दौरा किया। उनके भाई हेमेंन्द्रनाथ ने उसे पढ़ाया और शारीरिक रूप से उसे वातानुकूलित किया – गंगा को तैरते हुए या पहाड़ियों के माध्यम से, जिमनास्टिक्स द्वारा और जूडो और कुश्ती अभ्यास करना उनके भाई ने सिखाया था। टैगोर ने ड्राइंग, शरीर विज्ञान, भूगोल और इतिहास, साहित्य, गणित, संस्कृत और अंग्रेजी को अपने सबसे पसंदीदा विषय का अध्ययन किया था। हालाँकि टैगोर ने औपचारिक शिक्षा से नाराजगी व्यक्त की – स्थानीय प्रेसीडेंसी कॉलेज में उनके विद्वानों से पीड़ित एक दिन का दिन था। कई सालों बाद उन्होंने कहा कि उचित शिक्षण चीजों की व्याख्या नहीं करता है, उनके अनुसार उचित शिक्षण, जिज्ञासा है।

ग्यारह वर्ष की उम्र में उनके उपनयन (आने वाला आजीवन) संस्कार के बाद, टैगोर और उनके पिता कई महीनों के लिए भारत का दौरा करने के लिए फरवरी 1873 में कलकत्ता छोड़कर अपने पिता के शांतिनिकेतन सम्पत्ति और अमृतसर से डेलाहौसी के हिमालयी पर्वतीय स्थल तक निकल गए थे। वहां टैगोर ने जीवनी, इतिहास, खगोल विज्ञान, आधुनिक विज्ञान और संस्कृत का अध्ययन किया था और कालिदास की शास्त्रीय कविताओं के बारे में भी पढ़ाई की थी। 1873 में अमृतसर में अपने एक महीने के प्रवास के दौरान, वह सुप्रभात गुरबानी

और नानक बनी से बहुत प्रभावित हुए थे, जिन्हें स्वर्ण मंदिर में गाया जाता था जिसके लिए दोनों पिता और पुत्र नियमित रूप से आगंतुक थे। उन्होंने इसके बारे में अपनी पुस्तक मेरी यादों में उल्लेख किया जो 1912 में प्रकाशित हुई थी।

गीतांजलि

गीतांजलि (बंगला उच्चारण - गीतांजोलि) रवीन्द्रनाथ ठाकुर की कविताओ का संग्रह है, जिनके लिए उन्हे सन् 1913 में नोबेल पुरस्कार मिला था। 'गीताँजलि' शब्द गीत और अन्जलि को मिला कर बना है, जिसका अर्थ है - गीतों का उपहार (भेंट)। यह अंग्रेजी में लिखी 103 कविताएँ हैं (ज्यादातर अनुवाद)।

यह अनुवाद इंग्लैड के दौरे पर शुरू किये गये थे जहां इन कविताओं को बहुत ही प्रशंसा से ग्रहण किया गया था। एक पतली किताब 1913 में प्रकाशित की गई थी जिसमें डब्ल्यू बी यीट्स (W- B- Yeats) ने बहुत ही उत्साह से प्राक्कथन (preface) लिखा था और उसी साल में रविंद्रनाथ टैगोर जी नें तीन पुस्तिकाओं का संग्रह लिखा जिसे नोबल पुरस्कार मिला। इस से रबिन्द्रनाथ टैगोर पहले ऐसे व्यक्ति थे जो यूरोपवासी न होते हुये भी नोबल पुरस्कार मिला। गीतांजलि पश्चिमीजगत में बहुत ही प्रसिद्ध हुई है और इनके बहुत से अनुवाद किये गये हैं।

इस रचना का मूल संस्करण बंगला में था जिसमें ज्यादातर भक्तिमय गाने थे।

बंगला गीतांजलि और अंग्रेजी गीतांजलि

'गीतांजलि' नामक अँग्रेजी की कविता-संग्रह बंगाली में लिखे गानों के संग्रह (जिसका नाम भी 'गीतांजलि' ही है) का अनुवाद नहीं है। गीतांजलि के सिलसिले में भी कई सवाल हैं, चर्चाएं हैं। जैसे अंग्रेजी गीतांजलि बिल्कुल वही नहीं है। जो बांग्ला है। विश्वभारती की बांग्ला गीतांजलि में साफ है कि अंग्रेजी गीतांजलि में इसकी मात्र 53 कविताएं ली गई हैं। अंग्रेजी में बांग्ला की सर्वाधिक चर्चित कविता 'ह्वेयर द माइंड इज विदाउट फीयर' है ही नहीं।

जबकि 103 में से 52 कवितायें उसी बंगाली संग्रह से ली गईं थीं, दूसरी अन्य स्थानों (काव्यों) से ली गईं हैं - इन के नाम हैं– Gitimallo (1914, 17), Noibeddo (1901, 15), Khea (1906, 11) and कुछ और काव्य। अनुवाद अकसर बहुत महत्त्वपूर्ण ठंग से बदलाव लाते हैं, कभी-कभी काफी हिस्से छोड़े हुये हैं और कई बार बीच में अन्य कवितायें भरी हैं।

गीतांजलि की विषय-वस्तु

वैसे रवीन्द्रनाथ सूफी रहस्यवाद और वैष्णव काव्य से प्रभावित थे। फिर भी संवेदना चित्रण में वे इन कवियों को अनुकृति नहीं लगते। जैसे मनुष्य के प्रति प्रेम अनजाने ही परमात्मा के प्रति प्रेम में परिवर्तित हो जाता है। वे नहीं मानते कि भगवान किसी आदम बीज की तरह है। उनके लिए प्रेम है प्रारंभ और परमात्मा है अंत !

सिर्फ इतना कहना नाकाफी है कि गीतांजलि के स्वर में सिर्फ रहस्यवाद है। इसमें मध्ययुगीन कवियों का निपटारा भी है। धारदार तरीके से उनके मूल्यबोधों के खिलाफ। हालांकि पूरी गीतांजलि का स्वर यह नहीं है। उसमें समर्पण की भावना प्रमुख विषयवस्तु है। यह रवीन्द्रनाथ का सम्पूर्ण जिज्ञासा से उपजी रहस्योन्मुखकृति है।